# धर्मायण

( धार्मिक, सांस्कृतिक एवं राष्ट्रीय चेतना की पत्रिका )

मूल्य : 45 रुपये

अंक 128

फाल्गुन,
2079 वि. सं.



## संवत्सर अंक

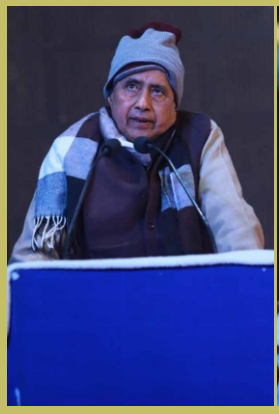

दिनांक 22 जनवरी, 2023 को महावीर मन्दिर पटना के द्वारा विद्यापति भवन पटना में आयोजित रामचरितमानस विद्वद्-गोष्ठी में व्याख्यान देते हुए वक्तागण

# धर्मायण

Title Code–BIHHIN00719

## आलेख –सूची


1. **भारतीय संवत्सरों का चक्रव्यूह** (सम्पादकीय) 3
2. **सृष्टि और प्रलय के वर्तुल में संवत्सर** - डा. मयंक मुरारी 6
3. **आयुर्वेद में आदित्यायन आधारित संवत्सर काल** - डा. विनोद कुमार जोशी 16
4. **राष्ट्रीय पंचांग जिसे हम भूल गये** - पं. गोविन्द झा 20
5. **संवत्सर का काल-गणना में योगदान** - श्री महेश प्रसाद पाठक 24
6. **विश्व इतिहास का प्रारम्भिक कालक्रम- जेम्स उशर की कपोल-कल्पना** - श्री गुंजन अग्रवाल 33
7. **भारतीय कालगणना एवं नवसंवत्सरोत्सव**- आचार्य चन्द्रकिशोर पाराशर 38
7. **नवसंवत्सर और प्रजापति ब्रह्मा** - श्री महेश शर्मा 'अनुराग' 42
8. **उत्कलीय परम्परा में मातृकाओं में संवत्सर का प्रयोग** - डा. ममता मिश्र 'दाश' 46
9. **भारतीय कैलेण्डर और पञ्चाङ्ग** -श्री अरुण कुमार उपाध्याय 50
10. **कर्मकाण्ड में संकल्प के सन्दर्भ में संवत्सर** - पं. मार्कण्डेय शारदेय 57
11. **जैनियोंके पद्मपुराण में रामायण-कथा** - आचार्य सीताराम चतुर्वेदी 62
12. **अवध क्षेत्र में 19वीं शती की विवाह-विधि** - संकलित 69
13. **पुस्तक समीक्षा**- सुन्दरकाण्ड पं. सदल मिश्र संम्पादित 72
14. **मन्दिर समाचार** (जनवरी, 2023ई.) 73
15. **व्रत-पर्व,** फाल्गुन, 2079 वि. सं. (6 फरवरी से 7 मार्च, 2023ई.) 79
16. **रामावत संगत से जुड़ें** **80**


पत्रिका में प्रकाशित विचार लेखक के हैं। इनसे सम्पादक की सहमति आवश्यक नहीं है। हम प्रबुद्ध रचनाकारों की अप्रकाशित, मौलिक एवं शोधपरक रचनाओं का स्वागत करते हैं। रचनाकारों से निवेदन है कि सन्दर्भ–संकेत अवश्य दें।

धार्मिक, सांस्कृतिक एवं राष्ट्रीय चेतना की पत्रिका

**अंक 128**
फाल्गुन, 2079 वि. सं.
6 फरवरी-7 मार्च, 2023ई.

**प्रधान सम्पादक**
**आचार्य किशोर कुणाल**

**सम्पादक**
**भवनाथ झा**

**पत्राचार :**
महावीर मन्दिर,
पटना रेलवे जंक्शन के सामने
पटना–800001, बिहार
फोन: 0612–2223798
मोबाइल: 9334468400

**E–mail:**
dharmayanhindi@gmail.com

**Website:**
www.mahavirmandirpatna.org/dharmayan/

**Whatsapp:**
9334468400

**मूल्य : 45 रुपये**

# पाठकीय प्रतिक्रिया

## (अंक संख्या 127, माघ, 2079 वि.सं.

संस्कृत, हिन्दी, अंग्रेजी, मैथिली, बंगला व अन्य कतिपय क्षेत्रीय भाषा-साहित्यके मर्मज्ञ मनीषी,प्राचीन पाण्डलिपियों के विशेषज्ञ, सम्पादन व प्रकाशन में अनुपम वैदग्ध्य से अभिमण्डित पं. भवनाथ झाजी की सूक्ष्मातिसूक्ष्म गवेषणात्मक अन्तर्दृष्टिसम्पन्न उपस्थापन-कलाके समक्ष एक बार पुनः श्रद्धावनत हूँ।मैं तो मानता हूँ कि 'धर्मायण' अब केवल धार्मिक व आध्यात्मिक पत्रिका नहीं रह गई है, इसने 'ग्रन्थ' का स्वरूप ले लिया है। मेरी दृष्टि में विगत कई वर्षों से धर्म, दर्शन व अध्यात्म पर केन्द्रित कोई भी पत्रिका ऐसी गुणवत्ता व पठनीयता को अपने कलेवर में समेटती नज़र नहीं आती।

'वायु' के शास्त्रीय व वैज्ञानिक-दोनों पक्षों पर जिस गम्भीरता से आलेख लिखे गए हैं,यह अपने-आप में विरल है। राष्ट्रिय व अन्ताराष्ट्रिय स्तर पर ख्यातिलब्ध विद्वानों व नीर-क्षीर विवेकी समीक्षकों द्वारा उपस्थापित तथ्यों का गम्भीर अवगाहन न केवल क्षणिक सन्तुष्टि प्रदान करता है, अपितु विषयविशेष से सम्बद्ध उच्चस्तरीय अनुसन्धित्सुओं के लिए सार्वकालिक महत्त्व रखते हुए उनकी गवेषणात्मक दृष्टिको कतिपय अभिनव आयामों से अभिमण्डित भी करता है। परमादरणीय सुदर्शनजी, श्रद्धेय मार्कण्डेयजी प्रभृति सुप्रतिष्ठित सारस्वत चिन्तकों व लेखकों का तो कहना ही क्या, कतिपय नवीन शोध-प्रज्ञों की रचनात्मक पुष्पोंकी सुरभि से सुवासित 'धर्मायण 'का यह उद्यान कई मायनों में अतिविशिष्ट बन पड़ा है। पूर्व के विशेषाङ्कों की तरह इस अङ्क की संग्रहणीयता भी स्वतःसिद्ध है।एक बार पुनः सम्पादक पं. भवनाथ झाजी की उत्तरोत्तर बढ़ती हुई सूक्ष्मेक्षिका व अनुसन्धानात्मक वैचक्षण्य को कोटि-कोटि नमन।असीम श्रद्धा व अशेष शुभकामनाओंके साथ,

*डॉ. मित्रनाथ झा,*
*शास्त्रचूड़ामणि,*
*मिथिला संस्कृत शोध संस्थान, दरभङ्गा।*

धर्मायण पत्रिका का 127वाँ अंक वायु-तत्त्व-विशेषांक के समस्त आलेख -विद्वान् -गवेषकों ने अपने -अपने आलेख में वायु को प्राण स्वरूप देवता के रूप में सिद्ध किया है। भगवान् विष्णु के अंश रूप में वायुदेव के हनुमान आदि विभिन्न अवतारों को प्रमाणित कर सिद्ध किया है कि भगवान् विष्णु की

आपको यह अंक कैसा लगा? इसकी सूचना हमें दें। पाठकीय प्रतिक्रियाएँ आमन्त्रित हैं। इसे हमारे ईमेल dharmayanhindi@gmail.com पर अथवा ह्वाट्सएप सं.–+91 9334468400 पर भेज सकते हैं।

धर्मायण का अगला अंक **रामचरितमानस विशेषांक** के रूप में प्रस्तावित है। यह सर्वमान्य तथ्य है कि रामचरितमानस अपने रचनाकाल से रामकथा का आश्रय लेकर उसे जन-जन तक फैलाने का कार्य किया है। साथ ही, धर्म तथा भक्ति के स्तर पर सम्पूर्ण समाज को एकसूत्र में जोड़ने का कार्य किया है। सामाजिक सद्भाव की दृष्टि से तुलसीदास की रचनाओं के उदात्त पक्ष पर एकाग्र होकर पुनः विवेचन करने की आवश्यकता है।

विद्वानों से निवेदन है कि इन विषयों पर अपना मत आलेख के रूप में कर अनुगृहीत करेंगे।

# भारतीय संवत्सरों का चक्रव्यूह

सम्पादकीय

—भवनाथ झा

हमारा भारतवर्ष विविधताओं से भरा विशाल देश है। वस्तुतः यह विभिन्न संस्कृतियों तथा परम्पराओं से भरा हुआ एक विशाल गणराज्य है। यहाँ हम संस्कृति, इतिहास, धार्मिक परम्पराओं में ऊपरी सतह पर विविधता देखते हैं, पर अंदर से यह एक सूत्र में निबद्ध आर्यावर्त और दक्षिणापथ का सम्मिलित रूप भारत है। यहाँ परम्परा में वर्ष-गणना के अनेक रूप मिलते हैं। प्रख्यात राजा के नाम पर वर्ष की गणना की गयी, ज्योतिषीय गणना के लिए ज्योतिर्विदों के द्वारा संवत्सर चलाया गया। कुछ संवत्सर सीमित क्षेत्र में सीमित काल के लिए चले औऱ अतीत के गर्भ में समा गये। कुछ ऐसी वर्ष गणना है जो आज तक व्यापक क्षेत्र में प्रचलित है। इस प्रकार हम राष्ट्रीय तथा क्षेत्रीय स्तर पर कलि संवत्, शक संवत्, विक्रम संवत्, कलिंग संवत्, भास्कर संवत्, लक्ष्मण संवत्, काश्मीर संवत्, आदि सैकड़ो प्रकार की गणनाएँ देखते हैं। भारत के विभिन्न शिलालेखों में, पाण्डुलिपियों में इन संवत्सरों का जब हमें प्रयोग मिलता है तो कभी-कभी संवत्सर का नाम न होने के कारण उलटा-पुलटा समझ बैठते हैं और काल निर्धारण में भ्रान्ति हो जाती है।

मध्यकाल में इस्लामी कैलेंडर का भी व्यवहार हुआ है। हिजरी वर्ष के अनेक फारसी अभिलेख मिलते हैं। इस हिजरी वर्ष के ही आसपास आसाम का भास्कराब्द, बंगाल का बंगाब्द तथा उडीसा का कलिंगाब्द, मिथिला का फसली साल चलता रहा है। पूर्वोत्तर भारत की इस भारतीय-मूलक वर्ष गणना को इस्लामी कैंलेंडर मानने की भी भ्रान्ति हो जाती है, जिसके कारण गणनाओं में अन्तर आ जाता है। इसके कारण पूर्वोत्तर भारत में प्रचलित लक्ष्मणाब्द की गणना में भी 16वीं शती के बाद काफी त्रुटियाँ आ गयी हैं; 10 वर्ष का अन्तर आ जाता है। यही कारण है कि लक्ष्मणाब्द से फसली वर्ष की गणना के लिए फार्मूला निकालना पड़ा है-

इस तरह की गणना का प्रयोजन चूँकि मिथिला क्षेत्र में अक्सर पड़ता रहता है इसलिए एक फार्मूला ही बना दिया गया-

**सन तर शून्य-बाण-षट् (650) देव। मीजा दए सम्वत् बुझिलेव।**
**बाण-नैनहर-इन्दु (135) समेता। सम्वत् कमी दिए हो जएता।**
**सो शाके जानहु दृढ़मान। गुरु ज्ञानी जन भाषा भान॥**

जो सन जहाँ रहे सो देखहु। शर-शशि-बाण (515) हीन कय लेखहु।

बाकी रहे लसं परमान। गुरु ज्ञानीजन भाषा मान॥[1]

अर्थात् सन् के नीचे 650 रखकर जोड़ने पर संवत् समझें। इस संवत् में से 135 घटाने पर जो घटावफल आवे उसे शक वर्ष जानें। पुनः सन् में से 515 घटाने पर जो घटावफल आबे उसे लक्ष्मण संवत् जानें। इसप्रकार, हम पहले पहले सन् अर्थात् बंगला साल की गणना करेंगे और उससे लक्ष्मण संवत् की गणना करने पर कोई गलती नहीं रह जाती है।

नेपाल में एक नेवारी संवत् प्रचलित है। यह 20 अक्टूबर, 879 ई. से आरम्भ हुआ है। अतः वर्तमान प्रचलित ग्रेगोरी कैलेंडर में से 879 घटा देने पर वर्तमान नेपाल संवत् निकल जाता है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि भारत में अनेक वर्ष गणनाएँ प्रचलित हैं। इनमें से कुछ चन्द्रमा की गति के आधार पर हैं तो कुछ सूर्य की गति के आधार पर। चन्द्र और सूर्य की गति में अन्तर होने के कारण प्रत्येक 23 महीने पर चान्द्रमास एक मास पीछे रह जाता है, जिसका तालमेल सौर वर्ष के साथ मिलाने के लिए एक मास का मलमास मान लिया जाता है।

**गते वर्षद्वये सार्द्धे पञ्चपक्षे दिनद्वये।**

**दिवसस्याऽष्टमे भागे पतत्येकोऽधिमासकः॥**[2]

अर्थात् आधा के साथ दो वर्ष यानी ढाई वर्ष के बीत जाने पर इसके बाद पाँच पक्ष यानी ढाइ मास बीतने के बाद फिर दो दिन बीतने के बाद दिन के आठवें भाग में एक अधिमास पड़ जाता है। इस प्रकार 32 महीना 18 दिन, सात मुहूर्त बीचने पर एक मास का मलमास होता है।

इस्लामी कैलेंडर में इस प्रकार की कोई आवश्यकता ही नहीं पड़ती है, क्योंकि वहाँ सूर्य आधारित पंचांग नहीं है। वर्तमान प्रचलित इस्वी सन् भी सूर्य आधारित है, यही कारण है कि हम मकर संक्रान्ति एवं मेष संक्रान्ति लगभग नियत तिथे पर देखते हैं। इसमें 72 वर्ष पर एक दिन का अन्तर आ जाता है।

भारत में बार्हस्पत्य वर्ष भी प्रचलित है। धार्मिक कार्यों में संकल्प में इसका भी नामोल्लेख होता है। सिद्धान्त के रूप में यह मेष संक्रान्ति के अगले दिन से आरम्भ होता है।

इतना ही नहीं हम यह भी देखते हैं कि भारत में अनेक नाम के शक वर्ष प्रचलित हैं। एक शालिवाहन शक 78 ई. से आरम्भ है। यूरोपीयन विद्वानों की मान्यता के अनुसार शक आक्रमण का यह काल माना जाता है। साथ ही कुषाण राजा विम कदफिस के राज्यारोहण साल से इसे जोड़ा गया है, किन्तु आधुनिक भारतीय विद्वानों ने यह मान्यता स्थापित की है कि 78 ई. से जो शक संवत् आरम्भ हो रहा है, वह वस्तुतः ज्योतिषीय गणना के लिए ज्योतिषियों के द्वारा निर्धारित एक एसा वर्ष है, जिसकी मेष संक्रान्ति के दिन सूर्य बृहस्पति एवं चन्द्रमा तीनों की युति हुई थी, अतः गणना के लिए इसे एक आरम्भ बिन्दु मात्र मानकर पंचांग निर्माण के लिए आगे कार्य किये गये। इस 78 ई. का कोई राजनीतिक ऐतिहासिक महत्त्व नहीं है।

1 जायसवाल, के.पी. (1934), डेटिंग ऑफ लक्ष्मणसेन एरा, जॉर्नल ऑफ बिहार एण्ड उड़ीसा रिसर्च सोसायटी, अंक 20, भाग 1, पटना, पृ, 22.

2 स्कन्दपुराण : खण्डः 2 (वैष्णवखण्डः), अयोध्यामाहात्म्यम्, अध्यायः 03,श्लोक 56.

भारतीय आधुनिक खगोल-पुराविदों (Archaeo-astronomists) के अनुसार इन अनेक प्रकार के शक संवत्सरों को ठीक ढ़ंग से नहीं समझने के कारण यूरोपीय विद्वानों ने भारतीय कालक्रम की गणना में कापी घालमेल किया है, जिसके कारण इतिहास की अनेक तिथियाँ गलत हुई हैं, अनेक शिलालेख फर्जी घोषित कर दिये गये हैं। आवश्यकता है कि हम पुराणों की वंशावली, उनमें दी गयी तिथियाँ, सूर्यग्रहण, चन्द्रग्रहण अथवा अन्य खगोलीय विवरणों के आधार पर नये सिरे से भारतीय कालानुक्रम को व्यवस्थित करें। इस दिशा में डा. वेद वीर आर्य, श्री अरुण कुमार उपाध्याय आदि विद्वानों के नाम अग्रगण्य हैं।

यह तो निश्चित है कि इतने प्राचीन भारतीय इतिहास को केवल ढ़ाइ हजार वर्षों में सिमटा नहीं जा सकता है। यहाँ महाभारत का युद्ध हुआ, द्वारका डूबी, राम ने लंका जाते समय समुद्र पर सेतु-निर्माण किया, जो आज से 1000 वर्ष पूर्व तक सुरक्षित था, पुनः समुद्र में जलस्तर बढ़ने के कारण डूब गया है। द्वारका भी जलस्तर बढ़ने के कारण डूब गयी है। समुद्रतटीय क्षेत्र कहीं डूब गया है तो कहीं समुद्र का तट ही दूर चला गया है। जैसे बिराह में बाँका जिले में मंदार पर्वत के पास कभी समुद्र रहा होगा आज वहाँ से दूर चला गया है। इन प्राकृतिक परिवर्तनों का उल्लेख पुराण-साहित्य करते हैं। आज आवश्यकता है कि हम उन उल्लेखों को पुराकथाएँ न कहकर Astro-archaeology के नये शोधों के आलोक में गहन मनन करें तथा कालानुक्रम को ठीक से देखें।

पाण्डुलिपि तथा शिलालेखों के अध्येताओं के लिए भारत के विभिन्न संवत्सरों का ज्ञान अनिवार्य है तभी वे काल-निर्धारण में सक्षम हो सकेंगे। उन्हें परस्पर वर्ष बदलने की प्रणाली का ज्ञान होना आवश्यक है। अतः इस प्रकार के एक अंक की आवश्यकता थी ताकि लोग संवत्सर को समझ सकें।

नव संवत्सर का उत्सव मनाना चाहिए। वर्तमान में अतरराष्ट्रीय स्तर पर ग्रेगोरियन कैलेंडर इस्वी सन् प्रचलित है। इसी के मास, दिनांक तथा दिन का प्रयोग होता है। आज वास्तव में यह अन्तरराष्ट्रीय वर्ष गणना बन गयी है, इसके पहले दिन 1 जनवरी को भी हम नववर्ष मनाते हैं। पुनः चैत्र शुक्ल प्रतिपदा के दिन से भी मनाते हैं। परम्परानुसार मेष की संक्रान्ति यानी लगभग 15 अप्रैल से भी मनाते हैं। हम समझते हैं कि यह हमारी विविधता है, जिसे हमें सहज भाव से स्वीकार करना चाहिए।

# लेखकों से निवेदन

**धर्मायण का अगला चैत्र मास का अंक "रामचरितमानस का सामाजिक पक्ष" विषय पर प्रस्तावित है। यह सुखद सत्य है कि रामचरितमानस की रचना अवधी में तुलसीदास ने इसलिए की ताकि वह समाज के सभी वर्गों के लिए उपयोगी हो। उन्होंने इस एक ग्रन्थ में नाना पुराण, निगम, आगम, काव्य आदि से चारुता और रस लेकर इसकी रचना की। रामचरितमानस में भारत की वह परम्परा प्रथित है, जो वेद से लेकर अद्यतन प्रवहमान है। इस पर वर्तमान में क्या विवाद उठाये जा रहे हैं, उन पर ध्यान दिए विना इसके सामाजिक सरोकार विषय पर आलेख आमन्त्रित हैं, ताकि हम तुलसीदासजी के उदात्त विचारों को पाठकों तक पहुँचा सकें।**

# सृष्टि और प्रलय के वर्तुल में संवत्सर

**डा. मयंक मुरारी**
वरीय उप महाप्रबंधक, उषा मार्टिन कंपनी। विगत 25 सालों में 400 से अधिक आलेख और 12 पुस्तकें प्रकाशित।
पता : तेलपा निवास, नजदीक एच/116 ए0 जी0 क्वार्टर के पास, हिनू कॉलोनी, पोस्ट- डोरंडा, रांची, झारखंड- 834002

**काल क्या है? भारतीय वैशेषिक दर्शन के अनुसार वह पृथ्वी, जल, तेज, वायु, आकाश, काल. दिक् आत्मा तथा मन इन नौ द्रव्यों में से एक द्रव्य है। द्रव्य है तो इसके गुण भी हैं। काल का गुण क्या है? इसपर दर्शन शास्त्र में पर्याप्त मतभेद हैं। यहाँ विवेचनीय हो जाता है कि काल के बारे में आधुनिक वैज्ञानिक क्या कहते हैं? काल भी एक गति है। यह एक अवधारणा है। भारतीय परम्परा में संवत्सर शब्द में 'सरति' क्रिया है जिसका अर्थ है- सरकना, जाना- इसी से संसार शब्द भी बना है। वही एक कालचक्र है, जो निरन्तर गतिमान है। इस चक्र में ज्यों ज्यों हम परिधि से केन्द्र की ओर बढ़ते जायेंगे हमारा काल उतना ही सूक्ष्म होता जाएगा दिशाएँ भी संकुचित होती जाएगी और उसके केन्द्र बिन्दु यानी मोक्ष की अवस्था में काल और दिशा दोनों स्थिर हो जायेंगे, यही ब्रह्मलीन होने की अवस्था होगी। भारतीय परम्परा में ईश्वरत्व यही अवस्था है- दिशा और काल से रहित परमतत्त्व।**

**आइए यहाँ हम भारतीय और पाश्चात्त्य मत से काल का दर्शन समझें**

समय के बहते प्रवाह में कोई स्थिर बिन्दु नहीं होता है। इसलिए हम इस प्रवाह की गणना करते हैं, ताकि समाज और मनुष्य की गतिशीलता और क्रियाशीलता के लिए स्थिर भूमि, ज्ञानशीलता का आधार और उर्वर विचारों को ढूँढ़ सके। इस अन्वेषण के रूप और कर्म का नाम देश और काल है। इसे विराट् और शाश्वत भी कहते हैं। हम एकसाथ समय की सीढ़ी से दिवस से लेकर कल्प तक की यात्रा करते हैं, दूसरी ओर क्षेत्र के पैमाने पर सृष्टि की अपरिभाषित सीमा तक अपने दर्शन से पहुँच जाते हैं।

इस कारण भारतीय चिन्तन में काल-गणना न केवल महीना, संवत्सर, मन्वन्तर, कल्प से होते हुए सृष्टि संवत् तक पहुँच जाती है, बल्कि हम इसे दैनन्दिन के संकल्प में **श्रीश्वेतवाराहकल्पे...** के माध्यम से सदैव स्मरण भी रखते हैं कि काल के वर्तुल में सृष्टि और प्रलय के बीच अनन्त यात्रा जारी है।

भारतीय चिन्तन में कहा गया कि **"कलयति सर्वाणि भूतानि"** अर्थात् काल सम्पूर्ण ब्रह्मांड और सृष्टि को खा जाता है। इस काल का सूक्ष्मतम अंश परमाणु है और महत्तम अंश ब्रह्मा। जैसे आधुनिक काल के अनुसार सूक्ष्मतम अंश सेकेंड है और महत्तम अंश शताब्दी। इस काल की गणना में समय ही संवत्सर रूपी शब्द का जनक है। जीवन और जगत् की परम्परा का रचनाकार है। यह समय ही खुद शाश्वत समय का रहस्य जानता है। समय की एक यात्रा संवत्सर से नीचे

की ओर मास, दिवस, प्रहर, घंटा मिनट, सेकेंड और उससे भी मुर्हूत, कला, काष्ठा और निमेष तक जाता है। दूसरी ओर यह मन्वन्तर, कल्प होते हुए सृष्टि के आरम्भ तक चला जाता है।

अस्तित्व सदैव और सर्वदा है। सृष्टि के जन्म के पूर्व भी और प्रलय के बाद तक। फिर यह काल गणना केवल सृष्टि और प्रलय के बीच क्यों? जिस कालावधि का वर्णन ऋग्वेद के नासदीय सूक्त में है, उसकी काल गणना कैसे होगी, जहाँ काल ही नहीं है? तब क्या समय नहीं था? चूँकि गति दिखायी देती है, काल नहीं दिखता है, अतएव गति के साथ ही समय की गणना मानी जाती है। इस गति को ही काल का परिणाम माना जाता है। इसलिए भारतीय चिन्तन में काल को गतिशीलता का पर्याय माना गया।

प्रकृति का अणु और अणु का परमाणु गतिशील है। इस गतिशीलता के साथ समय का बोध है। इस काल के कारण ऋतुओं का परिवर्तन है, और उस ऋतु परिवर्तन का हमारे ऊपर प्रभाव है। वेद के ऋषि भृगु का कथन है कि काल में ही गति है, उसमें ही मन है, काल में प्राण है और काल में नाम है। अगर काल नहीं है तो गति नहीं है। गति नहीं तो संवत्सर या दिवस कहाँ होगा! गति सभी लोकों में है। इस गति में भी अन्तर है। इसलिए वर्ष की जो अवधारणा पृथ्वी पर है, वहीं अवधारणा चन्द्र या शनि ग्रह के लिए सही नहीं होगी। दिन और रात का रूप भी हर जगह भिन्न है। प्रकाश भी दिवस का निर्धारक तत्त्व नहीं है। पृथ्वी पर ही प्रकाश की अवधि भिन्न है। अतएव वर्ष, संवत्सर और कल्प की मूल अवधारणा गति और क्रिया पर आधारित है।

पृथ्वी गतिशील है। इसी गतिशीलता के आधार भारत में संवत्सर का चिन्तन है। भारतीय चिन्तन में दिवस है, तो ऋतु है। चन्द्र वर्ष है तो सौर संवत्सर है। पृथ्वी की गति पर काल गणना है तो चन्द्र भी गणना का आधार है। कालगणना में क्रमश प्रहर, दिन-रात, पक्ष, अयन, संवत्सर, दिव्यवर्ष, मन्वन्तर, युग, कल्प और ब्रह्मा की गणना की जाती है। उसी प्रकार ग्रहों और नक्षत्रों की गति का भी अपना प्रभाव और अध्ययन है। यह प्रकृति और पृथ्वी की व्यवस्था को प्रभावित करते हैं। पृथ्वी से लेकर सूर्य और सूर्य से लेकर आकाशगंगा तक। सबकी अपनी गति है, इसलिए हरेक स्थान का समय और संवत्सर भी भिन्न-भिन्न है। काल सर्वत्र एक-सा नहीं है। सूर्य की आकाशगंगा के अभिमुख गतिमान होने के कारण मन्वन्तर है, तो आकाशगंगा की नीहारिकाओं के चक्कर के आधार पर कल्प है। पृथ्वी के दिन-रात से ब्रह्म के दिन-रात की वर्तुल गति में अनन्त संवत्सर विलीन हो गये। कई संवत्सर स्मरण हैं। कलियुग में ही छह व्यक्तियों ने संवत् चलाए। यथा -युधिष्ठिर, विक्रम, शालिवाहन, विजयाभिनन्दन, नागार्जुन, कल्की। इससे पहले सप्तऋषियों ने संवत् चलाए थे।

चक्रीय अवधारणा के अन्तर्गत ही भारतीयों ने काल को कल्प, मन्वन्तर, युग (सतयुग, त्रेता, द्वापर और कलियुग) आदि में विभाजित किया जिनका अविर्भाव बार-बार होता है और वे जाकर पुनः लौटते हैं। चक्रीय का अर्थ सिर्फ इतना ही है कि सूर्य उदय और अस्त होता है और फिर से वह उदय होता है, लेकिन इसका यह मतलब नहीं कि समय भी चक्रीय है; सिर्फ घटनाक्रम चक्रीय है। इसकी पुनरावृत्ति होती रहती है, लेकिन पुनरावृत्ति में भी वह पहले जैसी नहीं होती है। भारतीय चिन्तन में काल ने सबसे पहले प्रजापति का सर्जन किया और उसने ही सृष्टि का सर्जन किया। सूर्यदेव इस काल यानी गति की प्रेरणा से तपते हैं। अतएव समस्त प्राणी कालाश्रित है। नेत्र भी काल के कारण ही देख पाता है। इसलिए कहा गया कि **काले तपः** यानी काल में ही तप है। यह तप की गतिशीलता ही समूची प्रकृति के आनन्द का कारण है। अनुकूल गति से आनंद प्राप्त होता है। भारतीय चिन्तन में समय

की व्यापक धारणा है जो पल के हजारवें हिस्से (एक त्रसरेणु का आकार छह ब्रह्मांडीय अणु के बराबर होता है।) से भी कम से शुरू होता है और ब्रह्मा के 100 वर्ष पर भी समाप्त नहीं होता है। समय में जीवन और मृत्यु की घटनाओं का चक्र चलता रहा है। इसमें दोहराव होता है, कुछ नई घटनाएँ होती है।

## अव्यक्त काल की अवस्था

ब्रह्मांड अपने शुरू में कैसा था? अव्यक्त ब्रह्म जब एकत्व की अवस्था में था, तब समय का अस्तित्व ही नहीं था। वह ऐसा बिन्दु है जहाँ संपूर्ण ब्रह्मांड अपनी संपूर्ण ऊर्जा एवं पदार्थ के साथ संकुचित होकर एक बिंदु में समा गया था और जिसका घनत्व अपरिमित था। यह अव्यक्त ब्रह्म की स्थिति के बारे में आधुनिक विज्ञान बिग-बैंग के ठीक पहले की अवस्था का बोध कराता है। आदि शंकराचार्य ने उसकी व्याख्या करते हुए कहा कि नारायण अव्यक्त से परे हैं, अव्यक्त से यह ब्रह्मांड उत्पन्न हुआ हैं, यह सात द्वीपोंवाली पृथ्वी सहित सभी लोक इस ब्रह्मांड के अन्तर्गत है।

चीनी दार्शनिक अपनी पुस्तक 'ताओ तेहचिंग' में सृष्टि के जन्म पर कहते है कि अन्धकार से प्रकाश उत्पन्न हुआ। अव्यक्त से व्यक्त या असत् से सत् हो या अन्धकार से प्रकाश की स्थिति के पूर्व सारी शक्तियाँ एक बिन्दु में स्थित होती है। इस एकत्व की अवस्था में तब बदलाव आता है, जब तपस् (यानी *बॉय प्रोसेस ऑफ हीट*) से हिरण्यगर्भ रूपी ब्रह्म अपने को बहुरूपों में व्यक्त किया। (ऐतरेय उपनिषद् 1.1.4)। एकत्व की स्थिति में सृष्टि सुषुप्तावस्था में थी, जैसे बीज के अंदर पौधा, शाखाएँ, फूल, फल और पत्तियों का समूचा जीवन अवस्थित होता है। इस एकत्व की गर्भावस्था को ऋग्वेद में 'हिरण्यगर्भ' तो शतपथ ब्राह्मण में 'अविनाशी ज्योति' कहा गया है। इस हिरण्यगर्भ में ही पृथ्वी, आकाश, तारें, सूर्य, आकाशगंगाएँ, नीहारिकाएँ आदि स्थित हैं। इस अवस्था के बारे में ऋग्वेद के दस सूक्तों में कहा गया कि हम किस देवता की उपासना करें। सृष्टि के पूर्व जब कोई है ही नहीं, तो किस देवता की पूजा की जाए। (10.121.1)।

ऋग्वेद के नासदीय सूक्त की ऋचाओं में सृष्टि पूर्व की स्थिति का वर्णन है। इसमें कहा गया है कि तब न सत् था, न असत् था। न आकाश था, न पृथ्वी। इसको आवृत करनेवाला लोक भी कहाँ था? समय भी कहाँ थी? तब न मृत्यु थी, और न ही कहीं अमरत्व की अवधारणा थीं। न दिवस था, न ही रात्रि। मात्र वह एक था और वायुहीन स्थिति में अपनी क्षमता के बल पर स्पंदित- **"आनीदवातं स्वधया तदेकम्"** (10.129.2)। इस ऋचाओं के ऋषि हैं परमेष्ठिन् प्रजापति। उनके अनुसार वह एक था और उसी में सब समाहित था। उसी एक से जब अनेक हुए तो ऋषियों ने कहा- **एकं सद् विप्रा बहुधा वदन्ति**। वह एक सदा रहता है। आखिर वह अव्यक्त कैसे व्यक्त हुआ? जब सबकुछ शून्यमय या असत् था, तब तपस् की महिमा से वह खुद को प्रकट किया। पुनः ऋषि उसी नासदीय सूक्त की सातवीं ऋचा में कहते है कि यह सारा फैलाव जहाँ से हुआ, निश्चयपूर्वक कौन जानता हैं, इसे? यह सारा फैलाव जहाँ से हुआ, उसे तो परम आकाश में रहनेवाला ही जानता होगा, जो इस सृष्टि का अध्यक्ष है। या इस बारे में वह नहीं भी जानता हो, कौन कह सकता है? (**सो अंग वेद यदि वा न वेद**)।

ऋग्वेद की इस चिन्तनधारा को अर्थवेद में विस्तार मिला, जहाँ पर उपनिषद् में वर्णित ब्रह्म ही सर्वत्र व्याप्त हो जाता है। इस ब्रह्म से परे कुछ है ही नहीं। इसे साहित्य में, संगीत में, दर्शन में, जीवन में, विज्ञान में, भोजन में यानी हरेक कर्म और घटना में उसे देखा गया।

भारतीय जीवन में हरेक क्षेत्र और दिशा के ऊर्ध्व में ब्रह्म का स्वरूप प्रतिष्ठित है। दर्शन उसे अक्षर, तो

योग में उसे परमात्मा कहा गया। भक्ति में वहीं भगवान् और ज्योतिष में काल हो जाता है। आयुर्वेद में जो प्राण है, वहीं दैनिक व्यवहार में ईश्वर है। गणित में अनन्त और शून्य का जो स्थान है, वहीं संगीत में नाद हो जाता है। साहित्य में जो रस है, वहीं व्याकरण में शब्द में है। इसलिए हमने शब्द ब्रह्म, अक्षर ब्रह्म, नाद ब्रह्म, रस ब्रह्म, प्राण ब्रह्म आदि कहा गया। इस पूरी चिन्तन-प्रणाली का भावार्थ है कि सत्य, काल, प्राण, रस, नाद, शब्द आदि सभी को ब्रह्म का पर्यायवाची माना गया। भारतीय मन हर छोटी बात, क्रिया और विचार में नव्यता की खोज करता है, जो केवल भव्य नहीं बल्कि दिव्य हो।

**"आइंस्टाइन का कहना है कि पदार्थ और ऊर्जा एक ही चीज हैं। स्टीफन हॉकिंग अपनी किताब "ब्रह्मांड के बड़े सवाल का संक्षिप्त जवाब" नामक पुस्तक में बताते है कि बिग बैंग के समय यूँ ही ब्रह्मांड का विस्तार नहीं हो गया। आखिर इतनी ऊर्जा और इतना विशाल अन्तरिक्ष कहाँ से आया? वह जवाब देते है कि प्रकृति का नियम है कि सकारात्मक और नकारात्मक मिलकर शून्य हो जाते हैं।"**

वही ब्रह्म जब तपस् यानी इच्छा करता है तो शाश्वत सत्य और क्रियाशील ऋत में खुद को प्रकट करता है। सृष्टि और प्रलय के वर्तुल में वह गतिमान होता है। उसकी क्रियात्मक गति से सूर्य, चन्द्र, तारागण, ऋतुचक्र, संवत्सर, जीवन, मृत्यु, पुनर्जन्म होता है। यह सृष्टि का विस्तारित गति है, जिसमें जीवन और मरण है। एक गति संकुचित होती है, जो प्रलय के दौरान होता है, जिसका भी संवत्सर होता है। वह परम ब्रह्म शाश्वत भी है, स्थिर ध्रुव है और वह सत्य है। लेकिन उसके देश और काल की कोई गणना नहीं है। वह अज्ञेय की स्थिति है। जब वह सक्रिय और गतिशील होता है, तब उसका क्रियात्मक और रूपात्मक स्वरूप को देश और काल यानी टाइम और स्पेस के चाक पर चिन्तन किया जाता है। परम सत्ता की सत्य यानी 'अस्ति' रूप उसका संज्ञापक्ष, तो उसकी 'भवति' रूप यानी क्रिया का ऋतपक्ष है। यह दोनों ही असीम, अज्ञेय और अपरिमित है।

इसी कारण उस अव्यक्त सत्ता को **एकोऽहं द्वितीयो नास्ति** कहा गया। सृष्टि का आरम्भ भी वही है और अन्त भी वही है। गीता में कहा गया कि मैं ही सबकुछ हूँ। दूसरा कोई नहीं। वहीं जब सत्य और ऋत में प्रकट करता है तो सृष्टि और प्रलय का प्रवाहक्रम चलता है। तब संवत्सर की गणना प्रारम्भ होती है। संवत्सर महत् का साँस है। कहा गया है- **ईशावास्यम् इदं सर्वं यत् जगत्यां जगत्।** सृष्टि और प्रलय के वर्तुल में दोलन ही संवत्सर है, लेकिन इस दोलन के परे जो है, वह क्या है? वहाँ न गति है, न क्षेत्र है और न ही साँस है। वह महाकाल की सीमा से परे है। इसे जानने के लिए बार-बार तप की बात कहीं गयी। तैत्तिरीय उपनिषद् में कहा गया कि **"तपसा ब्रह्म विजिज्ञासस्व"** यानी तपस्या के द्वारा उस ब्रह्म को जानो। शंकराचार्य ने महाभारत के शान्तिपर्व के एक श्लोक को परिभाषित किया कि मन और इन्द्रियों की शक्तियों को एकाग्र करना ही परम तप है। तप से क्रियाशील जीवन और जगत् की गणना है।

## समय का अन्तहीन सफर

समय के प्रारम्भ की यात्रा पदार्थ के रहस्य से जुड़ा है। पदार्थ की पहेली इलेक्ट्रॉन के विद्युत आवेश से संबन्धित है। यह आवेश नहीं हो तो सौरमंडल के पिंड

अपनी कक्षा से च्युत होकर अनन्त अन्तरिक्ष में विलीन हो जाए। यह इलेक्ट्रॉन का आवेश ही पदार्थ के गुरुत्वाकर्षण का कारण है। विद्युत् आवेश, चुंबकीय आकर्षण, गुरुत्वाकर्षण में इलेक्ट्रॉन की भूमिका है। विज्ञान कहता है कि धूल का कण भी एक 'वस्तु' यानी 'मैटर' है। इस प्रकार, यह अस्तित्व भी मैटर है। जब हम गहराई में विज्ञान की परतें खोलते हैं तो अस्तित्व का रहस्य भी खुलता जाता है। जगत् की वस्तुएँ पदार्थ या तत्त्व हैं। ये अणुओं के संयोजन से बनते हैं, जो खुद परमाणु का जोड़ होता है। फिर विज्ञान खोज करते हुए गॉड पार्टिकल्स और क्वार्क्स तक पहुँच जाता है, जिसे वह पदार्थ कहता है। यह 'क्वार्क्स' खुद शून्य के भाव को बताता है। विज्ञान की यह पूरी यात्रा सृष्टि की बुनियादी इकाई की ओर ले जाती है, जहाँ से समय का सफर शुरू हुआ।

विज्ञान बताता है कि ब्रह्मांड के निर्माण में तीन चीजों की जरूरत होती है- पहला पदार्थ, जिसका द्रव्यमान हो। यह पदार्थ अन्तरिक्ष में सब ओर है। धूल-कण से लेकर बर्फ, गैस बादल आदि। यह सब द्रव्यमान है। दूसरी चीज ऊर्जा की जरूरत होती है। और तीसरी चीज है अन्तरिक्ष।

आइंस्टाइन का कहना है कि पदार्थ और ऊर्जा एक ही चीज हैं। स्टीफन हॉकिंग अपनी किताब "ब्रह्मांड के बड़े सवाल का संक्षिप्त जवाब" नामक पुस्तक में बताते है कि बिग बैंग के समय यूँ ही ब्रह्मांड का विस्तार नहीं हो गया। आखिर इतनी ऊर्जा और इतना विशाल अन्तरिक्ष कहाँ से आया? वह जवाब देते है कि प्रकृति का नियम है कि सकारात्मक और नकारात्मक मिलकर शून्य हो जाते हैं। वे उदाहरण देते है कि पहाड़ को ब्रह्मांड मान ले तो पहाड़ बनाने के लिए जमीन खोदी जाती है और उस मिट्टी से पहाड़ बनता जाता है। लेकिन साथ में एक खाई का भी निर्माण होता जाता है, जो मूर्तरूप में पहाड़ का नकारात्मक स्वरूप है। बिंग बैंग के पूर्व समय नहीं था। यह नकारात्मक ऊर्जा संपूर्ण अन्तरिक्ष में स्थित है, और ब्रह्मांड को विस्तार दे रहा है। यह दिक् यानी क्षेत्र नकारात्मक ऊर्जा का भंडार है। दूसरी ओर अन्तरिक्ष में अरब-खरब तारों और आकाशगंगाओं के बीच जो गुरुत्व बल खींच रहा है, सबको स्थिर रखा है, वह असीम ऊर्जा सकारात्मक है। अब इसका कोई रूप नहीं है। वह निराकार है।

महान् खगोलविद कार्ल सैगन कहते है कि इलेक्ट्रॉन के नकारात्मक विद्युत आवेश से ही यह समूची पदार्थमय जगत् का अस्तित्व है। इलेक्ट्रॉन का आवेश बुझ जाए, तो समूची सृष्टि धूल कणों-सी बिखर जायेगी, फिर समय की गणना का क्या होगा। जहाँ पर, पदार्थ है ही नहीं। जैसे ही परमाणु टूटता है, पदार्थ खो जाता है और परमाणु के टूटते ही वह पदार्थ के आगे प्रविष्ट हो जाता है- अपदार्थ में, नान-मैटीरियल में समाहित हो जाता है।

दार्शनिक ओशो कहते है कि विज्ञान ने पदार्थ की खोज करके परमाणु पाया और परमाणु के बाहर क्षण पाया, जहाँ से अपदार्थ में, अव्यक्त में, अनमैनिफेस्टेड में प्रवेश हो जाता है। पूरब के धर्म ने, पूरब के धर्म के खोजियों ने, मिस्टिक्स ने समय की खोज अधिक की; क्योंकि उनके इरादे कुछ और थे। उनके इरादे उस वस्तु को जानने के थे, जो इटरनल है, शाश्वत है, सनातन है। उन्होंने समय की खोज की और समय के आखिरी टुकड़े को खोजा, जिसका नाम उन्होंने क्षण दिया है। उसको टाइम एटम कहें या समय का परमाणु। और जब वे समय के इस परमाणा के भीतर प्रविष्ट हुए तो उन्होंने पाया कि 'टाइम सिंपली डिसएपियर्स', समय खो जाता है और फिर जो बचता है, वही शाश्वत, सनातन, नित्य है।

इसी प्रकार, आइन्स्टीन ने समय और दूरी को समय-दूरी-निरंतरता में संयुक्त किया। समस्त जगत् और कुछ नहीं बल्कि समय और दूरी की निरंतरता है।

वे कहते है कि हम समय और दूरी को पृथक् नहीं कर सकते हैं। एक संयुक्त समय और दूरी आज की वास्तविकता है और उस समय तथा दूरी में प्रत्येक वस्तु एक घटना है। जब हम समय और दूरी की निरंतरता में कोई वस्तु को देखते हैं तो उसकी विद्यमानता लुप्त हो जाती है। केवल घटनाएँ बचती है, जैसा कि फिल्म में होता है। समय की गति सभी विद्यमानताओं को घटना में बदल देता है और समय का तीर आगे ही बढ़ता जाता है। इसलिए श्रीकृष्ण कहते है कि 'कालोऽस्मि' यानी मैं काल हूँ। समस्त जगत् में सबकुछ खा लेता हूँ। आगे वह कहते हैं कि - धाताहं विश्वतो मुखं यानी मैं धाता और पालनहार भी हूँ जिसका मुख सब ओर है। (*स्वामी रंगनाथानंद : भगवद्गीता के सार्वजनीन संदेश, भाग दो, पृष्ठ- 392*)।

मनुष्य की चेतना संसार में ब्रह्मांड एक जीवन केंद्र की तरह है, जो सदैव ही आकर्षित करता है। विज्ञान ने पदार्थ उत्पति के साथ महाविस्फोट के सिद्धांत को प्रतिपादित किया, जिसे बिंग-बैंग कहा गया। यह जीवन की मृण्मय यात्रा है, जो जन्म और मृत्यु की श्रृंखला से बंधा हुआ है। दूसरी ओर यह चेतना की चिन्मय यात्रा भी है, जो शाश्वत जारी है। भौतिक विज्ञान के अनुसार 13.7 अरब वर्ष पूर्व महाविस्फोट के साथ ही समय, स्पेस और एनर्जी का सफर शुरू हुआ। यह मैटर यानी पदार्थ की यात्रा का आरम्भ था। यह गणना भी अन्तम नहीं है, क्योंकि इसे तारा के प्रकाश और उसके टूटने के आधार पर किया गया। वर्ष 2002 में हबल अन्तरिक्ष दूरबीन से प्राचीनतम तारों के आधार पर ब्रह्मांड की यह आयु आँकी गयी थी। आकाशगंगा के छोटे और टिमटिमाते तारों को 07 हजार प्रकाश वर्ष दूर क्षय तारों के समूह में खोजा गया और उसके तापमान के आधार पर यह अनुमान लगाया गया।

## अनन्तकाल की गणना

वैज्ञानिकों का मानना है कि 14 अरब साल पहले ब्रह्मांड नहीं था, सिर्फ अन्धकार था। अचानक एक बिन्दु की उत्पत्ति हुई, फिर उसमें महाविस्फोट हुआ। भारतीय दर्शन के अनुसार ईश्वर ने ब्रह्मांड को नहीं रचा, बल्कि उनकी उपस्थिति के कारण ब्रह्मांड की रचना होती गयी। वेदों के अनुसार ब्रह्मांड पंचकोषों वाला है, जिसमें जड़, प्राण, मन, विज्ञान और आनंद है। शिव-पुराण के अनुसार उस हिरण्यगर्भमय बिंदु में तपस् के कारण नाद उत्पन्न हुआ। यह किसी अनाहत यानी बिना किसी टक्कर से पैदा हुआ। इस कारण समस्त सृष्टि में एक ध्वनि है। उसका स्वरूप ओंकार है।

वैदिक काल गणना के अनुसार ब्रह्मांड की आयु ब्रह्मा की आयु के बराबर होती है, जिनके एक दिन और रात की अवधि को मनुष्य की भाषा में 8.60 करोड़ है। संसार के सृजन और विनाश के संबंध में श्रीमद्भगवद् गीता (9.7) में भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं, 'हे कुंतीपुत्र! कल्प के अन्त में संपूर्ण जड़-चैतन्य जगत् मेरी अव्यक्त प्रकृति में लीन होता है तथा कल्प के प्रारम्भ में पुनः मैं उसे उत्पन्न करता हूँ।' एक कल्प का मान 4 अरब 32 करोड़ सौर वर्षों के बराबर होता है। इतने ही समय तक यह ब्रह्मांड सगुण (स्थूल) रूप में स्थित रहता है, यह सृष्टि का कुल आयु है। भारतीय चिन्तन में अनन्त ब्रह्मांड की परिकल्पना है, जिसमें बताया गया है कि ब्रह्मा के निधन के साथ महाप्रलय आता है और ब्रह्मांड का विलय हो जाता है। फिर इतने दिनों के बाद पुन सृजन की प्रक्रिया शुरू होती है।

भारतीय चिन्तन में ब्रह्मांड के सृजन, विकास और विलय की प्रक्रिया अनन्तकाल तक चलती रहती है। इस कारण यहाँ संवत्सर के बाद मन्वन्तर और मन्वन्तर के बाद कल्प है। 12 मास का साल होता है, उसी प्रकार कुल 60 वर्ष का एक चक्र होता है, जिसका

भिन्न-भिन्न नाम होता है। 60 संवत्सरों का चक्र सौरमंडल के सबसे बड़े ग्रह बृहस्पति और दूरस्थ ग्रह शनि की परिक्रमा के सापेक्ष आकलन है। वर्ष 2023-24 को आनल संवत्सर और 2022-23 को राक्षस संवत्सर कहा गया है। यह चक्र 1974-75 से शुरू हुआ और 2033-34 ईस्वी में जाकर पूरा होगा। संवत्सर के बाद मन्वन्तर काल गणना होती है। विष्णु-पुराण के अनुसार मन्वन्तर की अवधि 71 चतुर्युगी के बराबर होती है। इसके अलावा कुछ अतिरिक्त वर्ष भी जोड़े जाते हैं। एक मन्वन्तर में 71 चतुर्युगी और 8.52 लाख दिव्य वर्ष या 30.67 करोड़ मानव वर्ष होता है। यह सातवाँ मन्वन्तर चल रहा है। प्रत्येक कल्प के 14 भाग होते हैं और इन भागों को मन्वन्तर कहते हैं। प्रत्येक मन्वन्तर का एक मनु होता है, इस प्रकार स्वायंभुव, स्वारोचित आदि 14 मनु हैं। प्रत्येक मन्वन्तर के अलग -अलग सप्तर्षि, इद्रं तथा इंद्राणी आदि भी हुआ करते हैं।

सूर्य मंडल के परमेष्ठी मंडल (आकाशगंगा) के केंद्र का चक्र पूरा होने पर उसे मन्वन्तर संवत् कहा गया। इसका माप है 30,67,20,000 (तीस करोड़ सड़सठ लाख बीस हजार वर्ष)। एक से दूसरे मन्वन्तर के बीच एक सन्ध्यांश सतयुग के बराबर होता है। अतः संध्यांश सहित मन्वन्तर का माप हुआ- 30 करोड़ 84 लाख 48 हजार वर्ष। आधुनिक मान के अनुसार सूर्य 25 से 27 करोड़ वर्ष में आकाशगंगा के केंद्र का चक्र पूरा करता है। वैदिक ऋषियों के अनुसार वर्तमान सृष्टि पंचमंडल क्रमवाली है। चन्द्र मंडल, पृथ्वी मंडल, सूर्य मंडल, परमेष्ठी मंडल और स्वायम्भू मंडल। ये उत्तरोत्तर मंडल का चक्कर लगा रहे हैं। परमेष्ठी मंडल स्वायम्भू मंडल का परिभ्रमण कर रहा है यानी आकाशगंगा अपने से ऊपर वाली आकाशगंगा का चक्कर लगा रही है। इस काल को कल्प कहा गया यानी इसकी माप है 4 अरब 32 करोड़ वर्ष (4,32,00,00,000)। इसे ब्रह्मा का एक दिन कहा गया। जितना बड़ा दिन, उतनी बड़ी रात। अतएव ब्रह्मा का अहोरात्र यानी 8.64 अरब वर्ष हुआ।

भारतीय कालगणना यही पर नहीं रुकी। ब्रह्मा का एक दिन बीतने के बाद महाप्रलय होता है और फिर इतनी ही लंबी रात्रि होती है। इस दिन और रात्रि के आकलन से उनकी आयु 100 वर्ष होती है। वैदिक ऋषियों ने बताया कि ब्रह्मा की आधी आयु निकल चुकी है और शेष में से यह प्रथम कल्प है। ब्रह्मा का एक दिवस (दिन-रात) अर्थात् (एक कल्प की रात और एक कल्प का दिन), जो 8 अरब 64 करोड़ मानव वर्ष का होता है। इस प्रकार 30 ब्रह्मा के दिन यानी एक मास कुल 02.59 खरब (दो खरब 59 अरब 20 करोड़ ) मानव वर्ष के बराबर होता है। इसी प्रकार 12 ब्रह्मा के मास को ब्रह्मा का एक वर्ष होता है जो 31. 10 खरब (31 खरब 10 अरब 4 करोड़) मानव वर्ष का होता है। इस प्रकार 50 ब्रह्मा के वर्ष को एक परार्ध कहा जाता है। दो परार्ध के बराबर ब्रह्मा का 100 वर्ष होता है। इस प्रकार ब्रह्मा का जीवन काल यानी महाप्रलय का कुल अवधि 31.10 शंख (31 शंख 10 खरब 40अरब ) मानव वर्ष होता है। इस प्रकार ब्रह्मा का बीता वर्ष 31 खरब 10 अरब 40 करोड़ वर्ष हुआ। ब्रह्मा की 100 वर्ष की आयु अथवा ब्रह्मांड की आयु कुल 31 नील 10 अरब 40 अरब वर्ष है। इस प्रकार यह अन्तहीन सफर जारी है।

## समय का इतिहास में छलांग

समय का सफर लंबा है। इसने इतिहास में छलांग लगाया है। इससे इतिहास के कई पड़ाव बने, लेकिन वह संवत्सर का हिस्सा क्यों नहीं बना, जबकि उसे बनना चाहिए था। क्या धरती पर चेतना की यात्रा का संवत्सर नहीं होना चाहिए? इसी प्रकार, बुद्धिमान मानव की यात्रा को हम संवत् का हिस्सा क्यों नहीं बनाते है? कृषि क्रांति विकास की दिशा में मानव जाति

की लंबी छलांग थी, लेकिन समय के सफर में इसको कृषि संवत्सर के शुरूआत के रूप में नहीं लिया गया, जो लेना चाहिए था। इसी प्रकार औद्योगिक क्रान्ति की भी शुरुआत समय की यात्रा का एक अहम पड़ाव है। ऐसे ही पड़ाव ऋग्वेद का पहला सूक्त है, जो मानव इतिहास में चिन्तन, दर्शन और वैज्ञानिक विचार का पहला कदम था। उपनिषद् का शास्त्रार्थ को संवस्तर का भाग होना चाहिए। आधुनिक काल में बिजली का अनुसंधान, नेट कनेक्टिविटी और ऑर्टिफिशयल इंटलेजेंस की घटना भी समय का एक अहम पड़ाव है। इन पड़ावों (Epochs) को भी इतिहास में एक संवत्सर की भाँति दर्ज किया जाना चाहिए, जैसा कि ईसा वर्ष, विक्रम संवत् आदि है।

भारतीय परम्पराओं के अनुसार वनस्पति और जीवन का पृथ्वी पर विकास वैवस्वत मन्वन्तर में हुआ, जो 12 करोड़ वर्ष हो चुका है। यह वैवस्वत मनु संवत् है। जब हिरण्यगर्भ फटा और कल्पारम्भ में एक मन्वन्तर बीत गया, तो पृथ्वी का जन्म हुआ। चूँकि एक मन्वन्तर का काल 4.32 करोड़ होता है। अतएव कल्पारंभ 1.97 अरब साल से एक मन्वन्तर को घटाने के बाद के कालखंड में पृथ्वी अलग हुई। यह घटना 1.92 अरब साल पहले हुई थी। अत कल्प संकल्प संवत् 1.97 अरब साल पहले तो पृथ्वी संवत् 1.92 अरब साल पहले शुरू हुई। इसी प्रकार पृथ्वी पर वर्तमान मानव की उत्पत्ति का कालखंड वर्तमान चतुर्युग के सतयुग में माना जाता है, जो 38.93 लाख पहले हुआ। यह मानव संवत् का काल है। यह कालावधि लगभग वर्तमान वैज्ञानिक काल गणना के ठीक बराबर पड़ती है, जो मानव अवशेष मिलने के काल को 35 लाख साल पुराना बताती है।

आधुनिक विज्ञान के अनुसार सृष्टि के उद्भव के साथ पदार्थ का जन्म हुआ। पदार्थ से जीवन की उत्पत्ति हुई। पृथ्वी पर जीवन की शुरूआत लगभग 4 अरब वर्ष पहले हुई थी। उस समय के समुद्रों के पानी का संघटन आज के समुद्रों के पानी से बहुत भिन्न था। शुरुआत में पृथ्वी के वातावरण में ऑक्सीजन नहीं था, धीरे-धीरे ऑक्सीजन बनता गया और अन्ततः वह वर्तमान स्तर तक पहुँची। ऑक्सीजन बनाने का काम हरे पौधे करते हैं जो प्रकाश संश्लेषण के दौरान वातावरण से कार्बन डाईऑक्साइड ले कर ऑक्सीजन छोड़ते हैं। पृथ्वी पर सबसे पहले विकसित होने वाले हरे पौधे सायनोबैक्टीरिया नामक हरे शैवाल थे। अतः यह अनुमान लगाया जा सकता है कि सबसे पहले बनने वाले जीव ऑक्सीजन की सहायता से श्वसन नहीं करते थे, अपितु अनॉक्सी श्वसन से काम चलाते थे। आजकल के अधिकांश जीवों को ऑक्सीजन की आवश्यकता पड़ती है।

चेतना के बाद बुद्धि की यात्रा पृथ्वी पर मानव के जन्म से शुरू हुई। धरती पर सबसे पहले मानव का आगमन हिमयुग या अभिनूतन युग (प्लीस्टोसीन) में हुआ था। अफ्रीका के क्षेत्रों में पत्थर के औजारों के साथ लगभग 35 लाख वर्ष पुराने मानव अवशेष मिले हैं, इस युग के मानव को 'आस्ट्रेलोपिथेकस' कहते हैं। इसमें बीस लाख साल तक इस धरती पर जैसे दूसरे प्राणी थे, वैसे ही मनुष्य की प्रकृति और स्वभाव रहीं। एक आदिम अवस्था और व्यवस्था थी। जीवन के लिए संघर्ष होता था। दो से तीन लाख पूर्व इसमें बदलाव आया। पृथ्वी पर पर पहला आधुनिक होमो सेपियन्स का जन्म हुआ। लेकिन 70 हजार साल पूर्व एक संज्ञानात्मक क्रान्ति के साथ इस मनुष्य में सोचने की क्षमता विकसित हुई। मनुष्य में भाषा, प्रतीक और मिथक के साथ एक तीसरे चरण में सभ्यता के प्रवेश का कालखंड था। यह मानव की आधुनिक प्रजाति है। इसने 30 हजार साल पूर्व मनुष्य की दूसरी प्रजाति निएंडरथल्स को खत्म कर दिया।

युवाल हरारी ने आधुनिक काल में एक किताब 'सैपिंयस' लिखी। इसमें मनुष्यता के इस विकास का अद्भुत चित्रण किया गया है। अपनी किताब में युवाल हरारी ने कहा कि बिंग-बैंग के बाद मानव जीवन के साथ समय का इतिहास मे लंबी छलांग है, जिसके साथ एक संज्ञात्मक परिवर्तन जुड़ा है।

जब हम संवत्सर का स्मरण करते हैं, तो समय के पड़ाव में यह ऐतिहासिक घटना है, जिसमें भौतिक, जैविक और प्राकृतिक प्रक्रियाओं एवं अन्तःक्रियाओं के साथ मानव का ऐतिहासिक समय शुरू होता है। ब्रह्मांड का जन्म कैसे हुआ? इसका जवाब नहीं है। उसी प्रकार मानव की यात्रा में संज्ञात्मक बदलाव का कारण क्या था? इसका भी जवाब समय के इतिहास में दर्ज नहीं है। लेकिन यह बात सच है कि जेनेटिक म्यूटेशन हुआ, जिसके कारण होमो सेपिंयस सोचने लगे। उन्होंने घर बनाए। संबन्ध बनाए। संस्कृति और इतिहास का जन्म दिया। पदार्थ और ऊर्जा से इस सृष्टि की शुरूआत हुई और वह धीरे-धीरे सभ्यता के विकास को जन्म दे दिया।

संज्ञात्मक बदलाव के बाद दस हजार साल पूर्व कृषि-क्रांति के साथ सभ्यता एक नये दौर में प्रवेश कर गया। विकास की इस प्रक्रिया ने धीरे-धीरे और भी अकलमंद मनुष्यों को उत्पन्न किया। लोग इतने चतुर हो गये कि वे प्रकृति के रहस्यों को समझने में सक्षम हो गये। जिससे वे भेंड का पालन करने लगे और गेहूँ की खेती करने लगे। उन्होंने शिकारी-संग्रहकर्ता का थका देनेवाला खतरनाक और अक्सर कठिन जीवन को त्याग दिया और सुखद और संतुष्ट कृषक जीवन का आनन्द लेने लगे। *(युवान नोहा हरारी : सेपियंस- 91)।* हरारी के अनुसार मनुष्य के इतिहास की तीसरी बड़ी क्रांति वैज्ञानिक आन्दोलन है जो पाँच सौ साल पहले शुरू हुई। यह अभी चल रही है, जिसने समय को और गतिशील कर दिया है। समय की इस तीव्र गतिशीलता के दौर में संवत्सर का सुगन्ध ही धीमा हो गया है। अब मनुष्य के लिए समय की अनुभूति नहीं, बल्कि उस कालखंड में भोग का महत्त्व ज्यादा है।

## वर्तुल में गतिमान ऋतु

'ऋत' से ऋतु की उत्पति हुई। वैदिक साहित्य में ऋत शब्द का प्रयोग सृष्टि के सर्वमान्य नियम के लिए हुआ है। संसार के सभी पदार्थ परिवर्तनशील हैं किंतु परिवर्तन का नियम अपरिवर्तनीय नियम के कारण सूर्य चन्द्र गतिशील हैं। संसार में जो कुछ भी है वह सब ऋत के नियम से बँधा हुआ है। ऋत को सबका मूल कारण माना गया है। अतएव ऋग्वेद में मरुत् को ऋत से उद्भूत माना है। विष्णु को ऋत का गर्भ माना गया है। द्यौः और पृथ्वी ऋत पर स्थित हैं। संभव हैं, ऋत शब्द का प्रयोग पहले भौतिक नियमों के लिए किया गया हो, लेकिन बाद में ऋत के अर्थ में आचरण संबंधी नियमों का भी समावेश हो गया। उषा और सूर्य को ऋत का पालन करनेवाला कहा गया है। इस ऋत के नियम का उल्लंघन करना असंभव है। वरुण, जो पहले भौतिक नियमों के रक्षक कहे जाते थे, बाद में 'ऋत के रक्षक' (ऋतस्य गोपा) के रूप में ऋग्वेद में प्रशंसित हैं। देवताओं से प्रार्थना की जाती थी कि वे हम लोगों को ऋत के मार्ग पर ले चलें तथा अनृत के मार्ग से दूर रखें।

'ऋतु' शब्द की व्युत्पत्ति से विदित होता है कि जो सदा चलती रहे, उसे ऋतु कहते है। ऋतु ही काल की गति (चाल) है। ऋग्वेद (10.85.10) में चन्द्रमा को ऋतुओं का रचनाकार बताया गया है। इसी कारण भारतीय संवत्सर (वर्ष) के लिए चन्द्र संवत्सर को धर्मग्रन्थों में प्रमुखता दी गई। उत्तर भारत के अधिकांश पंचांग चन्द्र संवत्सर के आधार पर ही बनते हैं। भारतीय ज्योतिष में चन्द्रमा को मन का कारक ग्रह बताया गया है। चन्द्र संवत्सर चैत्र मास के शुक्लपक्ष की प्रतिपदा तिथि से प्रारम्भ होकर चैत्र मास के कृष्णपक्ष की अमावस्या तक प्रभावी होता है। वसंत ऋतु में शुरू होनेवाला यह संवत्सर समस्त ऋतुओं की

परिक्रमा करने के बाद अन्त में वसंत ऋतु में समाप्त होता है। वसंत को ऋतुराज माना जाता है, अतः संवत्सर का प्रारम्भ और अन्त इसी ऋतु में होना स्वाभाविक एवं उचित है।

ब्रह्मपुराण के अनुसार, चैत्र मास के शुक्लपक्ष की प्रतिपदा पड़िवा तिथि के सूर्योदय से ब्रह्माजी ने सृष्टि के निर्माण का कार्य शुरू किया। इसी दिन ब्रह्माजी ने मृत्युरूपी काल में प्राणों का संचार करके कालपुरुष को जाग्रत किया था। कालगणना का शुभारंभ और इस तिथि को प्रथम पद (स्थान) मिलने के कारण प्रतिपदा की संज्ञा दी गई। इसी कारण चन्द्र संवत्सर का प्रारम्भ चैत्र शुक्ल प्रतिपदा से होता है। इसी दिन सृष्टि के पालक भगवान विष्णु के सर्वप्रथम अवतार मत्स्यावतार के होने का उल्लेख भी मिलता है। वैज्ञानिक भी मानते हैं कि सृष्टि-रचना के अन्तर्गत जीव का सबसे पहले अस्तित्व जल में ही संभव हुआ। युग पूर्व भारतीय ऋषि-मुनियों ने यह तथ्य जान लिया था, तभी श्रीहरि के जल में मत्स्यावतार लेने का वैज्ञानिक आधार बना।

शास्त्रानुसार 'सम् वसन्ति ऋतवः' अर्थात् जिस समय अच्छी ऋतु होती है, उसी समय से संवत्सर का प्रारम्भ होता है। छः ऋतुओं में वसंत को ही सर्वश्रेष्ठ माना गया है। यह ऋतु देव आराधना, योग और भोग सभी कार्यों के लिए अनुकूल रहती है। वसंत ऋतु में गेहूँ आदि की नवीन फसलें पककर तैयार हो जाती हैं। इस तरह, यह ऋतु हमें नवान्न प्रदान करती है। वसंत ही जीवन में नवीन आनंद-उल्लास का एहसास कराता है इसलिए इसको ऋतुराज कहा जाता है।

भारतीय चिन्तन में ब्रह्मांड और ब्रह्म को स्मरण रखने के लिए विधान बनाए गये। दिवस की शुरूआत को ही ब्राह्ममुहूर्त कहा गया। इसका अर्थ है, ब्रह्मा का वह क्षण, जब जगत् शुरू होता है और व्यक्ति के दिवस का प्रारम्भ होता है। प्रकृति और पदार्थ में जीवन की तरंगों से विकास की प्रक्रिया गतिमान होती है। अंधेरे से सुबह की पहले प्रकाश के व्यक्त होते ही लीला शुरू होती है। जीवन की यह लीला साँझ होते-होते अपने शिखर पर पहुँच जाती है और जब भी कोई चीज शिखर पर पहुँचती है, तो उतरना शुरू हो जाती है, फिर ब्रह्मा की रात होती है। दिवस में व्यक्त जीवन रात को सोने चला जाता है। सब चीजें बिखरती जाती हैं। जो जगत् प्रकट हुआ था, वह रात्रि में पुनः अप्रकट में लीन हो जाता है और फिर सुबह, और फिर साँझ, और फिर सुबह, ऐसा वर्तुलाकार ब्रह्मा का समय चलता रहता है।

जगत् स्थिर नहीं है, ठहरा हुआ नहीं है, एक्सपैंडिंग है, फैलता हुआ है, विस्तार कर रहा है। ऐसा ही यह अस्तित्व रोज बड़ा हो रहा है। वैज्ञानिक कहते है कि सेकेंड में इसका लाखों मील का फैलाव हो जाता है। हर तारा दूसरे तारे से दूर भागा जा रहा है। रात को जो आप तारे देखते हैं, जहाँ आप उन्हें आज देखते हैं, कल आप उन्हें वहीं नहीं देखेंगे। वे दूर हटते जा रहे हैं। फिर एक सवाल आता है कि आखिर ये कहाँ तक फैलेंगे? ब्रह्मांड शब्द का ही यही अर्थ होता है। ब्रह्म का अर्थ होता है विस्तार, जो फैलता ही चला जाता है, जो रुकता ही नहीं।

वैदिक वाङ्मय में सृष्टि और काल की विशद व्याख्या मिलती है। ऋग्वेद के नासदीय सूक्त के अलावा अर्थववेद का एक पूरा सूक्त (19.53) कालतत्त्व की व्याख्या करता है। इस सूक्त के अनुसार काल रूपी घोड़ा सात लगामों से नियन्त्रित दौड़ा जा रहा है। उसकी हजारों आँखें हैं। वह सबकुछ देखता रहता है। वह कभी बूढ़ा नहीं होता है। कभी थकता नहीं है। उसका बल-वीर्य कभी कम नहीं होता है। समस्त भुवन और उसके समस्त प्राणी इस कालरूप अश्व से खिंचे रथ के पहिये है। वे भी काल की गति के कारण घूमते हैं, घूमते-घूमते आगे बढ़ते रहते हैं। यह कालतत्व हमारे संपूर्ण जीवन और उसके रागबोध तथा क्रियात्मक गति को प्रभावित करता है।

***

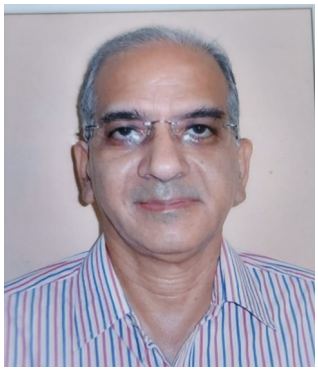

# आयुर्वेद में आदित्यायन आधारित संवत्सर काल

**डा. विनोद कुमार जोशी**
एमेरिटस प्रोफेसर, द्रव्यगुण विभाग, आयुर्वेद संकाय, चिकित्सा विज्ञान संस्थान, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी।

**'संवत्सर' शब्द दर्शन शास्त्र की दृष्टि से भले गतिशील चक्र का बोध कराता हो पर इस संसार में एक वर्ष की अवधि में जब हम सूर्य के किरणों के आपात कोण में परिवर्तन के कारण ऋतुओं का चक्र देखते हैं तो वह एक चक्र हमें पूर्णता की ओर सोचने के लिए विवश कर देता है। उसे व्यावहारिक रूप से हम वर्ष कहते हैं, जो वर्षा के एक चक्र का भी बोध कराता है। वह वर्ष एवं संवत्सर प्रत्येक ऋतु में हमारे शरीर के चक्र को भी प्रभावित करता है। उष्मा का ग्रहण, शोषण और त्याग हमारे शरीर को गति प्रदान करता है। भारतीय आयुर्वेद की परम्परा की विशेषता है कि वह वेदों में प्रतिपादित सिद्धान्त के अनुरूप मानव जीवन की व्याख्या करती है। इस दृष्टि से प्राणियों का शरीर केवल रक्त, मज्जा, वसा, मांस, अस्थि, मेद का समूह नहीं; बल्कि ब्रह्माण्डीय 'ऋत' से संयुक्त होकर उत्पन्न और विनष्ट होता है। आयुर्वेद के दो स्तम्भ चरक एवं सुश्रुत ने ऋतुचर्या के परिप्रेक्ष्य में संवत्सर की व्याख्या कर प्राणि-शरीर पर पड़नेवाले प्रभावों का वर्णन किया है।**

आयुर्वेद के मौलिक ग्रन्थद्वय 'चरक संहिता' तथा 'सुश्रुत संहिता', जिनका काल ईसा से 1000 पूर्व माना जाता है, में संवत्सर शब्द का वर्णन वर्ष सूत्रस्थान के छठवें अध्याय में दृष्टिगोचर होता है। चरक-संहिता में स्पष्ट रूप से संवत्सर के सम्बन्ध में इस प्रकार लिखा गया है-

**"इह खलु संवत्सरं षडङ्गमृतुविभागेन विद्यात्। तत्रादित्यस्योदगयनमादानं च त्रीनृतून्छिशिरादीन् ग्रीष्मान्तान् व्यवस्येत्, वर्षादीन् पुनर्हेमन्तान्तान् दक्षिणायनं विसर्गं च।"[1]**

यहाँ (ऋतुसात्म्य) ऋतु विभाग के अनुसार संवत्सर को छ: अङ्गों में जानना चाहिए, इसमें सूर्य (आदित्य) का 'उदय' उत्तर दिशा की अयन गमन (उत्तरायण) है और आदानकाल शिशिर, वसन्त, ग्रीष्म इन तीनों ऋतुओं को समझना चाहिए। वर्षादीन- वर्षा, शरद हेमन्त (तीन ऋतुओं) को दक्षिणायन (दक्षिण दिशा को ओर गमन) और विसर्ग काल समझना चाहिए।

उपर्युक्त आदान काल तथा विसर्ग काल के महत्त्व को बल की दृष्टि से इस प्रकार निर्देशित किया है।

**आदावन्ते च दौर्बल्यं विसर्गादानयोर्नृणाम्।**
**मध्ये मध्यबलं त्वन्ते श्रेष्ठमग्रे च निर्दिशेत्॥**

1 चरक संहिता : सूत्रस्थान. 6.4

अर्थात् विसर्ग काल के प्रारम्भ (आदि वर्षा ऋतु) में और आदान काल के अन्त (ग्रीष्म ऋतु) समस्त मानवों में दुर्बलता होती है। विसर्ग काल तथा आदान काल के मध्य (शरद ऋतु एवं वसन्त ऋतु) में मानव का बल मध्यम रहता है। विसर्ग काल के अन्त (हेमन्त ऋतु) तथा आदान काल के आरम्भ (शिशिर ऋतु) मे मानव का बल श्रेष्ठ बताना (निर्देशित) चाहिए।

'सुश्रुत संहिता', जिसकी रचना काशिराज दिवोदास धन्वन्तरि के प्रमुख शिष्य सुश्रुत ने की उन्हींके नाम से, सुश्रुत संहिता नाम से, आज भी प्रचलित है। काशी के राजा काशिराज कहलाते हैं। **'दिवोदासं'** से **"दिविति शब्देनात्र तस्य स्थानदेवाः"** और **'धन्वन्तरिमिति'** से **"धनुः शल्यशास्त्रं, तस्य अन्तं पारम् इर्यति गच्छतीति धन्वन्तरिः।"** इस प्रकार व्याख्या सुश्रुत के प्रसिद्ध टीकाकार डल्हण ने की है।[2]

'सुश्रुत संहिता' के ऋतुचर्या नामक अध्याय में 'संवत्सर' का उल्लेख निम्न प्रकार से मिलता है।

**"तस्य संवत्सरात्मनो भगवानादित्यो गतिविशेषेणाक्षिनिमेष-काष्ठा-कला मुहूर्ताहोरात्र-पक्ष-मासर्त्वयन-संवत्सरयुगप्रविभागं करोति।"** [3]

अर्थात् संवत्सर रूपी उस काल का भगवान सूर्य अपनी गति विशेष से अक्षिनिमेष काष्ठा, कला, मुहूर्त, अहोरात्र, पक्ष, मास, ऋतु अयन, संवत्सर और युग इस तरह विभाग करते हैं।

उपरोक्त काल भेदों का लक्षण 'सुश्रुत संहिता' के प्रसिद्ध टीकाकार ने इस प्रकार स्पष्ट किया है-

**"तत्र लघ्वक्षरोच्चारणमात्रोऽक्षिनिमेषः पञ्च-दशाक्षि-निमेषाः काष्ठा त्रिंशत्काष्ठाः कला विंशतिकलो मुहूर्तः कलादशभागश्च त्रिंशन्मुहूर्तमहोरात्रं पञ्चदशा-होरात्राणि पक्षः स च द्विविधः शुक्लः कृष्णश्च तौ मासः।"**[4]

सुश्रुत ने संवत्सर के अन्तर्गत द्वादश मासों, छः ऋतुओं तथा उनके नामों का उल्लेख किया है

**"तत्र माघादयो द्वादश मासाः, द्विमासिकमृतू कृत्वा षड्ऋतवो भवन्ति, ते शिशिर-वसन्त-ग्रीष्म-वर्षा-शरद्धेमन्ताः, तेषा तपस्तपस्यो शिशिरः, मधुमाधवौ वसन्तः, शुचिशुक्रौ ग्रीष्मः, नभोनभस्यौ वर्षाः, इषोर्जे शरत् सहः सहस्यो हेमन्तः इति॥"** [5]

उपर्युक्त सन्दर्भ यजुर्वेद से प्रतीत होता है जो तैत्तिरीय संहिता तथा वाजसनेयी संहिता [6] में इस प्रकार वर्णित है-

**"मधुश्च माधवश्च वासन्तिकावृतू शुक्रश्च शुचिश्च ग्रैष्मावृतू नभश्च नभस्यश्च वार्षिकावृतू ईषश्चोर्जश्च शारदावृतू सहश्च सहस्यश्च हैमन्तिकावृतू तपश्च तपस्यश्च शैशिरावृतू।"** [7]

**"मधुश्च माधवश्च वासन्तिकावृतू।"**[8]

**"नभश्च नभस्यश्च वार्षिकावृतू।"**[9]

जगत् में प्रभाव की दृष्टि से उत्तरायन सूर्य का उत्तरमार्ग की ओर गमन को आदान काल भी कहते हैं, आदान काल में वायु अधिक रुक्ष बहती है और यह काल क्रमशः अग्निगुण प्रधान- शिशिर, वसन्त में ग्रीष्म ऋतु युक्त होता है। इस काल सूर्य अपनी (तीव्र) किरणों से संसार के स्नेहभाग को शोषित करता हुआ और तीव्र तथा रुक्ष वायु सहित स्नेहांश को अधिक शोषित करता है जिसके कारण उत्तरोत्तर अधिकाधिक रुक्षता, (रुक्ष गुण प्रधान) रसों की मानव शरीर तथा औद्भिद द्रव्यों की वृद्धि होती है, जो शरीर में दुर्बलता को लाते हैं अर्थात् बल का क्षय करते हैं।

2 सुश्रुत संहिता : 1.3
3 सुश्रुत संहिता : 6.4
4 सुश्रुत संहिता : 6.5
5 सुश्रुत संहिता : 6.6
6 यजुर्वेद : वाजसनेयि-संहिता, 13.25
7 यजुर्वेद : तैत्तिरीय-संहिता 4.4.11
8 यजुर्वेद : वाजसनेयि-संहिता : 13.25
9 यजुर्वेद : वाजसनेयि-संहिता : 14.15

इसके विपरीत विसर्ग विसर्ग काल- वर्षा, शरद, हेमन्त ऋतु में वायु अधिक रुक्ष प्रवाहित नहीं होती है। विसर्ग काल में चन्द्रमा पूर्ण बलवान् होता है। अत: अपनी शीतल किरणों से सम्पूर्ण पृथ्वी को आप्यायित करता रहता है और अम्ल, लवण तथा मधुर रस की वृद्धि होती है जिससे मानवों का बल क्रमश: वर्षा, शरद, हेमन्त (दक्षिणायन काल) में उपचित (अभिवृद्धि) को प्राप्त होता है, जो देह को बलवान् करता है। उपरोक्त कथन को चरक-संहिता में निम्न श्लोक से और अधिक स्पष्ट किया गया है-

**आदावन्ते च दौर्बल्यं विसर्गादानयोर्नृणाम्।**
**मध्ये मध्यबलं, त्वन्ते श्रेष्ठमग्रे च निर्दिशेत्॥**[10]

अर्थात् विसर्गकाल के प्रारम्भ (वर्षा ऋतु) में तथा आदानकाल के अन्त (ग्रीष्मऋतु में मानवों (समस्त प्राणियों) में दुर्बलता होती है। विसर्ग काल तथा आदान काल के मध्य (शरद ऋतु एवं वसन्त ऋतु) में पुरुषों का बल मध्यम (सामान्य स्थिति में) रहता है। विसर्ग काल के अन्त (हेमन्त ऋतु) में तथा आदान काल के प्रारम्भ (शिशिर ऋतु) में पुरुषों का बल श्रेष्ठ निर्देशित करना चाहिए (अर्थात् श्रेष्ठ बताना चाहिए)।

सुश्रुत संहिता में भी ठीक इसी प्रकार से निम्नलिखित रूप से निर्देशित किया गया है

**"त एते शीतोष्णवर्षलक्षणाश्चन्द्रादित्ययोः कालविभागकरत्वादयने द्वे भवतः दक्षिणमुत्तरं च तयोर्दक्षिणं वर्षाशरद्धेमन्ताः तेषु भगवानाप्यायते सोमः अम्ललवणमधुराश्च रसा बलवन्तो भवन्ति उत्तरोत्तरं च सर्वप्राणिनां बलमभिवर्धते उत्तरं च शिशिर-वसन्त-ग्रीष्माः तेषु भगवानाप्यायतेऽर्कः तिक्त-कषाय-कटुकाश्च रसा बलवन्तो भवन्ति उत्तरोत्तरं च सर्वप्राणिनां बलमपहीयते।"**[11]

उपर्युक्त सन्दर्भों से स्पष्ट होता है कि सूर्य एवं चन्द्रमा के किरणों के प्रभाव से विभिन्न ऋतुओं में पृथ्वी पर समस्त प्राणियों में बल की वृद्धि तथा क्षय प्रति वर्ष होता ही रहता है, सुश्रुत संहिता में सूर्य, चन्द्रमा और वायु के महत्त्व को प्रजा पालन के लिए इस प्रकार उद्धृत किया गया है

**शीतांशुः क्लेदयत्पूर्वी विवस्वान् शोषयत्यपि।**
**तावुभावपि संश्रित्य वायुः पालयति प्रजाः॥**[12]

यहाँ शीतांशु से चन्द्रमा की शीतल किरणों से है, 'क्लेदयति' से गीला करना-तथा उर्वी से पृथ्वी का है, और विवस्वान् का अर्थ सूर्य से है। अर्थात सूर्य और चन्द्रमा क्रमश: पृथ्वी को शोषित (सुखाना) तथा क्लेद (गीला) करते हैं। वायु सूर्य एवं चन्द्रमा का आश्रय लेकर प्रजा (संसार) का पालन करता है।

सारांशत: आयुर्वेद के मौलिक ग्रन्थद्वय जो कि 3000 वर्ष पूर्व रचित किये गये, में, एक वर्ष के काल को आदित्य की गतिद्वय उत्तरायन तथा दक्षिणायन के अन्तर्गत तीन-तीन ऋतुओं कुल षड्-ऋतुओं- शिशिर, वसन्त, ग्रीष्म, वर्षा, शरद हेमन्त को समाविष्ट किया गया है और प्रत्येक ऋतु में दो मास यथा, शिशिर में माघ (तप)- फाल्गुन (तपस्य); वसन्त में, चैत्र (मधु)- वैशाख (माधव); ग्रीष्म में ज्येष्ठ (शुचि)- आषाढ़ (शुक्र); वर्षा भाद्रपद (नभस्य); शरद में आश्विन (इष) - श्रावण (नमस) कार्तिक (ऊर्जा): हेमन्त में मार्गशीर्ष (सहा) और पौष (सहस्य) कुल 12 मासों की गुणना की गयी है। यहाँ पर यह उल्लेखनीय है कि सभी 12 नामों का आयुर्वेद ग्रन्थों से पूर्व यजुर्वेद में उल्लेख मिलता है, जो आयुर्वेद को वैदिक परम्परा में स्थापित करता है।

इस प्रकार यह स्पष्ट परिलक्षित होता है कि 'संवत्सर' का यहाँ बारह मासों अर्थात् एक वर्ष

10 चरक संहिता : सूत्रस्थान, 6.8
11 सुश्रुत सूत्र : 6.7
12 सुश्रुत संहिता : 6. 8

के 'काल' गणना से है। काल की व्याख्या भगवान् धन्वन्तरि ने 'सुश्रुत संहिता' में इस प्रकार की

**कालो हि नाम (भगवान्) स्वयम्भुरनादिमध्यनिधनः। अत्र रसव्यापत्संपत्ती जीवित-मरणे च मनुष्याणामायते। स सूक्ष्मामपि कला न लीयत इति कालः संकलयति कालयति वा भूतानीति कालः।"[13]**

अर्थात् काल का ही नाम भगवान् है। वह समस्त ऐश्वर्य युक्त है, किसी के द्वारा उत्पन्न नहीं किया जाता (स्वयंभू); किन्तु आदि, मध्य और अन्त (विनाश) उनसे रहित है। द्रव्यादि रसों की सम्पन्नता (गुण) तथा विपन्नता (विकृति) दोनों काल के अधीन हैं और मानवों का जीवन तथा मरण (मृत्यु) उस काल के अधीन ही है। वह काल सूक्ष्म से भी सूक्ष्म भाग को समाप्त नहीं करता, सदा गतिमान् होने के कारण ठहरता नहीं। अथवा प्राणियों को सुख दुःख से संयुक्त करने वाला काल होता अथवा मृत्यु के समीप ले जाने वाला काल होता है।

***

## आधार ग्रन्थ


1. अग्निवेश, चरक एवं दृढ़बल (1992), चरक संहिता, श्री चक्रपाणिदत्त विरचित आयुर्वेददीपिका संस्कृत व्याख्या, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन वाराणसी,
2. सुश्रुत, सुश्रुत संहिता (1982)- श्री डल्हणकृत निबन्ध-संग्रह संस्कृत व्याख्या, चौखम्भा ओरियण्टालिन, वाराणसी और दिल्ली
3. चरक संहिता, मूल का सान्वय हिन्दी अनुवाद एवं श्रीचक्रपाणिदत्त विरचित 'आयुर्वेददीपिका' का 'एषणा' 'हिन्दी अनुवाद, प्रथम खण्ड (सूत्रस्थान), राष्ट्रीय आयुर्वेद विद्यापीठ नई दिल्ली - 110026 (2011). 110026


13 सुश्रुत संहिता : 6.3

# कालोऽस्मि लोकक्षयकृत्प्रवृद्धो

श्रीभगवानुवाच

**कालोऽस्मि लोकक्षयकृत्प्रवृद्धो लोकान्समाहर्तुमिह प्रवृत्तः।**
**ऋतेऽपि त्वां न भविष्यन्ति सर्वे येऽवस्थिताः प्रत्यनीकेषु योधाः॥**

श्रीभगवान् बोले- मैं सम्पूर्ण लोकों का नाश करनेवाला परिवर्द्धित काल हूँ और इस समय मैं इनसब लोगों का संहार करनेके लिये यहाँ आया हूँ। तुम्हारे प्रतिपक्ष में जो योद्धालोग खड़े हैं, वे सब तुम्हारे युद्ध किये बिना भी नहीं रहेंगे। (श्रीमद्भगवद्-गीता : 11.32)

# राष्ट्रीय पंचांग जिसे हम भूल गये

**पं. गोविन्द झा**
104, सती चित्रकूट एपार्टमेंट, गंगा पथ, पटेल नगर (पश्चिम), पटना-23

**आज जब 01 जनवरी के दिन नववर्ष की बधाइयाँ देने पर बहुत लोग भारतीय परम्परा के अनुसार नववर्ष मनाने की बात करने लगते हैं और एक-दूसरे पर छींटाकशी की स्थिति तक पहुँच जाते हैं तो विचार करना स्वाभाविक है कि स्वतंत्रता के बाद ही सही, भारत में अपने परम्परागत पंचांग के लिए क्या कार्य किए गये? आज वित्तीय वर्ष की गणना अप्रैल से होती है, ईस्वी सन् का व्यवहार जनवरी से करते हैं, धार्मिक कैलेंडर चैत्र से आरम्भ होता है। ज्योतिष की गणना मेष संक्रान्ति होती है। इन विविधताओं और भ्रान्तियों के निवराण के लिए भारत में किए गये उपायों पर प्रकाश दे रहे हैं- प्राच्यविद्या के पण्डित गोविन्द झा।**

**यह आलेख पूर्व में 'धर्मायण' की अंक संख्या 78 में प्रकाशित है, जिसे प्रासंगिक देखते हुए इस विशेषांक में हमने संकलित किया है। वर्तमान में पं. झा 101 वर्ष के हो चुके हैं तथापि वे कम्प्यूटर के माध्यम से लेखन कार्य में सक्रिय हैं। हम उनके स्वस्थ जीवन की कामना करते हैं।**

स्वतन्त्रता के प्रथम प्रहर में भावी भारत की रूपरेखा उकेरने के लिये जो प्रयास किये गये उनमें एक था, राष्ट्रीय पंचांग का निर्धारण। इसके लिये डा. मेघनाद साहा की अध्यक्षता में राष्ट्रीय पचांग आयोग गठित किया गया और उसके द्वारा अनुशंसित पंचांग को राष्ट्रीय पंचांग के रूप में और शकाब्द को राष्ट्रीय संवत् के रूप में अंगीकृत किया गया।

यह राष्ट्रीय पंचांग भारत सरकार के प्रकाशन विभाग से भारत की सभी प्रमुख भाषाओं में हर साल प्रकाशित होता रहा है। केन्द्र सरकार और राज्य सरकारों के पत्रचार और संसूचनाओं में इस पंचांग के अनुसार तिथि का उल्लेख अंग्रेजी तारीख के साथ-साथ होता आया है। सरकारी कलेंडरों में, कई निजी कलेंडरों में और विभिन्न सम्प्रदाय के कई धार्मिक पंचांगों में भी इस राष्ट्रीय दिनांक को अंग्रेजी तारीख के साथ स्थान दिया जाता रहा है।

सहज ही प्रश्न उठता है कि एक ओर हमारे पारम्परिक धार्मिक पंचांग हैं और दूसरी ओर विश्वव्यापी अंग्रेजी पंचांग, जिनसे हमारे सारे काम चल ही रहे हैं तो फिर नये राष्ट्रीय पंचांग की क्या आवश्यकता आ पड़ी? उत्तर बहुत सीधा है। सभी धार्मिक पंचांग क्षेत्रीय हैं और वैज्ञानिक दृष्टि से अशुद्ध भी हो चले हैं। विश्वव्यापी अंग्रेजी पंचांग में भी मासारम्भ और वर्षारम्भ अवैज्ञानिक है। सबसे बढ़कर, ये सभी पंचांग धर्म से जुड़े हैं, इसलिये भारत-जैसे धर्म निरपेक्ष राष्ट्र के लिये इनमें एक भी उपयुक्त नहीं है।

**"सहज ही प्रश्न उठता है कि एक ओर हमारे पारम्परिक धार्मिक पंचांग हैं और दूसरी ओर विश्वव्यापी अंग्रेजी पंचांग, जिनसे हमारे सारे काम चल ही रहे हैं तो फिर नये राष्ट्रीय पंचांग की क्या आवश्यकता आ पड़ी? उत्तर बहुत सीधा है। सभी धार्मिक पंचांग क्षेत्रीय हैं और वैज्ञानिक दृष्टि से अशुद्ध भी हो चले हैं। विश्वव्यापी अंग्रेजी पंचांग में भी मासारम्भ और वर्षारम्भ अवैज्ञानिक है। सबसे बढ़कर, ये सभी पंचांग धर्म से जुड़े हैं, इसलिये भारत-जैसे धर्म निरपेक्ष राष्ट्र के लिये इनमें एक भी उपयुक्त नहीं है।"**

इस नये पंचांग का स्वरूप और महत्त्व बताने के पहले इसके लम्बे इतिहास पर एक नजर डाली जाय। आज से लगभग सौ साल पहले भारतीय पण्डितों में सबसे पहले महामहोपाध्याय बापूदेव शास्त्री ने आधुनिक (पाश्चात्त्य) ज्योतिर्गणित का अध्ययन किया, जिसमें शक्तिशाली दूरबीन के सहारे बहुत सारे ग्रहों और नक्षत्रें की स्थिति का प्रत्यक्ष अवलोकन करके खगोलीय तथ्यों का निरूपण किया गया था।

इस नवीन ज्ञान के आलोक में भारतीय ज्योतिर्विदों ने पाया कि उनके पारम्परिक गणित के परिणाम वास्तविक (आँख से प्रत्यक्ष दिखाई देनेवाली) स्थिति से मेल नहीं खाते हैं।

## दृग्गणितीय पंचांग के लिए प्रयास

इस असामंजस्य पर गहन विवेचन के लिये काशी में दरभंगा के महाराज रमेश्वर सिंह की अध्यक्षता में एक पण्डित-सम्मेलन हुआ। इसमें निर्णय किया गया कि पारम्परिक ज्यौतिष-शास्त्र के गणितीय सूत्रें और सारिणियों में जो अशुद्धियाँ आ गयी हैं, उन्हें सुधार दिया जाय और इस तरह सुधरे पंचांग के अनुसार ही धार्मिक अनुष्ठान किये जायँ।

इस तरह सुधारे गये पंचांग का नाम पड़ा- **दृग्गणितीय पंचांग**। इस सुधार से सबसे बड़ा परिवर्तन आया संक्रान्ति (सौर मास के आरम्भ के दिन) में। जैसे, मकर-संक्रान्ति जो परम्परानुसार 14 जनवरी को पड़ती है सुधरे गणित के अनुसार चली गई 21 जनवरी के दिन।

## पहला प्रयास

इस सिद्धान्त पर बने पंचांग का धार्मिक अनुष्ठानों में प्रयोग सबसे पहले उक्त पण्डित-सम्मेलन के अध्यक्ष **महाराज रमेश्वर सिंह** ने किया। उन्होंने यह नया पंचांग छपाना भी शुरू किया, जो हाल तक छपता रहा। परन्तु यह पंचांग उनके परिवार के सिवा और कहीं भी शायद चल नहीं पाया। इस तरह यह पहला प्रयास विफल हो गया।

## दूसरा प्रयास

दूसरा प्रयास जैसा कि बताया जा चुका है, **सरकार की ओर से** हुआ। इसे प्रयोग के तौर पर सरकारी मान्यता भी मिली। परन्तु इसका भी वही हाल हुआ, जो हिन्दी की। सोचा तो गया कि कुछ दिन इसे अंग्रेजी पंचांग के साथ-साथ चलने दिया जाए, बाद में जब लोग इससे परिचित हो जाएँगें तब अंग्रेजी पंचांग हटा दिया जाएगा। पर दुर्भाग्यवश वह बाद का दिन आजतक नहीं आया। स्वदेशी पंचांग चलाने की बात तो दूर, स्वदेशी माप-तौल को भी विदा कर दिया गया। सरकारी पत्रचार आदि में जो इसका प्रयोग अंग्रेजी तारीख के साथ-साथ चालू था, वह भी न जाने कब से और क्यों बंद-सा हो गया। इस प्रकार, यह दूसरा प्रयास भी विफल हो गया। इसकी विफलता का कारण एक ओर पारम्परिक आस्था हुआ तो दूसरी ओर राष्ट्र के कर्णधारों में भारतीय संस्कृति के प्रति उपेक्षाभाव।

अब इस पंचांग की तिथिपत्री देखी जाए-

| | |
|---|---|
| 1. चैत्र | 22 मार्च से 30 दिन |
| 2. वैशाख | 29 अप्रैल से 31 दिन |
| 3. ज्येष्ठ | 22 मई से 31 दिन |
| 4. आषाढ़ | 23 जून से 31 दिन |
| 5. श्रावण | 23 जुलाई से 31 दिन |
| 6. भाद्र | 23 अगस्त से 31 दिन |
| 7. आश्विन | 23 सितम्बर से 30 दिन |
| 8. कार्तिक | 23 अक्टूबर से 30 दिन |
| 9. मार्गशीर्ष | 22 नवम्बर से 30 दिन |
| 10. पौष | 22 दिसम्बर से 30 दिन |
| 11. माघ | 21 जनवरी से 30 दिन |
| 12. फाल्गुन | 20 फरवरी से 30 दिन। |

**"अंग्रेजी पंचांग अतीत में भले ही धर्मनिरपेक्ष रहा हो, 1585 ई. में पोप ग्रिगोरी त्रयोदश ने इसे सुधार कर ईसाई धर्म से जोड़ दिया और इसके वर्ष की गणना ईशा मसीह के जन्म के वर्ष से चला दी।"**

अब इसकी तुलना अंग्रेजी पंचांग के साथ करके देखा जाय कि दोनों में कौन श्रेष्ठ है। अंग्रेजी पंचांग की तरह यह भी सौर पंचांग है। परन्तु दोनों में तुलना करें, तो कई दृष्टि से राष्ट्रीय पंचांग श्रेष्ठ ठहरता है। पृथ्वी की सूर्यसापेक्ष स्थिति बदलती है, जिसके कारण वर्ष में दो बार रात और दिन बराबर होते हैं और एक-एक बार सबसे छोटा और सब से बड़ा दिन होता है। प्राकृतिक घटना की इन महत्त्वपूर्ण तिथियों की सूचना अंग्रेजी पंचांग से अनायास नहीं होता है। अतः सामान्य ज्ञान के संचय में ये तिथियाँ रटनी पड़ती हैं। राष्ट्रीय पंचांग में मासों का विभाजन इन्हीं प्राकृतिक घटनाओं के आधार पर किया गया है। फलतः प्राकृतिक भूगोल का मूलभूत ज्ञान इस पंचांग से अनायास हो जाता है। इसमें पहली छमाही का आरम्भ वासन्तिक विषुव (भर्नल इक्विनोक्स) से होता है और दूसरी छमाही का शरद् विषुव (आटमनल इक्विनोक्स) से। पहली तिमाही का आरम्भ वासन्तिक समरात्रि से होता है, दूसरी तिमाही का सबसे बड़े दिनसे और चौथी तिमाही का सबसे छोटे दिन से। ये ही दोनों क्रमशः दक्षिणायन और उत्तरायण के आरम्भ-बिन्दु है। यही इस पंचांग की वैज्ञानिकता है और इसी वैज्ञानिकता से काल-खण्डों का ज्ञान सरलता से हो जाता है।

अंग्रेजी पंचांग में मासों की लम्बाई बहुत ही बेतरतीब है। लम्बाई के अनुसार चार प्रकार के मासों में कौन-सा मास कितने दिनों का होगा इसकी शंका बहुतों को बार-बार होती रहती है। प्रस्तुत पंचांग में लम्बाई के अनुसार केवल दो प्रकार के मास हैं, तीस दिनों के और इकतीस दिनों के। वे भी बेतरतीब नहीं। वैशाख से भाद्र तक लगातार पाँच मास इकतीस दिनों वाले हैं और शेष सात मास तीस दिनों वाले। इस विभाजन के पीछे भी एक संकेत है: दिन बड़ा तो मास बड़ा, दिन छोटा तो मास छोटा।

अंग्रेजी पंचांग जनवरी से शुरू होता है। यह कई दृष्टियों से भारत के लिये असुविधाजनक और अव्यावहारिक है। यहाँ की कृषि में दो फसलें मुख्य रही है, धान और गेहूँ। दोनों की कटनी के बाद ही उपज का लेखा-जोखा करना ठीक होगा। अतः चैत्र को प्रथम मास मानना उपयुक्त होगा। इसीलिये तो वित्तवर्ष अलग से मानना पड़ा है। ज्ञातव्य है कि अंग्रेजी पंचांग में भी पहला मास मार्च ही था। मिलाइये-सेप्टेम सप्तम, ओक्टो-अष्टम, नोवेम नवम, डिसेम दशम।

1582 ई. में आकर तेरहवें पोप ग्रिगोरी ने इसे बदलकर पहला मास बना दिया; क्योंकि यीशु क्राइस्ट का अवतार इसी मास में हुआ माना जाता है। चैत्र को पहला मास मानने से सरकारी लेखा में वित्तवर्ष और पंचांगवर्ष दोनों एक हो जायेंगे। हमारी प्राचीन परम्परा

और संस्कृति में भी मार्च का चैत्र ही वर्ष का पहला मास माना जाता रहा है। इसी मास की संक्रान्ति के दिन नववर्ष दिवस सारे देश में मनाया जाता रहा है। वैदिक काल से ही यह जौ की कटनी का पर्व रहा है।

इस पंचांग की सबसे बड़ी विशेषता है धर्म-निरपेक्षता। अंग्रेजी पंचांग अतीत में भले ही धर्म-निरपेक्ष रहा हो, 1585 ई. में पोप ग्रिगोरी त्रयोदश ने इसे सुधार कर ईसाई धर्म से जोड़ दिया और इसके वर्ष की गणना ईशा मसीह के जन्म के वर्ष से चला दी। मध्य एशिया में प्रचलित पंचांग इस्लाम से जुड़ा हुआ है। इसके विपरीत राष्ट्रीय पंचांग शुद्ध प्राकृतिक घटना से जुड़ा है।

हर पंचांग का कोई-न-कोई अपना संवत् (वर्ष की गणना का आरम्भ-बिन्दु) होता है। इस पंचांग के लिये राष्ट्र ने व्यापक सहमति से शक संवत्/शकाब्द को चुना। बहुत-से विद्वान्, विशेष कर उत्तर भारत के लोग विक्रम संवत् के पक्ष में थे, लेकिन प्रचलन की प्राचीनता और धर्मनिरपेक्षतता की दृष्टि से शकाब्द ही उपयुक्त समझा गया।

मासों के बारे में भी बड़ी विविधता देखी जाती है। कुछ अनुष्ठानों के लिए चान्द्र (चन्द्रसम्बन्धी) मास लिया जाता है तो कुछ के लिये सौर (सूर्यसम्बन्धी)। चान्द्र मास के नाम हैं चैत्र इत्यादि। इसका आरम्भ कहीं कृष्ण पक्ष से माना जाता है तो कहीं शुक्ल पक्ष से। जो शुक्ल पक्ष से मानते हैं, उनके अनुसार सरस्वती पूजा वाला मास माघ नहीं, फाल्गुन है। इसीलिये उक्त पूजा वाली पंचमी वसन्त पंचमी कहलाती है। सौर मासों के प्राचीन नाम चैत्र इत्यादि नहीं, मेष इत्यादि हैं। ये ही नाम दक्षिण भारत में आज भी चलते हैं। लेकिन इन्हें भी उत्तर भारत के लोग चैत्र इत्यादि ही कहते हैं, जिससे व्यवहार में असुविधा भी होती है। चैत्र कहने से द्विविधा हो सकती है कि कौन-सा चैत्र, सौर या चान्द्र? अतः दोनों तरह के मासों के नाम अलग-अलग होना तार्किक भी है और सुविधाजनक भी। तथापि राष्ट्रीय पंचांग में दोनों प्रकार के नामों को मान्यता दी गई। फिर भी इसमें एक भारी अन्तर आया। उत्तर भारत के लोगों में मेष संक्रान्ति से शुरू होनेवाले मास को वैशाख कहते हैं, जबकि यह राष्ट्रीय पंचांग के अनुसार चैत्र/मेष माना गया है।

प्रश्न उठ सकता है कि इस राष्ट्रीय पंचांग के लागू होने से सबों के जन्म आदि की तिथियाँ अस्तव्यस्त हो जायेंगी। पर ऐसा होगा नहीं_ क्योंकि दोनों का मूलाधार पृथ्वी की सूर्यसापेक्ष स्थिति ही है। इसमें भी अंग्रेजी पंचांग की तरह हर चौथे वर्ष पर अधिवर्ष (लीप इयर) होता है। इसलिए पंचांग के बदलने से कहीं कोई फर्क नहीं पड़ेगा। उदाहरणार्थ जिसका जन्मदिन अंग्रेजी पंचांग के अनुसार 24 मार्च है, उसका नए पंचाग के अनुसार हर साल 3 चैत्र को पड़ेगा। दूसरे शब्दों में केवल नाम बदलेगा, दिन वही रहेगा।

इस प्रकार यह राष्ट्रीय पंचांग सामने तो आ गया पर दुर्भाग्य की बात है कि हम आज तक इसे अपना नहीं सके। आज तो हम इसका इतिहास भी भूल गये हैं। क्यों हुई ऐसी स्थिति? उत्तर स्पष्ट है। कट्टरता के आगे झुकना पड़ा। इसीके चलते राष्ट्रीय पंचांग में भी धार्मिक कार्यों के लिए पारम्परिक पंचांग का ही अनुसरण किया गया। धार्मिक से भिन्न कार्यों में इसे कुछ दिन अपना कर भी क्यों भुला दिया गया इसका उत्तर भारत के भाग्यविधाताओं से ही मिल सकता है।

***

# संवत्सर का काल-गणना में योगदान

**श्री महेश प्रसाद पाठक**
"गार्ग्यपुरम्" श्रीसाईं मन्दिर के पास, बरगण्डा,
पो– जिला–गिरिडीह, (815301), झारखण्ड,
Email: pathakmahesh098@gmail.com

भारतीय कालगणना के सन्दर्भ में संवत्सर और उसके विभाग का विवेचन करने पर अनेक प्रकार के तथ्य सामने आते हैं। चन्द्रमा, सूर्य तथा बृहस्पति ये तीन ग्रह संवत्सर गणना में अपनी भूमिका निभाते है, अतः भारत में बृहस्पति के एक चक्र पर आधारित 60 संवत्सरों की गणना भी की गयी है। हम प्रत्येक धार्मिक कार्य में संकल्प के समय जब "अमुक संवत्सरे" कहते हैं तो वहाँ बार्हस्पत्य संवत्सर का ही बोध होता है। अक्सर कई वर्ष इन संवत्सरों के नाम के कारण अर्थ का अनुसंधान करते हुए विवाद भी हो जाते हैं। ऐसी स्थिति में हमारे विविध प्रकार के भारतीय संवत्सरों का सैद्धान्तिक ज्ञान आवश्यक हो जाता है। पाठक की इस आवश्यकता को पूर्ण करनेवाला यह आलेख विशेष रूप से पठनीय है। यहाँ दी गयी अनेक तालिकाओं को कंठस्थ कर लेने की भी आवश्यकता होगी।

**सहस्रयुगपर्यन्तमहर्यद्ब्रह्मणो विदु।**
**रात्रिं युगसहस्रान्तां तेऽहोरात्रविदो जनाः ॥**[1]

'एक हजार चतुर्युग का जो ब्रह्माजी का एक दिन और उतनी ही बड़ी जो उनकी रात्रि कही गयी है, उसको जो लोग सही प्रकार से जानते हैं, वे ही अहोरात्र अर्थात् कालतत्त्व को जानते हैं। इसी सूत्र के आधार पर ज्योतिर्विदों की गणना होती है।'

काल-गणना में सर्वप्रथम जिस शब्द का उच्चारण होता है वह है- काल। काल के सन्दर्भ में हमारे ग्रन्थों का कहना है- **तस्मात्सर्वेषु कालेषु**[2] -निरन्तर सब समय में, **कालोऽस्मि**[3] -लोकों का नाश करनेवाला मैं महाकाल हूँ, **कालः कलयतामहम्**[4] -गणना करने वालों में मैं समय हूँ, **अहमेवाक्षयः कालो**[5] अक्षयकाल अर्थात् कालों का भी मैं महाकाल हूँ। **कालः कलयतामहम्**'[6] अपने अधीन करने वालों में मैं काल हूँ।

इसप्रकार, काल के मुख्यतः दो अर्थ सामने आते है — पहला उपयुक्त समय या समुचित समय, अवधि, काल की माप तथा दूसरा परमेश्वर का संहारक रूप, यमदेवता के रूप में। लेकिन विषयानुसार यहाँ गणनात्मक-काल का सन्दर्भ ही अपेक्षित है।

1 महाभारत : शान्तिपर्व, 231.31
2 गीता : 8.7
3 गीता : 11/32
4 गीता : 10/30
5 गीता : 10.33
6 श्रीमद्भागवत : 11.16.10

कालगणनाक्रम की विभिन्न पद्धतियों में से एक- काल की सूक्ष्मतम अवस्था- परमाणु, अणु, त्रसरेणु, त्रुटि, प्राण, वेध, लव, निमेष, विपल, क्षण, काष्ठा, दण्ड, लघु, घटी, मुहूर्त, प्रहर, याम, अहोरात्र, पक्ष, मास, ऋतु, अयन, वर्ष, संवत्सर (अब्द), दशाब्द, शताब्द, युग, कल्प मन्वन्तर का नाम आता है। सभी देशों में काल की मौलिक अवधि एक सी ही हैं, जैसे-दिन, सप्ताह, मास, वर्ष (ऋतु सहित)। लेकिन इस व्यवस्था के मूल आधार यानि मापक-स्तम्भ हैं -सूर्य और चन्द्र। इसके लिये मुख्यतः तीन सिद्धान्त देखने को मिलते हैं

1. **सूर्यसिद्धान्त**- समस्त भारत में प्रचलित
2. **आर्यसिद्धान्त**- मालावार, कर्णाटक, तमिलों में प्रचलित
3. **ब्रह्म सिद्धान्त**- गुजरात एवं राजस्थान में प्रचलित

वस्तुतः कालगणना एक विस्तृत विषयवस्तु है।

## पञ्चाङ्ग की महत्ता-

व्रतोत्सव एवं अन्य धार्मिक कृत्यों के ज्ञान के लिये हमें एक पञ्जिका की आवश्यकता होती है। इसे सामान्यतः पञ्चाङ्ग भी कहा जाता है। इसके पाँच अंगों (पञ्चाङ्ग) के बारे में कहा जाता है- (1)'तिथि' के श्रवण से लक्ष्मी की प्राप्ति, (2) 'वार' से आयुवृद्धि, (3)'नक्षत्र' से पापनाश, (4) 'योग' से प्रियजन वियोगनाश एवं (5) 'करण' के श्रवण से मनोकामना की पूर्ति होती है।

**तिथिवारं च नक्षत्रं योगः करणमेव च।**
**यत्रैतत्पञ्चकं स्पष्टं पञ्चाङ्गं तन्निगद्यते॥**
**जानाति काले पञ्चाङ्गं तस्य पापं न विद्यते।**
**तिथेस्तु श्रियमाप्नोति वारादायुष्यवर्धनम्॥**
**नक्षत्राद्धरते पापं योगाद्रोगनिवारणम्।**
**करणात्कार्यसिद्धिः स्यात्पञ्चाङ्गफलमुच्यते॥**

लगभग सभी धर्मों, सम्प्रदायों के अलग-अलग पञ्चाङ्ग मिलते हैं। इसके अलावे कुछ पञ्चाङ्ग चैत्र शुक्ल प्रतिपदा से, कुछ कार्तिक शुक्ल प्रतिपदा से आरम्भ होते हैं। कुछ भागों जैसे बंगाल, मिथिला, कश्मीर आदि क्षेत्रों के अलावे सम्प्रदाय विशेष (वैष्णव, स्मार्त आदि) के अलग-अलग पञ्चाङ्गों के होने कारण कही-कहीं यह व्यवस्था भी बन जाती है कि एक ही पर्व-त्यौहार दो विभिन्न दिनों में मनाई जाती है।

कलियुग में संवत् की गणना विभिन्न व्यक्तिविशेष के द्वारा चलाये गये यानि उनके राज्याभिषेक के दिन से आरम्भ की जाती थी। इनमें मुख्यतः इन्द्रप्रस्थ के राजा युधिष्ठिर, उज्जैन के विक्रमादित्य, नर्मदा के दक्षिण में शालिवाहन, भविष्य में विजयाभिनन्दन, नागार्जुन एवं कल्कि इन छः व्यक्तियों के नाम आते हैं। कहीं कहीं संवत् के स्थान पर शासनवर्ष ही प्रयुक्त होते थे। प्राचीनकाल में कलियुग के आरम्भ के विषय में विभिन्न मत व्यवहृत रहे हैं।

1. आधुनिक मत में कलियुग ई० पू० 3102 में आरम्भ हुआ।
2. पाण्डवपुत्र युधिष्ठिर जब सिंहासनारोहण किया,
3. जब युधिष्ठिर के पौत्र परीक्षित् को राजा बनाया गया।
4. वराहमिहिर के अनुसार युधिष्ठिर संवत् का आरम्भ शक संवत् के 2426 वर्ष पहले हुआ अर्थात् एक दूसरे मत के अनुसार कलियुग के 656 वर्षों के बाद।

कलियुग संवत् के विषय में आर्यभट्ट का कहना है कि जब ये 23 वर्ष के थे तब कलियुग के 3600 वर्ष बीत चुके थे (अर्थात् ये 476 ई० में उत्पन्न हुए थे)। एक चोल वृतान्त का लेखन[7] कलियुग संवत् 4044 (943 ई०) का है। जहाँ बहुत से शिलालेखों में उल्लिखित

7. जर्नल आफ दि रायल एशियाटिक सोसायटी, लन्दन (जे० आर० ए० एस०-1911, पृष्ठ-689-694)

कलियुग-संवत् का विवेचन मिलता है। मध्यकालीन भारतीय ज्योतिषों ने माना है कि कलियुग एवं कल्प के आरम्भ में सभी ग्रह (सूर्य एवं चन्द्र समेत) चैत्र शुक्ल प्रतिपदा को रविवार को सूर्योदय के समय एक साथ एकत्रित थे।

**लंकानगर्यामुदयाच्च भानो-**
**स्तस्यैव वारे प्रथमं बभूव।**
**मधोः सितादेर्दिनमासवर्ष-**
**युगादिकानां युगपत् प्रवृतिः॥[8]**
**चैत्रसितादेरुदयाद् भानोर्दिनमासवर्षयुगकल्पाः।**
**सृष्ट्यादौ लङ्कायां समं प्रवृता दिनेऽर्कस्य॥[9]**

कहीं कहीं विक्रम संवत् के स्थान पर इसके पूर्व 'कृत' शब्द भी व्यवहृत हुआ करता था-ऐसा भी सन्दर्भ मिलता है जैसे नन्द-यूप शिलालेख में 282 कृतवर्ष, विजयगढ़ स्तम्भ अभिलेख में 428 कृतवर्ष, मन्दसौर में 462 तथा गदाधर में 480। कुछ शिलालेखों में मालव-गण का संवत् उल्लिखित है जैसे नरवर्मा का मन्दसौर-शिलालेख। कृत और मालव एक ही कहे गये हैं-इनका प्रयोग पूर्वी राजस्थान एवं पश्चिमी मालवा में हुआ करता था। कृत के शिलालेख तो मिलते हैं, लेकिन मालव-संवत् के शिलालेख नहीं मिलते। यह संभावना व्यक्त की जाती है कि पुरातन नाम कृत को मालवों ने आत्मसात कर लिया हो। यहाँ कृत का अर्थ कृतयुग न होकर सिद्धांत का संकेतक कहा गया। 8 वीं या 9 वीं शती में विक्रम संवत् का नाम मिलता है। चालुक्य विक्रमादित्य षष्ठ के बेडरावे शिलालेख से यह पता चलता है कि राजा ने शक संवत् के स्थान पर चालुक्य विक्रम संवत् चलाया, जिसका प्रथम वर्ष था-1076-1077 ई०। लगभग 500 वर्षों तक शक संवत् ही ज्योतिषीय गणना का आधार बना रहा। वराहमिहिर ने इसे शक-काल[10] तथा शकलेन्द्र-काल[11] कहा। विद्वानों का कहना है जब विक्रमादित्य के द्वारा शक राजा मारा गया, तब यह संवत् चला। इसके वर्ष चन्द्र-सौर गणना के लिये चैत्र से एवं सौर गणना के लिये मेष से आरम्भ हुए। एक और शिलालेख[12] का उल्लेख मिलता है जो चालुक्य वल्लभेश्वर का ही जिसकी तिथि है 465 शक संवत् (543 ई०)।

## विभिन्न संवत् जानने के सूत्र

नीचे दिये गये सूत्र के अनुसार ईसवी सन्, विक्रम संवत्, शक संवत्, फसली सन् को ज्ञात किया जा सकता है। विक्रमी संवत् का आरम्भ 57 ई०पू० हुआ इसी आधार पर वर्तमान

ईसवी सन् में (+)57 (जोड़ने से) वर्तमान विक्रम संवत् को जाना जा सकता है।
ईस्वी सन् में (-) 78 (घटाने से ) शक संवत् को जाना जा सकता है।
शक संवत् में (+) 78 (जोड़ने से) ई० सन् संवत् को जाना जा सकता है।
विक्रम संवत् में (-) 78 (घटाने से) ई० सन् संवत् को जाना जा सकता है।
विक्रम संवत् में (-)135(घटाने से) शक संवत् संवत् को जाना जा सकता है।
शक संवत् में (-) 500(घटने से ) हिजरी सन् संवत् को जाना जा सकता है।
फसली सन् में (-) 1 (घटाने से) बंगला सन् संवत् को जाना जा सकता है। आदि।

8. भास्कराचार्य : ग्रहगणित, मध्यमाधिकार, 15
9 ब्रह्मस्फुटसिद्धान्त: 1.4; धर्मशास्त्र का इतिहास, खण्ड, 4, पृ. 317-318
10 पञ्चसिद्धान्तिका-1.8; बृहत् संहिता : 13.3
11 बृहत् संहिता : 8.20-21)

इसके अतिरिक्त विभिन्न संवत् अर्थात् भारतीय और विदेशीय वर्ष के भी नाम आते हैं। भारतीय संवत् में सत्ययुग में ब्रह्म संवत्, त्रेता में वामन संवत्, परशुराम संवत् (सहस्रार्जुनवध से), श्रीरामसंवत् (रावण विजय से),द्वापर में युधिष्ठिर संवत्, श्रीकृष्ण संवत्, कलि में विक्रम, विजय, कल्कि संवत्, बौद्ध संवत्, शालिवाहन, महावीर संवत्, हर्षाब्द, फसली, बंगला आदि प्रचलित हुए। संवतों के बारे में यह बातें सामने आती है कि विभिन्न राजाओं, महाराजाओं या सम्प्रदाय विशेष के द्वारा संवत् या वर्ष का चलन था। विभिन्न धर्मों में भी विभिन्न संवत् देखने को मिलते हैं जैसे- मिस्त्री, तुर्की, ईरानी, रोमन, हिजरी, पार्थियन, पारसी, चीनी आदि। कालगणना में भारतीय संवत् सबसे प्राचीन और ज्योतिषीय गणित की दृष्टिकोण से अत्यन्त प्रामाणिक भी है। यह प्रसंग भी मिलता है कि अगर किसी राजा को नवीन संवत् चलाना हो तो दिन विशेष पर राज्य के किसी भी ऋणियों का ऋण न रहे या राजा के द्वारा चुका दिया गया हो,तभी वह अपना नया संवत्सर चला सकता है।

## विक्रम संवत्-

यह संवत् उज्जयिनी के सम्राट विक्रमादित्य का नाम से चलाया गया है। इस वर्ष विशेष का आरम्भ चैत्र शुक्ल प्रतिपदा से माना जाता है।

## शक संवत्-

यह संवत् शालिवाहन नामक राजा के द्वारा चलाया गया है। कुछ लोगों के द्वारा यह भी ज्ञापित होता है कि शक संवत् कुषाण राजा कनिष्क का चलाया हुआ है। किन्तु संवत्सर के रूप में शालिवाहनरूप 13 वीं या 14 वीं शती के एक शिलालेख में आया है। एक अनुमान के तौर पर यह कहा जाता है कि सातवाहन नाम (हर्षचरित की गाथासप्तशती के प्रणेता के रूप में वर्णित) ही शालवाहन बना और यही नाम पुनः शालिवाहन के रूप में सामने आया।[13]इसका आरम्भ 78 ई० से शुरू हुआ।

## ईसाई गणना-

इसका मूल रोमन संवत् है। यह गणना सूर्य पर आधारित है और एक वर्ष (12 महीने) में 365.1/4 दिन का वर्षचक्र चलता है। इस 1/4 (चौथाई दिन) को समायोजित करने के लिये एवं 365 दिन के साल को स्थापित करने के लिये ही हर चौथे वर्ष के फरवरी में 1 दिन बढ़ाये जाते हैं, जिससे काल-गणना को सही किया जाता है। ध्यातव्य है कि ईसाई सन् लगभग ईसामसीह के जन्मदिन से मनाया जाता है।

## सप्तर्षि संवत्-

यह संवत् कश्मीर में प्रयुक्त है, जो लौकिक संवत् के रूप में भी जाना जाता है। बृहत् संहिता[14] के अनुसार सप्तर्षि एक नक्षत्र में सौ वर्षों तक रहते हैं और जब युधिष्ठिर राज्य कर रहे थे तो वे मेष राशि में थे। संभवतः यही सौ वर्षों वाले वृतों का उद्गम है।[15]

## फसली सन्-

इस संवत् की शुरुआत मुग़ल बादशाह अकबर के ज़माने से शुरू हुई। इस संवत् का मुख्य उदेश्य कृषि एवं मालगुजारी से सम्बन्ध रखता है। इस संवत् को निकलने के लिये पहला 1 जनवरी से 31 जून तक एवं दूसरा 1 जुलाई से 31 दिसम्बर के मध्य फसली वर्ष का निर्धारण किया जाता है। जुलाई से दिसंबर में मध्य

12 काणे, पी.बी. : धर्मशास्त्र का इतिहास, खंड 4, पृ. 319
13 इसका जिक्र कैलेण्डर रिफार्म कमिटी रिपोर्ट (पृष्ठ-244-245) में आया है।
14 बृहत् संहिता : 13.3-4

फसली वर्ष निकलने के लिये इसवर्ष में 592 घटा देंगे तो उस वर्ष का फसली वर्ष ज्ञात हो जायेगा और उसी प्रकार जनवरी से जून तक का फसली वर्ष निकलने के लिये उस वर्ष में 593 घटा देंगें तो उस वर्ष का फसली वर्ष ज्ञात हो जायेगा।

## बंगला संवत्-

मीन की संक्रान्ति से बंगला चैत्र मास तथा मेष की संक्रान्ति से बैशाख मास की शुरुआत होती है। वर्षारम्भ संक्रान्ति के दूसरे दिन से पहली तारीख का मान रखा जाता है,जिसे 'पोयला बैशाख' कहा जाता है। बंगाली सन् में 515 जोड़ने से शक संवत् और 593-594 जोड़ने से ईसवी सन् जाना जाता है।

## हिजरी संवत्-

यह सन् 16 जुलाई 622 को आरम्भ हुआ। क्योंकि हजरत मुहम्मद मक्का को छोड़कर मदीना को प्रस्थान किया था, इसे ही हिजरत के नाम से जाना जाता है। हिजरत की घटना का आरम्भ काल ही हिजरी सन् कहा जाता है।

## वीर निर्वाण संवत्-

भगवान् महावीर वर्धमान के निर्वाण के रूप में 527 ई० पू०कार्तिक कृष्ण अमावस्या दीपावली के दिन हुआ। इसे महावीर संवत् के नाम से भी जाना जाता है। इस प्रकार से अनेकों संवत् देखे जा सकते हैं, इनमें से कुछेक का प्रसंग ही उपर्युक्त विवेचित है।

वर्तमान ईसवी सन् 2022-2023 में कलियुग को प्रारम्भ हुए 5,123 वर्ष बीत गये।

इसके अतिरिक्त हमारे भारतीय एवं अन्य विदेशीय संवत्सरों का मान मिलता है-

15 काणे, पी.बी. : धर्मशास्त्र का इतिहास, खंड 4, पृ. 319
16 रामराज्य, महावीर मंदिर प्रकाशन, पटना, सन्-1992.
17 उपर्युक्त में कहीं गलतियाँ हो तो पाठक इसको सुधार लें।

## भारतीय संवत् वर्तमान वर्ष (लगभग)

| | |
|---|---|
| कल्पाब्द-सृष्टिसंवत्- | 1,97,29,49,123 |
| [16]श्रीराम-संवत्- | 1,81,50,135 |
| श्रीकृष्ण-संवत्- | 5,249 |
| बलराम-संवत्- | 5,258 |
| युधिष्ठिर-संवत्- | 5,123 |
| कलियुग-संवत्- | 5,123 |
| बौद्ध-संवत्- | 2,597 |
| वीर निर्वाण-(महावीर संवत्)- | 2,549 |
| श्रीशंकराचार्य-संवत्- | 2,302 |
| विक्रम-संवत्- | 2,079 |
| ईसवी-सन्- | 2,023 |
| शालिवाहन-संवत्- | 1,944 |
| कलचुरी-संवत्- | 1,774 |
| बल्लभी-संवत्- | 1,702 |
| बांगला-संवत्- | 1,429 |
| हर्षाब्द- | 1,415 |
| फसली- | 1,430 |

## विदेशीय

| | |
|---|---|
| चीनी सन्- | 9,60,02,320 |
| पारसी सन्- | 1,89,990 |
| मिश्री सन्- | 27,676 |
| तुर्की सन्- | 7,629 |
| आदम सन्- | 7366, 7,373 |
| ईरानीसन् - | 6,027 |
| यहूदी सन्- | 5,783 |
| इब्राहीम सन्- | 4,462 |
| मूसा सन्- | 3,726 |
| यूनानी सन्- | 3,595 |
| रोमन सन्- | 2,773 |
| बर्मा सन्- | 2,564, |
| मलयकेतु- | 2,334 |
| पार्थियन- | 2,269 |
| जावा सन्- | 1,948 |
| नेपालीसन्- | 1,143 |
| हिजरीसन्- | 1,444[17] |

## काल परिमाण / युगों के मान

संकल्पादि में -'**ॐ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य** आदि कहने के बाद **अमुक संवत्सरे, अमुक मासे, अमुक पक्षे, अमुक तिथौ, अमुक वासरे..**' कहा जाता है। इसका अर्थ कितना बृहत् है, इसकी समीक्षा हम सब नहीं करते, मात्र बोलकर काम चला लेते हैं। इसे भी देखना आवश्यक है।

कलियुग से दुगुना द्वापरयुग, तिगुना त्रेतायुग तथा चौगुना सत्ययुग होता है। कलियुग के क्षीण होने पर पुनः सत्ययुग का आरम्भ हो जाता है। एक हजार चतुर्युग बीतने पर ब्रह्मा का एक दिन (4,32,00,00,000 मानववर्ष) होता है। जब हमारा एक वर्ष होता है तब देवों का एक अहोरात्र होता है। इसप्रकार देव या दिव्य वर्ष में 360 अंकों से गुणा करने पर मानुषवर्ष बनता है। यह सारा जगत् ब्रह्मा के दिनभर रहता है, दिन समाप्त होते ही संसार नष्ट हो जाता है इसे ही विश्व का प्रलय कहते हैं।

| **युग** | **देववर्ष** | **मानुष वर्ष** |
|---|---|---|
| कलियुग | 1,200 | 4,32,000 |
| द्वापरयुग | 2,400 | 8,64,000 |
| त्रेतायुग | 3,600 | 12,96,000 |
| सत्ययुग | 4,800 | 17,28,000 |
| कुल | 12,000 | 43,20,000 |

| कालगणना | सौरमान | देवमान या दिव्यवर्ष |
|---|---|---|
| एक चतुर्युग (महायुग) | 43,20,000 | 12,000 |
| इकहत्तर चतुर्युगी | 30,67,20,000 | 8,52,000 |
| कल्पसन्धि | 17,28,000 | 4,800 |
| मन्वन्तर की चौदह संध्याएँ | 2,41,92,000 | 67,200 |
| सन्धि सहित एक मन्वन्तर | 30,84,48,000 | 8,56,800 |
| चौदह सन्ध्याओं सहित चौदह मन्वन्तर | 4,31,82,72,000 | 1,19,96,200 |
| 14 मन्वन्तर=1 कल्प | 4,32,00,00,000 | 1,20,00,000 |
| ब्रह्मा का दिन | 4,32,00,00,000 | मानुषी वर्ष |
| ब्रह्मा की रात्रि | 4,32,00,00,000 | ,, |
| दिन-रात्रि का योग | 8,64,00,00,000 | ,, |
| ब्रह्मा का एक दिन-रात/मास एक ब्राह्म वर्ष | 8,64,00,00,000×30<br>2,59,20,00,00,000× 12 | 2,59,20,00,00,000.<br>31,10.40,00,00,000 |

मन्वन्तर (काल-गणना) को समझने के लिये इस गणना का सहयोग लेना आवश्यक है-

| | |
|---|---|
| मनुष्य का 1 मास = | पितर का 1 दिन-रात |
| मनुष्य का 1 वर्ष = | देवता का 1 दिन-रात |
| मनुष्य के 30 वर्ष = | देवता का 1 मास |
| मनुष्य के 360 वर्ष = | देवता का 1 वर्ष (दिव्य वर्ष) |
| 4,32,000 मानव वर्ष= | 1,200 दिव्य वर्ष = 1 कलि युग |
| 8,64,000 मानव वर्ष= | 2,400 दिव्य वर्ष =1 द्वापर युग |
| 12,96,000 मानववर्ष = | 3,600 दिव्य वर्ष =1 त्रेता युग |
| 17,28,000 मानव वर्ष= | 4,800 दिव्य वर्ष =1 सत्य युग |

————————————————————————

योग= 43,20,000 मानववर्ष = 12,000 दिव्य वर्ष = एक महायुग या चतुर्युगी

ऐसे 71 युगों का 1 मन्वन्तर (1 मनु का जीवनकाल) होता है, जिसका मान 30,67,20,000 मानववर्ष होता है। प्रत्येक मन्वन्तर के अन्त में सत्ययुग के वर्षों के बराबर अर्थात् 17,28,000 वर्षों की संध्या होती हैं। एक मन्वन्तर के मान =30,67,20,000 वर्ष में सन्ध्या का मान= 17,28,000 वर्ष का योग करने पर 30,84,48,000वर्ष होता है। जो सन्धि सहित एक मन्वन्तर के मानववर्ष हैं। ऐसे जब 14 मन्वन्तर बीत जाते हैं, तब एक कल्प होता है और यही कल्प ब्रह्माजी के एक दिन के बराबर होता है। सभी चौदह मन्वन्तर अपनी-अपनी संध्याओं के मान के सहित होते हैं।

ब्रह्मा की परमायु इस ब्राह्मवर्ष के मान से एक सौ वर्ष है-जिसे 'पर' कहा जाता है। इस समय ब्रह्माजी अपनी आयु का आधा भाग अर्थात् एक परार्ध (50 वर्ष) व्यतीत कर दूसरे परार्ध में चल रहे हैं। यह इनके 51 वर्ष का प्रथम दिन या 'कल्प' कहा जाता है। दोनों परार्धों के आदि और अन्त में ब्राह्म और पाद्म नामक विशेष दो कल्प होते हैं। ब्रह्मा के प्रथम परार्ध में कल्पों की गणना रथन्तर कल्प से होती है तथा ब्रह्मा का द्वितीय परार्ध श्वेतवाराह कल्प कहलाता है। इसलिये वर्तमान कल्प का नाम **'श्वेतवाराह कल्प'** है। यह द्वितीय परार्ध का प्रथम कल्प है। इस कल्प में चौदह मन्वन्तरों में 6 मन्वन्तर (स्वायम्भुव, स्वरोचिष, औत्तम, तामस, रैवत और चाक्षुष- 14 मनुओं में से) बीत चुके हैं। वर्तमान में सप्तम 'वैवस्वत मन्वन्तर' के 27 चतुर्युग (महायुग) व्यतीत हो चुके हैं और 28 महायुग के सत्य, त्रेता, द्वापर बीतकर 28 वाँ कलियुग चल रहा है। सातवें मनु- वैवस्वत मन्वन्तर के बाद सात और मनु (सूर्यसावर्णि, दक्षसावर्णि, ब्रह्मसावर्णि, धर्मसावर्णि रूद्रसावर्णि, देवसावर्णि और इन्द्रसावर्णि) होंगे। उपरोक्त काल-गणना का महत्व प्रत्येक धर्म-कर्मादि के अनुष्ठानों में देखा जा सकता है, जैसे- हम किसी संकल्प को लेते समय उपर्युक्त काल-गणना का स्मरण, उच्चारण करते हैं। सर्वप्रथम प्रणवाक्षर के साथ भगवान् विष्णु का तीन बार उच्चारण करते हुए ब्रह्माण्ड के चतुर्दश भुवनों, सप्तद्वीपों, खण्ड, वर्ष आदि के साथ ब्रह्मा के परार्ध, कल्प, मन्वन्तर, युगादि, संवत्सर, अयन, ऋतु, मास, पक्ष, तिथि, वार, लग्नादि का भी उच्चारण किया जाता है, यथा-**'ॐ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य विष्णोराज्ञया प्रर्वतमानस्य ब्राह्मणोऽह्नि द्वितीय परार्धे श्रीश्वेत वाराहकल्पे वैवस्वत मन्वन्तरे अष्टाविंशतितमे कलियुगे कलिप्रथम चरणे बौद्धावतारे जम्बूद्वीपे भरतखण्डे आर्यावर्तैक देशान्तरगते भारतवर्षे पुण्यक्षेत्रे अमुक ग्रामे/नगरे, अमुक स्थाने, अमुक संवत्सरे, अमुक मासे, अमुक पक्षे, अमुक तिथौ, अमुक**

वासरे.....।'

उपर्युक्त गणना के आधार पर भुक्तकल्प के वर्षों की विवरणी एवं पृथ्वी की आयु ज्ञात की जा सकती है, जो वैज्ञानिक गणना से लगभग मेल खाती है।

(विक्रमी सम्वत्-2079 (राक्षस / नल नामाब्द), कलियुग के भुक्त वर्ष -5123, सन्-2022-2023)

गत छः मन्वन्तरों के वर्ष---------- = 1,84,03,20,000

(1 मन्वन्तर =30,67,20,000× 6 मन्वन्तरों के वर्ष)

इनकी 7 सन्धियों के वर्ष---------- = 1,20,96,000

(1 कल्पसन्धि=17,28,000×7)

सातवें मन्वन्तर के गत 27 चतुर्युगी के वर्ष ---------- = 11,66,40,000

(27 चतुर्युगी का मान=4,32,000×27)

28 त्रियुगी के भुक्तवर्ष* ---------- = 38,88,000

*सतयुग- 17,28,000।

*त्रेतायुग- 12,96,000। *तीनों के कुलयोग=

*द्वापर युग- 8,64,000।

28 कलि का भुक्त वर्ष---------- = 5,123

कुलयोग = 1,97,29,49,123

---

एक अरब, सत्तानवे करोड़, उनतीस लाख, उनचास हजार, एक सौ तेईस, (आधार ग्रन्थ-पु० वि०-पृ०-300)। - भुक्तकल्प के वर्ष)

सत्ययुग में परमेश्वर का वर्ण श्वेत होता है, त्रेता में पीला, द्वापर में लाल एवं कलियुग में कृष्णवर्ण का होता है। (वनपर्व-189/32,33)। कलिकाल में तीन हिस्सा अधर्म एवं एक हिस्सा धर्म रहता है। कलियुग के अन्त के समय काल की प्रेरणा से शम्भल नामक ग्राम में विष्णुयश नाम के ब्राह्मण के घर में एक अतिबलशाली, पराक्रमी बालक उत्पन्न होगा, जिसका नाम 'कल्कि विष्णुयशा' रखा जायेगा। यह दुष्टों के संहारक एवं सत्ययुग प्रवर्तक होंगे। धर्म के अनुसार विजय प्राप्त कर चक्रवर्तीराजा कहलायेगें एवं सम्पूर्ण जगत् को आनन्द पहुँचायेंगे। युगान्त के बाद जब सूर्य, चन्द्र और बृहस्पति एक ही राशि (कर्क) में, एक ही नक्षत्र (पुष्य-नक्षत्र) पर एकत्र होंगे, तब सत्ययुग का आरम्भ होगा। फिर तो मेघ समय पर वर्षा करेंगे, नक्षत्रों में तेज होगा, ग्रहों की गति अनुकूल होगी, सबका मंगल होगा तथा सुभिक्षा और आरोग्य का विस्तार होगा। (वनपर्व-190/89-91 )।

## संवत्सर कितने

कालगणना में संवत्सर का महत्वपूर्ण स्थान है। ज्योतिषीय गणना में संवत्सर के नाम एवं क्रम निर्धारित हैं। संवत्सर 60 होते हैं, जो अन्तिम संवत्सर के बाद पुनः प्रथम संवत्सर से शुरू हो जाते हैं। विष्णुधर्मोत्तर (1/82/8) के अनुसार षष्ट्-यब्द वृत्त वाले प्रभव नामाब्द प्रथम संवत्सर का आरम्भ माघशुक्ल से हुआ, जब सूर्य और चन्द्र घनिष्ठा नक्षत्र में थे और बृहस्पति से उनका योग था। बृ०सं०(4/27-52) में षष्ट्-यब्द के विभव से लेकर 60 वें अक्षय तक के

| | | | | | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| 1 | प्रभव, | 13 | प्रमाथी, | 25 | खर, | 37 | शोभन, | 49 | राक्षस, |
| 2 | विभव, | 14 | विक्रम, | 26 | नन्दन, | 38 | क्रोधी, | 50 | नल, |
| 3 | शुक्ल, | 15 | विषु, | 27 | विजय, | 39 | विश्वावसु, | 51 | पिंगल, |
| 4 | प्रमोद, | 16 | चित्रभानु, | 28 | जय, | 40 | पराभव, | 52 | काल, |
| 5 | प्रजापति, | 17 | स्वभानु, | 29 | मन्मथ, | 41 | प्लवंग, | 53 | सिद्धार्थ, |
| 6 | अंगिरा, | 18 | तारण, | 30 | दुर्मुख, | 42 | कीलक, | 54 | रौद्रि, |
| 7 | श्रीमुख, | 19 | पार्थिव, | 31 | हेमलम्ब, | 43 | सौम्य, | 55 | दुर्मति, |
| 8 | भाव, | 20 | व्यय, | 32 | विलम्ब, | 44 | साधारण, | 56 | दुन्दुभि, |
| 9 | युवा, | 21 | सर्वजित्, | 33 | विकारी, | 45 | विरोधकृत्, | 57 | रुधिरोद्गारी, |
| 10 | धाता, | 22 | सर्वधारी, | 34 | शर्वरी, | 46 | परिधावी, | 58 | रक्ताक्ष, |
| 11 | ईश्वर, | 23 | विरोधी, | 35 | प्लव, | 47 | प्रमादी, | 59 | क्रोधन |
| 12 | बहुधान्य, | 24 | विकृति, | 36 | शुभकृत्, | 48 | आनन्द, | 60 | अक्षय। |

फलों का विवरण है। षष्ट्-यब्द के प्रत्येक वर्ष विशेष के नाम के साथ संवत्सर भी जुड़ा होता है। यह क्रम अखण्डित है, जिनके नाम इस प्रकार से हैं-

इसप्रकार सृष्टि निर्माण से लेकर आजतक संवत्सर को योगदान अखण्डरूप से चल रहा है और चलेगा।

***

## कालो ह्ययं निरवधिर्विपुला च पृथ्वी।

काल अन्तहीन है! पृथ्वी भी बहुत बड़ी है। यह भवभूति कृत उत्तररामचरित की पंक्ति है। इसमें कवि कहते हैं कि जो लोग मेरी बात नहीं मानते हैं, वे स्वयं बहुत कुछ जानते हैं, अतः ऐसे अहम्मन्य लोगों के लिये मैं यह उत्तररामचरित नाटक नहीं लिख रहा हूँ। किन्तु मेरा विश्वास है कि कभी न कभी मेरी तरह सोचनेवाला अवश्य उत्पन्न होगा, क्योंकि समय अंतहीन है, तथा यह पृथ्वी भी बहुत बड़ी है।

# विश्व इतिहास का प्रारम्भिक कालक्रम-जेम्स उशर की कपोल-कल्पना

**श्री गुंजन अग्रवाल**
वरिष्ठ पत्रकार एवं इतिहासविद्
शोध सहायक, महामना मालवीय मिशन
मालवीय स्मृति भवन, 52-53,
दीनदयाल उपाध्याय मार्ग, नई दिल्ली-110002

**अक्सर हम कहते हैं कि यूरोपीयन विद्वानों ने भारतीय इतिहास के लेखन में कालगणना में भ्रान्ति फैलायी। हमारे 10,000 वर्ष के इतिहास को 2.5 हजार वर्षों में सिमट कर रख दिया। आखिर यह किस सिद्धान्त को अपनाने के कारण हुआ? वस्तुतः भारत में ऋग्वेद, गौतम बुद्ध और ईसा का जन्म इन तीनों युगों ( Epoch) के आधार पर यूरोपीय विद्वानों ने कालगणनाएँ की, जिनमें ईसा के जन्म के युग को श्रेष्ठ दिखाने के चक्कर में हमारे सारे भारतीय युगों को या तो पुरा-कथाएँ कहने की स्थिति आ गयी या उन्हें ईसा के जन्म के युग से नजदीक रखकर सारी गणनाएँ की गयी। इसके पीछे का आधार था-जेम्श उशर की परिकल्पना, जिन्होंने भारतीय इतिहास को पढ़े बिना इसके युगों का निर्धारण कर दिया था। इसी कपोल-कल्पना का विवरण यहाँ दिया जा रहा है।**

सन् 1654 ई. में आयरलैण्ड के एंग्लिकन आर्कबिशप और ट्रिनिटी कॉलेज (डबलिन) के प्राध्यापक सह कुलपति जेम्स उशर (James Ussher : 1581-1656) ने बाइबल के 'ओल्ड टेस्टामेंट' (Old Testament) का विश्लेषण करने के पश्चात् यूरोप में प्रथम बार सृष्ट्युत्पत्ति से लेकर ईसा मसीह तक की प्रमुख घटनाओं की समयावली (Chronology) तैयार की, जिसके अनुसार पृथिवी की उत्पत्ति 23 अक्टूबर, 4004 ई.पू. को हुई थी। लैटिन भाषा में लिखी उशर की पुस्तक 'Annales Veteris Testamenti, A Prima Mundi Origine Deducati' के नाम से प्रसिद्ध है। अंग्रेजी में यह पुस्तक 'Annals of the Old Testament, from the Beginning of the World' नाम से अनूदित हुई है।

यह तिथ्यांकन साधारणतः 'उशर-लाइटफुट-कालक्रम' के नाम से प्रचलित है, क्योंकि कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय के उपकुलपति डॉ. जॉन लाइटफुट (Dr. John Lightfoot : 1602-1675), जो अपने समय के प्रसिद्ध हिब्रू-विद्वान् थे, ने 'ओल्ड टेस्टामेंट' के विशेषाध्ययन के पश्चात् जेम्स उशर से भी पूर्व सन् 1642-'44 ई. में 'The Harmony of the Four Evangelists, among themselves, and with the Old Testament' नामक एक पुस्तक प्रकाशित की, जिसके अनुसार 'पृथिवी का जन्म निस्सन्देह 1 मार्च अथवा 12 सितम्बर, 3626 ई. पू. को हुआ था।[1]

1 The Whole Works of the Rev. John Lightfoot', D. D., Vol. VII, p.372.

जेम्स उशर ने अपने ग्रन्थ 'Annals of the Old Testament, from the Beginning of the World' में विश्व इतिहास की महत्त्वपूर्ण घटनाओं की तालिका इस प्रकार दी है :

- 4004 ई.पू.- सृष्टि की उत्पत्ति
- 2348 ई.पू.- नोह का जलप्लावन
- 1921 ई.पू.- ईश्वर के द्वारा अब्राहम का आह्वान
- 1491 ई.पू.- मिस्र से पलायन
- 1012 ई.पू.- जेरुसलम में मन्दिर की स्थापना
- 586 ई.पू.- बेबीलोन के द्वारा जेरुशलम का विनाश बेबीलोनी बंदीगृह का आरम्भ
- 5 ई.पू.- जीसस का जन्म

उशर के उपर्युक्त विचित्र काल-निर्णय को, जिसके अनुसार पृथ्वी की उत्पत्ति 23 अक्टूबर, 4004 ई. पू., रविवार को सुबह 6 बजे एवं नूह की महान् जलप्रलय की घटना 5 मई, 2348 ई. पू., बुधवार को हुई, 17वीं शताब्दी के अन्त से यूरोप के लोगों द्वारा स्वीकार कर लिया गया और वे यह विश्वास करने लगे कि आदम की उत्पत्ति ईसा से 4004 वर्ष पूर्व हुई थी।

फलतः आधुनिक यहूदियों एवं कट्टरपंथी ईसाइयों की बहुत बड़ी संख्या, विशेषकर संस्कृत-अध्यापकों के लिए यह मानना बड़ा कठिन हो गया कि कोई जाति या सभ्यता (विशेषकर हिंदू) उनलोगों के द्वारा माने गए आदम के काल से भी प्राचीन हो सकती है। फलस्वरूप विश्व और भारतीय इतिहास के बड़े-बड़े ग्रन्थ हसी कल्पना के आधार पर रचे गए कि पृथिवी की उत्पत्ति 4004 ई.पू. में हुई।

यद्यपि वैज्ञानिक-जगत् में पृथ्वी की आयु साढ़े चार अरब वर्ष मान ली गई है, तथापि यूरोपीय और भारतीय इतिहासकार अभी तक 4004 ई. पू. के चक्रव्यूह से बाहर नहीं निकल पाए हैं। आज भारतीय इतिहास में जितनी विसंगतियाँ व्याप्त हैं और तिथि निर्धारण में जितनी भूलें हुई हैं, उन सबका कारण, भले ही आधुनिक इतिहासकार इसे न स्वीकारें, निःसन्देह जेम्स उशर द्वारा निकाली गई 4004 ई. पू. वाली पृथिवी की तिथि है।[2]

## भारतीय इतिहास का कालक्रम यूरोपीय प्राच्यविदों का सुनियोजित षड्यन्त्रः

एशियाटिक सोसायटी के संस्थापक एवं विश्वप्रसिद्ध प्राच्यविद् सर विलियम जोन्स (Sir William Jones : 1746-1794) ने पुराणों की मगध-राजवंशावली एवं उनके पौराणिक कालक्रम को (जो हमने इस शोध-प्रबन्ध में निर्धारित किया है) एक समय अवश्य ही स्वीकार कर लिया था[3], किन्तु बाद में उसने अपनी साम्राज्यवादी सोच के तहत विचार किया कि भारतीय पौराणिक कालक्रम को स्वीकार करना भयंकर भूल होगी, क्योंकि इससे हिंदू सभ्यता विश्व में सर्वाधिक प्राचीन और श्रेष्ठ सिद्ध हो सकती है। अतएव उसने भारतीय इतिहास को सेमेटिक इतिहास के बराबर दिखलाने के लिए जेम्स उशर की पुस्तक के आधार पर एक वैकल्पिक कालक्रम तैयार किया और इस तरह भारतीय इतिहास की प्राचीनता पर सदा-सदा के लिए प्रश्न चिह्न लगा दिया। जोन्स ने अपनी पुस्तक में उशर द्वारा निर्धारित कालक्रम के आधार पर ईसाई और भारतीय घटनाक्रमों की समयावली इस प्रकार दी है-

2 'भगवान् बुद्ध और उनकी इतिहास - सम्मत तिथि, पृ. 78

3 'The Works Of Sir William Jones With Life Of The Author', By Lord Teignmouth, Volume Iv, Pp.37-40, Printed For John Stockdale, Piccadelly; And John Walker, Paternoster Row, 1807.

A

## CHRONOLOGICAL TABLE,

ACCORDING TO

*One of the* HYPOTHESES *intimated in the preceding Tract.*

| CHRISTIAN *and* MUSELMAN. | HINDU. | *Years from* 1788 *of our era.* |
|---|---|---|
| ADAM, | MENU I. Age I. | 5794 |
| NOAH, | MENU II. | 4737 |
| Deluge, | | 4138 |
| *Nimrod*, | *Hiranyacaſipu*. Age II. | 4006 |
| *Bel*, | *Bali*, | 3892 |
| RAMA, | RAMA. Age III. | 3817 |
| *Noah's* death, | | 3787 |
| | *Pradyóta*, | 2817 |
| | BUDDHA. Age IV. | 2815 |
| | *Nanda*, | 2487 |
| | *Balin*, | 1937 |
| | *Vicramáditya*, | 1844 |
| | *Dévapála*, | 1811 |
| CHRIST, | | 1787 |
| | *Nárâyanpála*, | 1721 |
| | *Saca*, | 1709 |
| *Walìd*, | | 1080 |
| *Mahmùd*, | | 786 |
| *Chengiz*, | | 548 |
| *Taimùr*, | | 391 |
| *Babur*, | | 276 |
| *Nádirſhàh*, | | 49 |

"The Works of Sir William Jones, Vol. 4 of 13: With the Life of the Author", London, 1807. p. 47.

उपर्युक्त तालिका सर विलियम जोन्स की पुस्तक पर प्रकाशित है। विलियम जोन्स प्रथम ब्रिटिश-प्राच्यविद् था, जिसने यूनानी-स्रोतों से प्राप्त सिकन्दर के भारत पर आक्रमण की तिथि को 'भारतीय कालक्रम का मूलाधार' मानकर सिकन्दर और चन्द्रगुप्त मौर्य की समकालिकता का सुझाव दिया था। इस पर मुहर लगाई प्रख्यात जर्मन-प्राच्यविद् फ्रेडरिक मैक्समूलर (Friedrich Max Müller : 1823-1900) ने।

प्रख्यात इतिहास संशोधक डॉ. देवसहाय त्रिवेद ने लिखा है- 'अन्ततोगत्वा मैक्समूलर को स्वीकार करना पड़ा कि यह कथित समकालिकता भारतीय, चीनी तथा अन्य प्रमाणों के प्रतिकूल पड़ती है; किन्तु भारतीय इतिहास, यूरोपीय इतिहास से किसी अन्य उपाय या समता से मेल नहीं खाता। अतः इस समकालिकता को अवश्य ही निर्णीत और अन्तिम मानना होगा, भले ही इसके मानने में कठिनाइयाँ हों।[4]

मैक्समूलर को भारतीय वेदादि शास्त्रों, आर्ष इतिहास, पुराण, धर्मशास्त्रादि की अपौरुषेयता तथा प्राचीनता बहुत खटकती थी, अतः अपनी इष्ट-सिद्धि के लिए उसने सन्

4 'परिषद् पत्रिका', बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्, अप्रैल 1668, पृ0 27

1856 ई. में प्रकाशित अपने ग्रन्थ 'A History of Ancient Sanskrit Literature So Far As It Illustrates the Primitive Religion of the Brahmans[5] में वेदों का कालक्रम 1200-1000 ई.पू. के मध्य निर्धारित किया। दुर्भाग्यवश हम मनमाने कालक्रम को अधिकांश पश्चिमी और उनसे प्रेरित भारतीय विद्वानों ने 'अन्तिम निर्णय' जैसी मान्यता दी। मैक्समूलर की मृत्यु के 20 वर्ष बाद हड़प्पा-मोहनजोदड़ों के उत्खनन होने पर मैक्समूलर के कालक्रम में थोड़ा-सा संशोधन करते हुए ऋग्वेद को 1500-1200 ई.पू. के मध्य रचित मान लिया गया। आधुनिक भारत में यही मान्यता बहुमत से मान ली गई है।

कहते हैं कि किसी देश, धर्म और संस्कृति को ख़त्म करना हो तो उसके इतिहास पर सवाल खड़े करो, फिर तर्क द्वारा इतिहास को भ्रमित करो- बस तुम्हारा काम ख़त्म! फिर उसे ख़त्म करने का काम तो उस देश, धर्म और संस्कृति के लोग खुद ही कर लेंगे। अंग्रेज इस देश और यहाँ के धर्म और इतिहास को इस कदर भ्रमित करके चले गए कि अब उनके कार्य की कमान धर्मांतरित अल्पसंख्यकों, राजनीतिज्ञों और तथाकथित बुद्धिजीवियों ने सँभाल ली है।

तभी तो यह बात विचारणीय है कि हम संसार के सबसे पुरातन राष्ट्र होने का दम्भ तो भरते हैं, किन्तु इतिहास के नाम पर हमें मात्र तीन-चार हज़ार वर्षों का ही इतिहास पढ़ाया जाता है। हम हड़प्पा की सभ्यता से ही प्रारम्भ माने जाते हैं। फिर आर्यों के बाद हमें सीधे बुद्धकाल पर फेंक दिया जाता है। बीच की कड़ी राम और कृष्ण जैसे अनेकानेक चरित्र राजनैतिक और साम्राज्यवादी षड्यन्त्र के तहत 'मिथक' मान लिए गए हैं।

"दुर्भाग्यवश हम मनमाने कालक्रम को अधिकांश पश्चिमी और उनसे प्रेरित भारतीय विद्वानों ने 'अन्तिम निर्णय' जैसी मान्यता दी। मैक्समूलर की मृत्यु के 20 वर्ष बाद हड़प्पा-मोहनजोदड़ों के उत्खनन होने पर मैक्समूलर के कालक्रम में थोड़ा-सा संशोधन करते हुए ऋग्वेद को 1500-1200 ई0पू0 के मध्य रचित मान लिया गया। आधुनिक भारत में यही मान्यता बहुमत से मान ली गई है।"

## परम्परागत भारतीय कालक्रम नानापुराण-निगमागमसम्मत :

पुराणों में प्राप्त भारतीय इतिहास की समयावली (Chronology) से यह सिद्ध है कि भारतवर्ष का इतिहास कुछ शताब्दियों, सहस्राब्दियों का नहीं, बल्कि करोड़ों वर्षों का है। यह कितना प्राचीन है, यह 'विज्ञान' पत्रिका के पूर्व संपादक स्व. (प्रो.) रामदास गौड़ (1881-1937) के शब्दों में जानना उचित है-

'भारतवर्ष का इतिहास इतना प्राचीन है कि यदि आदिकाल से आजतक का इतिहास अत्यन्त संक्षेप में

5 Williams And Norgate, U, Henrietta Street, Covent Garden, London; And 20, South Frederick Street, Edinburgh. Paris: B. Duprat. Leipzig: R. Hartmann. 1859.

लिखा जाता और 100-100 वर्षों के लिये केवल 1 पृष्ठ लिखा जाता तो 1,66,86,431 पृष्ठ होते। यदि 1,000 पृष्ठों की एक जिल्द होती तो 26,608 मोटी-मोटी जिल्हें होतीं। यदि एक पृष्ठ में 25 पंक्ति ही मान लें और यह भी मान लें कि कोई 1 मिनट में 1 पृष्ठ पढ़ लेगा और 5 घंटे रोज पढ़ना मान लें तथा यह भी मान लें कि महीने में 25 दिन पढ़ना ही होगा तो पूरे ग्रन्थ को पढ़ने में 217 वर्ष लगेंगे..... [6]

आज आवश्यकता है कि (राष्ट्रीय अस्मिता की रक्षा के लिए) भारतीय पुरातत्त्ववेत्ता और इतिहासविद् भारतीय आर्ष ग्रन्थों का अध्ययन करें, जिनमें सृष्ट्युत्पत्ति से लेकर कलियुग तक का इतिहास कालगणना के साथ विस्तार से वर्णित है। इस शोध प्रबन्ध में हमने इस इतिहास का संकेत मात्र ही किया है। सत्यान्वेषी अध्ययनशील इतिहासकार यदि पूर्वाग्रह-रहित होकर विषय का चिन्तन करेंगे, तो उन्हें भारतीय वाङ्मय, ऋषि प्रणालियों और कालगणना की शैली पर आश्चर्य होगा। इतना सार्वकालिक, सार्वभौमिक, जिसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती। फिर जो पाश्चात्य-प्रणालियों पर आधारित कल्पित, अनुमानित पुरातात्त्विक कालक्रम है, उसका क्या आधार?

भारतीय व वाङ्मय का अध्ययन किए बिना पाश्चात्यों और मार्क्सवादियों की छमता का न तो उद्घाटन हो सकता है, और न उनके द्वारा निर्धारित त्रुटिपूर्ण कालक्रम तथा भ्रामक ऐतिहासिकता का सफाया ही हो सकता है। दुर्भाग्यवश आज प्रायः सभी इतिहासकार, पुरातत्त्ववेत्ता, भूवैज्ञानिक और साहित्यकार पश्चिम द्वारा स्थापित भारतीय कालक्रम को ही मान्यता देते हैं और आर्ष ग्रन्थों को पढ़ने की उनके पास फुर्सत नहीं है। भारतीय पुरातत्त्ववेत्ता किसी भी प्राचीन सामग्री का काल-निर्धारण करते समय जाने-अनजाने इसी यूरोपीय कालक्रम का ध्यान रखते हैं और इसीलिए उन्होंने पुरातत्त्वशास्त्र को भी यूरोपीय कालक्रम के अनुकूल रखा है, ताकि सामग्रियाँ अधिक प्राचीन सिद्ध न हो सकें। यही कारण है कि उनके द्वारा निर्धारित तिथियों और आर्ष ग्रन्थों में प्राप्त तिथियों में आकाश-पाताल का अन्तर है। आर्ष ग्रन्थों में प्राप्त तिथियाँ विरोधाभासों से रहित, शुद्ध इतिहास और खगोलीय गणना पर आधारित हैं, जबकि पाश्चात्य तिथियाँ बाइबिल पर।

यह इस अभागे देश की विवशता है कि यहाँ भारतीय तत्त्वज्ञान और उसके विश्वगुरुत्व का मखौल उड़ानेवाली 'अद्भुत भारत' जैसी कृतियाँ भारत-सरकार द्वारा पुरस्कृत होती हैं और भारतीय ज्ञान-गरिमा का शंखनाद करनेवाली कृतियाँ उपेक्षा की गर्त में डाल दी जाती हैं।

यदि हम भारतवासी इन मिथ्याभिलाषी इतिहासकारों, पुरातत्त्ववेत्ताओं, संस्कृतज्ञों, प्राच्यविदों और साहित्यकारों के नापाक मनसूबों को ध्वस्त न कर सकें; इनके त्रुटिपूर्ण और भ्रामक तथ्यों का उद्घाटन न कर सकें, तो इस राष्ट्र के साथ घोर अन्याय होगा। हमारे वाङ्मय राष्ट्र की आत्मा हैं। राष्ट्र की ऐतिहासिक समृद्धता के अक्षय कोश हैं। राष्ट्रीय एकता और अखण्डता के केन्द्र हैं। अतएव आवश्यकता है कि हम अपने यथार्थ को स्वयं जानें और भारतीय जनमानस में इसका प्रकाश करें।

***

6 'कल्याण', हिंदू-संस्कृति अंक, गीताप्रेस गोरखपुर

धर्मायण अंक संख्या 69 में प्रकाशित आलेख का पुनःप्रकाशन

# भारतीय कालगणना एवं नवसंवत्सरोत्सव

**आचार्य चन्द्र किशोर पाराशर**
सेनापति भवन, सिकन्दरपुर
मुजफ्फरपुर (बिहार

**नव संवत्सर एक उत्सव का दिवस होता है। आज 01 जनवरी को लोग काफी उत्साहित होते हैं। यद्यपि आज इस्वी सन् की गणना अंतरराष्ट्रीय स्तर पर मान्य तथा विस्तारित हो चुका है, हम व्यवहार में सभी गणनाएँ इसी कैलेंडर से करते हैं, किन्तु लेखक का मानना है कि हमें अपनी भारतीय परम्परा कदापि भूलनी नहीं चाहिए। भारत में संवत्सर और वर्ष का व्यापक स्वरूप है। इस अर्थ में वह न केवल व्यवहार के लिए अपितु हमारे अतीत को जानने के लिए भी उपयोगी है। सृष्टि की उत्पत्ति, ब्रह्मा प्रजापति की अवधारणा, ब्रह्माण्ड का आयाम आदि की गणना के लिए भी संवत्सर शब्द का प्रयोग हुआ है। यदि हम इस भारतीय कालगणना प्रणाली पर ध्यान देते हैं तो हमारे पुराणों में वर्णित कालानुक्रम को जानने में सुविधा होगी।**

जगत् का आदि गुरु और संसार में सबसे पहले सभ्यता और विज्ञान का प्रसार करनेवाले भारतभूमि पर कालगणना की पद्धति भी अतिप्राचीन व वैज्ञानिक है। कालगणना की ही एक शैली वर्षगणना भी है। यह कहना अतिशयोक्ति न होगा कि किसी जाति का अस्तित्व और उन्नति का इतिहास कालगणना का वर्षगणना से जुड़ा है। आर्य जाति की कालगणना की पद्धति जिसे 'संवत्सर' कहते हैं, इतना प्राचीन है कि उसको समझ पाने में पश्चिम जगत् सर्वथा असमर्थ है। भारतवर्ष के अतिरिक्त विश्व की अन्य किसी भी सभ्यता एवं संस्कृति में इसका प्रामाणिक उदाहरण और कहीं नहीं मिलता है, जहाँ कालगणना द्वारा सृष्टि के जन्म को भी वर्षों और दिवसों में अंकित किया जाता है। यह इस बात का प्रबल प्रमाण है कि आर्यावर्त के ऋषि-मनीषी इतिहास-विद्या के काल गणना (क्रोनोलॉजी) में भी पूर्ण निष्णात थे। परन्तु चिन्ता का विषय यह है कि आधुनिक काल में भारतवासी अपने प्राचीनतम कालगणना पद्धति को छोड़, अंग्रेजों द्वारा बताए गए 'ईसबी सन्' का अपना चुके हैं, जो मात्र दो हजार वर्ष पुराना है।

## वैदिक काल गणना पद्धति

**ऋतञ्च सत्यञ्चाभीद्धात्तपसोऽध्यजायत।**
**ततो रात्र्यजायत ततः समुद्रो अर्णवः॥**
**समुद्रादर्णवादधि संवत्सरो अजायत।**
**अहोरात्राणि विदधद्विश्वस्य मिषतो वशी॥**

**सूर्याचन्द्रमसौ धाता यथापूर्वमकल्पयत्।**
**दिवञ्च पृथिवीञ्चान्तरिक्षमथो स्वः ॥"[1]**

ऋग्वेद के उपर्युक्त मन्त्रों में सृष्ट्युत्पत्तिक्रम का उपदेश देते हुए बताया गया है कि प्रदीप्त आत्मिक तप के तेज से ऋत और सत्य नामक सर्वकालिक और सार्वभौमिक नियमों का प्रथम प्रादुर्भाव हुआ। तत्पश्चात् प्रलय की रात्रि हो गई। फिर मूल-प्रकृति में विकृति होकर उसके अन्तरिक्षस्थ समुद्र के प्रकट होने के पश्चात् विश्व के वशीकर्ता विश्वेश्वर ने अहोरात्रों को करते हुए संवत्सर को जन्म दिया। इससे ज्ञात होता है कि यदि सृष्टि में प्रथम सूर्योदय के समय भी संवत्सर और अहोरात्रों की कल्पना परब्रह्म के अनन्त ज्ञात में विद्यमान थी। 'समुद्रादर्णावादधि संवत्सरो...' संवत्सरारम्भ और उसके मन की कल्पना का ज्ञान सर्वप्रथम मन्त्रद्रष्टा ऋषियों को हुआ था कि प्रत्येक सृष्टिकल्प के आदि में यथानियम होता है। उन्होंने यह जान लिया कि इतने अहोरात्रों के पश्चात् आज के दिन नवसंवत्सर के शुभारम्भ का नियम है और उसी के अनुसार प्रतिवर्ष संवत्सरारम्भ होकर वर्ष, माह और अहोरात्र की कालगणना संसार में प्रचलित हुई। कालगणना यहीं से प्रारम्भ हुआ और कालक्रम से आगे चल कर ज्योतिष विद्या के विकास एवं विस्तार के साथ-साथ यह विविध रूपों और पद्धतियों तथा भिन्न -भिन्न नामों से जाना जाने लगा।

भारतीय काल गणना पद्धति में मासों के नामकरण हेतु यह नियम बनाया गया कि जिस पूर्णिमा को जो नक्षत्र पडेगा। वह पूर्णिमा उसी नक्षत्र की नामधारणी होगी और पूर्णिमा के नक्षत्रयुक्त नाम के अनुसार ही माह का नाम भी रखा जाएगा। यथा- जिस पूर्णमासी को चित्रा नक्षत्र हो वह चैत्री कहलाएगी और चैत्र पूर्णमासी वाले माह को चैत्र मास कहा जाएगा। इसी नियम के अनुसार बारह माह का नामकरण चैत्र, वैशाख आदि हुआ। महामुनि पाणिनि ने अपने प्रसिद्ध अष्टाध्यायी में इसी नियम को 'सास्मिन्पूर्ण-मासीति' कह कर सूत्रित किया है।

## पुण्यस्मरणीय युगारम्भ दिवस

ऐसी मान्यता है कि भारतीय विद्या में काल गणना सृष्टि के निर्माण के साथ ही प्रारम्भ हो गया था। इसकी पुष्टि में ज्योतिष के हिमाद्रि-ग्रन्थ में निम्नलिखित श्लोक आया है-

**चैत्रे मासि जगद् ब्रह्मा ससर्ज प्रथमेऽहनि।**
**शुक्लपक्षे समग्रन्तु तदा सूर्यादये सति ॥"[2]**

अर्थात्, चैत्र माह के शुक्ल पक्ष के प्रथम दिन सूर्योदय के समय ब्रह्माजी ने जगत् की रचना की थी। अत: यह तिथि 'युगारम्भ दिवस' के रूप में पुण्यस्मरणीय है और इस तिथि से प्रारम्भ हुई वर्ष गणना को 'युगादि' अथवा 'सृष्टि-संवत्' कहते हैं। शास्त्रज्ञों के अनुसार सृष्टि का जन्म आज से 13 अरब, 67 करोड़, 26 लाख, 46 हजार, 106 वर्ष पूर्व हुआ था। इसीलिए चैत्र शुक्ल प्रतिपदा को भारतीय नववर्ष अथवा 'संवत्सरेष्टि' के रूप में आयोजित किया जाता है। बाद के समय में इसी तिथि को अनेक संवतों का शुभारम्भ हुआ। प्रसिद्ध ज्योतिषाचार्य भास्कराचार्य कृत 'सिद्धान्त शिरोमणि ग्रन्थ में निम्न प्रकार से इस विषय को पद्य-रूप में वर्णित किया गया है-

**लङ्कानगर्यामुदयाच्च भानो-**
**स्तस्यैव वारं प्रथमं बभूव।**
**मधोः सितादेर्दिनमासवर्ष-**
**युगादिकानां युगपत्प्रवृत्तिः ॥"[3]**

1. ऋग्वेद : 10.190. 1-3
2. गदाधर पद्धति में ब्रह्म-पुराण के नाम पर उद्धृत
3. भास्कराचार्य : सिद्धान्तशिरोमणि, मध्यमाधिकारे कालमानाध्यायः, 15

अर्थात्, लंका नगरी में सूर्य के उदय होने पर उसी के वार (अर्थात् रविवार) में चैत्र मास शुक्ल पक्ष के आरम्भ में दिन, मास, वर्ष, युग आदि एक साथ प्रारम्भ हुआ। आगे चलकर इस पूर्व परम्परानुसार आर्यों के अधिकांश संवत् चैत्र शुक्ल प्रतिपदा से ही प्रारम्भ किए गए। यथा- कलि संवत्, श्रीकृष्ण संवत्, बौद्ध संवत्, वीर संवत्, मौर्य संवत्, फसली संवत्, दयानन्द संवत् आदि आदि।

ज्ञातव्य है कि इस संवत्सरों की स्थापना हमारे पूर्वजों के जन्म पराक्रम अथवा महाप्रयाण की पुण्य स्मृति के रूप में की गई, जिसे हम विस्मृत करते जा रहे हैं।

**यद्यपि भारतीय कालगणना में अनेक संवत्सर होते हैं, किन्तु उनमें भी नववर्ष के आरम्भ के रूप में चैत्र शुक्ल प्रतिपदा का विशेष महत्त्व है। इसे ब्रह्मा के द्वारा जगत् की सृष्टि का ही पहला दिन माना गया है। सीधे शब्दों में यह सृष्टि के आरमभ का भी दिन है।**

## संवत्सरों का मिथक और यथार्थ

यह विस्मयकारी विषय है कि भारत के ही कुछ विद्वानों द्वारा भारतीय काल गणना तथा संवत्सरों को मिथक कहते हुए यह कुतर्क प्रस्तुत किया जाता है कि इस में यथार्थ और वैज्ञानिकता नहीं है; अपितु, संवत्सर भारतीय लोकपरम्परा के प्रति श्रद्धा मात्र है। जबकि वास्तविकता यह है कि संवत्सर का उद्गम भारत के प्राचीन वाङ्मय, वेद वेदान्तों, स्मृतियों आदि द्वारा प्रमाणित है, जिसका उल्लेख पूर्व में किया जा चुका है। ऋग्वेद के अतिरिक्त यजुर्वेद तथा अथर्ववेद में भी संवत्सर का उल्लेख अनेक मंत्रों में आता है। यथा, अथर्ववेद का यह मंत्र द्रष्टव्य है-

**संवत्सरस्य प्रतिमां यां त्वा रात्र्युपास्महे।**
**सा न आयुश्मती प्रजां रायस्पोशेण संसृज॥"[4]**

इसी प्रकार यजुर्वेद का उक्त मंत्र भी द्रष्टव्य है

**"संवत्सरोऽसि परिवत्सरोऽसीदावत्सरोऽउशसस्ते-सीद्वत्सरोऽसिवत्सरोऽसि। कल्पन्तामहोरात्रास्ते कल्पन्तामर्धमासास्ते कल्पन्तां मासास्ते कल्पन्तामृतवस्ते कल्पन्ता समवत्सरस्ते कल्पताम् प्रेत्या एत्यै सञ्चाञ्च प्रचसारय। सुपर्णचिदसि तया देवतयाङ्गिरस्वद् ध्रुवः सीद॥"[5]**

भ्रमवश कुछ विद्वान् इस बात को भी आरोपित करने से नहीं चुकते हैं कि भारत में शासक वर्ग अपनी इच्छा से अपने नामों पर संवत् स्थापित कर देते हैं इसके स्थापना का कोई मानदंड नहीं होता है। यह आरोप निरोधार है। यथार्थ तो यह है कि संवत् की स्थापना के लिए अत्यन्त कड़े मानदण्ड है, जिसका परिपालन किये जाने पर ही किसी नये संवत् को सामाजिक मान्यता मिलती है। उदाहरण स्वरूप भारतवर्ष में सबसे अधिक लोकप्रिय विक्रम संवत् की स्थापना का उल्लेख करना आवश्यक है। सम्राट् विक्रमादित्य अत्यंत पराक्रमी, वीर प्रजापालक और प्रकाण्ड विद्वान थे। वे कृषि पण्डित, गोवंश विशेषज्ञ तथा वैज्ञानिक थे। उनके शासन में वही व्यक्ति विधायक बन सकता था जो हल चलाना जानता हो। उनके शासन काल में कृषि, गोवंश, विज्ञान तथा मौसम विज्ञान आदि का यथेष्ट संवर्द्धन एवं अन्वेषण हुआ। उन्होंने हूण, शकादि विदेशी आक्रान्ताओं और समुद्री दस्युओं को अपने पराक्रम और शक्ति से

4. अथर्व. 3.10.1
5. यजु.अ.26- मं.45

परास्त किया तथा कश्मीर से कन्याकुमारी तक एवं हिन्दूकुश से लेकर ब्रह्मदेश तक फैले विशाल भारत को एकसूत्र में बांध कर शक्तिशाली बनाया तथा चक्रवर्ती सम्राट् कहलाए। उन्होंने पारशियों पर अपने विजय की स्मृति में विक्रमी संवत् चलाने की इच्छा अपने मंत्रिमंडल के समय व्यक्त किया तथा उनकी स्वीकृति के उपरान्त ज्योतिषशास्त्रियों से परामर्श किया। तदनन्तर वात्स्यायन भारद्वाज की अध्यक्षता में धर्मसभा, बुलायी गयी, जिसमें सम्राट् विक्रमादित्य के शौर्य, पराक्रम, सेवा, विद्वता आदि की समीक्षा के उपरान्त उन्हें अपने नाम पर संवत्सर चलाने का अधिकार प्रदान किया गया। तब जाकर उन्होंने आज से 2061 वर्ष पूर्व विक्रमी संवत् को प्रतिष्ठित किया तथा चक्रवर्ती सम्राट् के रूप में 35 वर्षों तक आर्यावर्त का शासन संचालित करते रहे।

संवत्सरों की गणना पद्धति की एक और विशेषता का उल्लेख किया जाना आवश्यक है वह यह कि जब सृष्टि संवत् का प्रारम्भ चैत्र सुदि प्रतिपदा को हुआ था, तो उस समय सौर मेष संक्रान्ति एक साथ ही पड़ी थी, परन्तु बाद के काल में सौर और चन्द्र वर्षों की दो प्रकार की गणना प्रचलित होने पर सौर और चन्द्र संवत्सर पृथक् हो गए। चन्द्र संवत्सर का आरम्भ चैत्र शुक्ल प्रतिपदा को और सौर संवत्सर का आरम्भ मेष संक्रान्ति के दिन से होता है। फिर भी इन दोनों प्रकार की गणना पद्धति के मास, दिवस आदि की गणना में कोई अन्तर नहीं आता है। मुसलमान, ईसाई, पारसी आदि अन्य पंथ तथा जातियों में नववर्षारम्भ के दिन केवल प्रसन्नता, प्रदर्शन और मनोरंजन करने की रीति है। परन्तु आर्य जाति में इस दिवस को आनन्दानुभव के साथ-साथ यज्ञ आदि धर्मानुष्ठानपूर्वक उत्सव मनाने की रीति है, जिसमें फुहड़पन लेश मात्र भी नहीं होता।

काल गणना पद्धति का अन्वेषण और विकास विश्व में प्रथमतः आर्यावर्त की भूमि पर होने के उपरान्त भी आज भारतवासी अपने संवत्सर के प्रति पूर्णतः उदासीन है। आठ सौ वर्षों के मुगलिया अत्याचारपूर्ण शासनकाल में आर्यों की सनातन संस्थाएं अस्त-व्यस्त कर दी गई, फिर भी नवसंवत्सरोत्सव मनाने की परम्परा समाप्त नहीं हुई। संवत्सरोत्सव की जानकारी देते हुए परम अत्याचारी मुगल बादशाह औरंगजेब अपने ज्येष्ठ पुत्र मोहम्मद मोअज्जम के नाम पत्र में लिखता है-

**"ईरोज ऐयाद स्त, व एकाद-कफ्फारह-नूद रोज ए जलूस विक्रमजीत लाईन व मबदाए तारीख ए हिन्दूज।"**

अर्थात्, यह दिन अग्निपूजकों (पारसीयों) का पर्व है और काफिर (धर्मशून्य) हिन्दुओं के विश्वासानुसार धिक्कृत विक्रमजीत की राज्याभिषेक तिथि है और भारतवर्ष का नवसम्वत्सरारम्भ दिवस है।

तदन्तर अंग्रेजों के दो सौ वर्षों के अनाचारपूर्ण शासनकाल में भारत की सभ्यता और संस्कृति को मटियामेट करने का कुचक्र तो चलाया ही गया, साथ ही यहाँ के हिन्दू समाज को चेतनाशून्य बनाने का भी सफल उपक्रम किया गया। परिणामतः 'हम आर्य है' अर्थात् 'हम श्रेष्ठ है'- हिन्दू समाज के इस भाव का विस्मरण तो हो ही गया, साथ ही हम अपनी परम्पराओं, ज्ञानधाराओं और आचारों-व्यवहारों को भी भूल बैठे एवं हम पशुतुल्य हो गए। चरवाहे (शासक) ने जिधर हाँक दिया उधर ही चल पड़े। परिणामतः हम पूरब को भूलते गए और पश्चिम को अपनाते गए। पाश्चात्य सम्मोहन से हम स्वाधीन भारत में भी नहीं उबर पाये और अफीम के नशे की तरह महानिद्रा की स्थिति हो गई हमारी। हम भूल गए आर्ष परम्परा और रीति-रिवाजों को। यहाँ तक कि हम अपने दिवस, वर्ष और संवत् को भी भुला बैठे और ईसवी सन् ही हमारे मानस पटल पर अंकित रह गया। यह भयंकर शून्यता नहीं तो और क्या है?

***

# नवसंवत्सर और प्रजापति ब्रह्मा

**श्री महेश शर्मा 'अनुराग'**
18. स्नेह नगर,सुभाष नगर के पास,
उज्जैन, मध्यप्रदेश पिन 456010

**ब्रह्मा को प्रजापति कहा गया है। वे सृष्टिकर्ता हैं। अतः सृष्टि के आरम्भ का दिन ब्रह्मा का दिन माना गया है तथा उनकी उपासना उस दिन करने का विधान हमें मिलता है। इस सृष्ट्यादि का दिन भी चैत्र मास के शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा तिथि को माना गया है। भले हमें कुछ पुराणकारों ने विष्णु और शिव को श्रेष्ठ दिखाने के क्रम में ब्रह्मा के महनीय विवेचन का परित्याग कर दिया हो, और जनमानस में भी कर्मान्त में ब्रह्मा की पूजा का विधान मिलता हो, किन्तु जहाँ सृष्टि, संवत्सर, सृष्ट्यादि की बात चलती हो तो ब्रह्मा के अपने गौरवमय स्वरूप का प्रसंग उपस्थित हो जाता है। इस प्रकार, चैत्र शुक्ल प्रतिपदा के दिन आज भी महाराष्ट्र में ब्रह्मा की पूजा प्रचलित है। लोग वर्ष भर परिवार की समृद्धि की आकांक्षा से ब्रह्मा की पूजा करते हैं। वस्तुतः यदि ब्रह्माण्ड पुराण का कथन मानें तो पड़िबा तिथि के देवता ब्रह्मा सिद्ध होते हैं। इतना ही नहीं, मिथिला में शारदीय नवरात्र की भी जो प्राचीन पद्धति विद्यापति कृत मिलती है, उसमें भी प्रतिपदा यानी कलशस्थापन के दिन सर्वप्रथम ब्रह्मा की पूजा करने का विधान है, क्योंकि ब्रह्मा सृष्टिकर्ता प्रजापति हैं।**

संवत्सर की बात हम प्रारम्भ करें तो इसका सामान्य अर्थ वर्ष से लगाया जाता है। इसी ऋतुएँ आदि भी सम्मिलित है। संवत्सर की उत्पत्ति की बात करें तो इसका सृष्टि के आदि में सूर्य, चन्द्रमा, देवों और पंच तत्त्वों के साथ उद्भव हो चुका था। इसी तथ्य को शतपथ ब्राह्मण में भी स्वीकार किया गया है। यहाँ कहा गया है कि सृष्टि के आरम्भ में केवल जल ही था। जब सृष्टि की इच्छा हुई तो उन्होंने निरन्तर तपस्या की। इस तपस्या से स्वर्णमय अंड की उत्पत्ति हुई जिसे ब्रह्माण्ड कहा गया है। उस स्थिति में यदि किसी वस्तु की सत्ता थी तो वह संवत्सर था। वह स्वर्णमय ब्रह्माण्ड उस संवत्सर की वेला जहाँ तक थी, वहाँ तक तैरता रहा-

**"आपो ह वा इदमग्रे सलिलमेवास। ता अकामयन्त कथं नु प्रजायेमहीति ता अश्राम्यंस्तास्तपोऽतप्यन्त तासु तपस्तप्यमानासु हिरण्मयमाण्डं सम्बभूवाजातो ह तर्हि संवत्सर आस तदिदं हिरण्मयमाण्डं यावत्संवत्सरस्य वेला तावत्पर्यप्लवत।**[1]

इसी संवत्सर में पुरुष की उत्पत्ति हुई। अतः वही संवत्सर स्त्री है, गौः है, समुद्र है। उसी संवत्सर में पुरुष उत्पन्न हुआ और उसी संवत्सर का जहाँ तक आयाम था वहाँ तक ब्रह्माण्ड तैरता रहा-

**ततः संवत्सरे पुरुषः समभवत्। स प्रजापतिस्तस्मादु संवत्सर एव स्त्री वा गौर्वा वडवा वा विजायते संवत्सरे हि प्रजापतिरजायत स इदं हिरण्मयमाण्डं व्यरुजन्नाह तर्हि का चन प्रतिष्ठाऽऽस तदेनमिदमेव हिरण्मयमाण्डं यावत्संवत्सरस्य वेलासीत्ता-**

1 शतपथ ब्राह्मण : काण्डम् 11, अध्यायः 1, ब्राह्मणं 6, पं. 1

**वद्विभ्रत्पर्यप्लवत।**[2]

**स संवत्सरे व्याजिहीर्षत्। स भूरिति व्याहरत्सेयं पृथिव्यभवद्भुव इति तदिदमन्तरिक्षमभवत्स्वरिति साऽसौ द्यौरभवत्तस्मादु संवत्सर एव कुमारो व्याजिहीर्षति संवत्सरे हि प्रजापतिर्व्याहरत्।**[3]

संवत्सर की परिभाषा दी गयी –

**"सर्वतः त्सरन् गच्छति भूपिण्डः स्वपरिभ्रमणमार्गे"।**

इसप्रकार, सर्वत्सर ही संवत्सर है।

यह श्लोक तो अनन्त बार विभिन्न माध्यमों में पुनरावृत्तित किया है कि ब्रह्म-पुराण अनुसार

**चैत्रे मासि जगद् ब्रह्मा ससर्ज प्रथमेऽहनि।**
**शुक्लपक्षे समग्रन्तु तथा सूर्य्योदये सति॥**
**प्रवर्तयामास तदा कालस्य गणनामपि।**
**ग्रहान् नागानृतून् मासान् वत्सरान् वत्सराधिपान्॥**[4]

वर्ष प्रतिपदा पर ब्रह्माण्ड अधिनायक हिरण्यगर्भ प्रजापति वाचस्पति ब्रह्मणस्पति लोकपितामह ब्रह्मा का जयघोष पूरे ब्रह्माण्ड का महावाक्य है। मन उर्जा प्रसन्नता, हर्ष उल्लास से भर जाता है संकल्प संकल्प से **"मम सकुटुम्बस्य सपरिवारस्य स्वजनपरिजन सहितस्य वा आयुरारोग्यैश्वर्यादि-सकल-शुभ-फलोत्तरोत्तराभिवृद्ध्यर्थं ब्रह्मादिसंवत्सर-देवतानां पूजनमहं करिष्ये।"**

यह बड़े रहस्य की बात है कि ब्रह्माजी से सृष्ट होकर ही हम सब कुछ पाते हैं। ब्रह्माजी के माहात्म्य में यह बात पर्वताकार है कि यदि ब्रह्माजी ने हमें जन्म नहीं दिया होता तो हम क्या कुछ भी कर पाते। क्या हम गणेश, विष्णु, शिव, सरस्वती, लक्ष्मी और माँ पार्वती की आराधना कर पाते।

संवत्सर शब्द बहुत बड़ी व्यापकता लिए हुए है इसमें मुख्य रूप से वर्ष के साथ ऋतु आदि कालगणना के सभी अवयव समाहित है। अनेक उदाहरण है जैये प्रजापति परमात्मा का अहरोत्र दो सहस्र युग का होता है। देवताओं के अहोरात्र का आधार उत्तरायण और दक्षिणायण है। पितरों का अहोरात्र शुक्ल और कृष्णपक्ष पर आधारित है वहीं मनुष्यों का अहरोत्र दिन व रात पर आधारित है।

वेदों में संवत्सर का उल्लेख निम्न श्लोकों में मिलता है-

## ऋग्वेद-

**ॐ ऋतं च सत्यं चाभीद्धात्तपसो ध्यजायत। ततो रात्र्यजायत। ततः समुद्रो अर्थवः। समुद्रादर्णवादधि संवत्सरो अजायत। अहोरात्राणि विदधद्विश्वस्य मिषतो वशी सूर्याचन्द्रमसी पाता यथा पूर्वकल्पयत्। दिवं च पृथिवीं चान्तरिक्षमथो स्वः।**[5]

## यजुर्वेद-

**संवत्सरो ऽसि परिवत्सरोऽसीदावत्सरो ऽसीद्वत्सरो ऽसि वत्सरोऽसि। उषसस् ते कल्पन्ताम् अहोरात्रास् ते कल्पन्ताम् अर्धमासास् ते कल्पन्तां मासास् ते कल्पन्ताम् ऋतवस् ते कल्पन्तां संवत्सरस् ते कल्पताम्। प्रेत्याऽ एत्यै सं चाञ्च प्र च सारय। सुपर्णचिद् असि तया देवतयाङ्गिरस्वद् ध्रुवः सीद॥**[6]

2 शतपथ ब्राह्मण : काण्डम् 11, अध्यायः 1, ब्राह्मणं 6, पं. 2

3 शतपथ ब्राह्मण : काण्डम् 11, अध्यायः 1, ब्राह्मणं 6, पं. 3

4 गदाधर राजगुरु : गदाधर पद्धति, प्रथम खण्ड, कालसार, पं. सदाशिव मिश्र (सम्पादक), कलकत्ता, 1904ई. पृ. 13 में ब्रह्मपुराण के नाम से उद्धृत।

5 ऋग्वेद : 10.190

[6] यजुर्वेद 27.45

## अथर्ववेद-

**संवरस्य प्रतिमा यां त्वा रात्र्युपास्महे।**
**स न आयुष्मती प्रजा रायस्पोषेण सं सृज॥**[7]

## ब्राह्मण ग्रंथों में संवत्सर का उल्लेख

**सोऽकामयत दिवतीयो म आत्मा जायेतेति स मनसा वाचं मिथुन समभवदशनाया मृत्युस्तद्यदेत आसीत्य संवत्सरोऽभवत्।**[8]

**संवत्सरो वै प्रजापतिस्तस्यायने दक्षिणं चोत्तरं च। तद्ये ह वै तदिष्टापूर्ते कृतमित्युपासते ते चान्द्रमसमेव लोकमभिजयन्ते। त एव पुनरावर्तन्ते तस्मादेत ऋषयः प्रजाकामा दक्षिणं प्रतिपद्यन्ते। एष ह वै रयिर्यः पितृयाणः॥9॥**[9]

## पुराणों में संवत्सर

पुराणों में संवत्सर ने वर्ष प्रतिप्रदा का रूप ले लिया। भविष्य-पुराण के ब्राह्मपर्व के अध्याय[10] 16-17 में दो अध्यायों के लगभग 181 श्लोकों में हृदयग्राही और स्वर्णिम तरीके से वर्ष प्रतिप्रदा बहुत ही शक्तिशाली तरीके से महिमा-मण्डित है। प्रतिप्रदा माहात्म्य में ही जिस प्रकार श्रीमद्भागवतपुराण में भगवान विष्णु को ब्रह्मा और शिव का पिता और शिवपुराण शिवजी को ब्रह्मा और विष्णु का पिता बतलाया है उसी प्रकार भविष्य-पुराण में ब्रह्माजी को विष्णु और शिवजी का पिता घोषित किया है। विभिन्न शापों द्वारा लोक अपूजित सृष्टिकर्ता लोकपितामह प्रजापति ब्रह्मा का ये पूजन दिवस है।

**सर्वो ब्रह्ममयो लोकः सर्वं ब्रह्मणि संस्थितम्।**
**तस्मात्समर्चयेद् ब्रह्मन् न इच्छेच्छ्रेयमात्मनः॥**[11]

इसी बात को सृष्टि-पूजन-दिवस और पूजन-प्रक्रिया को अग्निपुराण और गरुड़ पुराण में समर्थन दिया गया है। ब्रह्माण्ड-पुराण में तो बहुत ही बृहत् स्तर पर हिरण्यगर्भ ब्रह्माजी की पूजन प्रकिया महिमा मंडित है। गीताप्रेस गोरखपुर से प्रकाशित "व्रत-परिचय" पुस्तक में इसका वर्णन मिलता है। इसके लेखक पंडित हनुमानजी शर्मा व्रत पर्व इत्यादि के ऐतिहासिक अद्वितीय विद्वान् हैं, इसलिए उन पर संदेह नहीं किया जा सकता, परन्तु वर्ष प्रतिपदा पर ब्रह्माजी की पूजा प्रक्रिया में ब्रह्माण्ड-पुराण लिखा है। चौखम्भा प्रकाशन से मूल श्लोकों सहित प्रकाशित ब्रह्माण्ड-पुराण में उक्त प्रसंग नहीं मिलता। ब्रह्माण्ड-पुराण दो है एक महापुराण में परिगणित और दूसरा उप-पुराण में सम्मिलित किया हुआ। हो सकता है यह उप ब्रह्माण्ड पुराण में हो। यह शोध का विषय है।

7 अथर्ववेद 03.10.03
8 बृहदाण्यकोपनिषद्। अध्याय 2
9 प्रश्नोपनिषत्/प्रथमः प्रश्नः, 9
10 भविष्यपुराण, मूलमात्र, खेमराज श्रीकृष्णदास प्रकाशन, 1959, पृ. 38-42
11भविष्य पुराण उपरिवत्, अध्याय 17, श्लोक 8, पृ. 41.

इस प्रसंग में ब्रह्माजी की रची हुई सृष्टि के प्रत्येक देवता, ऋषि, श्रेष्ठ तत्व की पूजा ब्रह्माजी की पूजा के साथ स्वर्णिम तरीके से प्रपंचित है अग्नि-पुराण ने इस पावन अवसर पर ब्रह्माजी की प्रतिमा स्वर्ण बनाने का निर्देश दिया है। अन्त में विद्या वाचस्पति ब्रह्माजी से सपरिवार नव संवत्, नववर्ष प्रसन्नता, सुख के साथ व्यतीत प्रार्थना की जाती है।

ब्रह्माण्ड-पुराण और भविष्य-पुराण अनुसार इसे महान् महोत्सव के रूप में मनाया जाने का महान् निर्देश प्राप्त होता है। घर को या पूजा स्थल को ब्रह्माजी की प्रतिमा पूजन के साथ बंदनवार से घर को सजाया जाता है। उनके षोडशोपचार पूजन के साथ पूरा वर्ष उनकी कृपा से सपरिवार सुख-सौभाग्य के साथ व्यतीत हो ऐसी कामना के साथ वर्ष फल जानने हेतु पंचांग का वाचन किया जाता है। इसी में कालों का अवयव, त्रिगुण, सभी देवताओं सभी ऋषियों, सभी नागों सप्त द्वीप, सप्त सागर, सभी निधियों, पर्वतों, तीर्थो, पंचमहाभूत आदि की पूजा का विधान ब्रह्माजी की पूजा के साथ वर्णित किया गया है।

## संवत्सर के पाँच प्रकार-

ब्रह्माण्ड पुराण में संवत्सर के पाँच रूप बताए हैं- प्रथम **संवत्सर** जो अग्नि, द्वितीय **परिवत्सर** सूर्य है, तृतीय **इड्-वत्सर** जो चन्द्रमा है, चतुर्थ वायु **अनुवत्सर** है और पंचम **वत्सर** रुद्र हैं। इन सभी को ब्रह्माजी का रूप प्रतिपादित किया है।

**"सोऽयं संवत्सरः प्रजापतिः सर्वाणि भूतानि ससृजे।"**[12]और पंचविंश (तांड्य ब्राह्मण) में कहा गया है कि संवत्सर साक्षात् जगत् के रचयिता ब्रह्माजी का ही रूप है।

महाराष्ट्र-जैसे बहुत बड़े राज्य में और अन्य प्रांतों में बसे महाराष्ट्रीयन परिवारों में गुडी पडवा बहुत श्रद्धा भक्ति से मनाया जाता है। यह वर्ष प्रतिप्रदा के दिन मनाया जाता है और इसमें गुड़ी बनाई जाती है जो ध्वज का रूप होती है वास्तव में वह ब्रह्मध्वज है अर्थात् ब्रह्माजी का ध्वज। इसके महिमा-मण्डन में एक श्लोक बहुत ही प्रसिद्ध है-

**ब्रह्मध्वज नमस्तेऽस्तु सर्वाभीष्ट फलप्रद।**
**प्राप्तेऽस्मिन वत्सरे नित्यं मद्गृहे मङ्गलं कुरु॥**

पद्म/ स्कंद आदि पुराण अनुसार ब्रह्माजी की महाशक्ति देवी सावित्री ने प्रलयंकारी रूप धारण कर ब्रह्माजी सहित सभी देवताओं को शापित किया परन्तु स्कंद पुराण प्रभास खण्ड अध्याय भगवान शिव कहते हैं-

**ऋते वै कार्तिकीमेकां पूजा सावंत्सरी।**

इसप्रकार उन महादेवी विश्वमाता ने दो पर्वों पर ब्रह्माजी को पूजित होने की राह बनाए रखी।

जिसप्रकार, गणेश चतुर्थी को पूरा देश और विश्व के अन्य देश गणेशमय, रामनवमी और जन्माष्टमी को राम और कृष्णमय जो मूल रूप से विष्णु है, शिव रात्रि को शिवमय हो जाते हैं साथ ही शक्तियों की बात करें तो वसंत पंचमी को मां सरस्वतीमय, दीपावलि को मां लक्ष्मीमय और नवरात्रि में मां दुर्गामय हो जाता है उसी प्रकार नव संवत्सर वर्ष प्रतिप्रदा को पूरा देश ब्रह्ममय हो इसके बीज वेदों, उपनिषदों, भविष्य, अग्नि, नारदादि पुराण छुपे हुए हैं इस विषय पर मौन बैठे देश के अध्यात्मविदों, विद्वानों, आचार्यो प्रबुद्ध सामाजिकों, नेताओं को आगे आकर साकार पहल प्रारम्भ करना होगी बहुत सजगता और सावधानी के साथ।

***

12 शतपथब्राह्मणम्/काण्डम् 10/अध्यायः 4/ब्राह्मण 2, 2

# उत्कलीय परम्परा में मातृकाओं में संवत्सर का प्रयोग

**डा. ममता मिश्र 'दाश'**
संस्थापक सचिव,
प्रो. के.वी. शर्मा रिसर्च इंस्ट्च्यूट, अड्यार, चेन्नई

**अक्सर जब हम किसी पाण्डुलिपि अथवा अभिलेख में अलग प्रकार की तिथि देखते हैं तो भ्रम में पड़ जाते हैं। वर्तमान प्रचलित तिथि में उसे परिवर्तित करने में अत्यन्त सावधानी रखनी पड़ती है। सर्वप्रथम तो यह देखना पड़ता है कि तिथिलेखन भारत के किस सांस्कृतिक क्षेत्र में हुआ है। यदि देखा जाये तो आसाम, बंगाल, उड़ीसा तथा मिथिला इन चारों क्षेत्रों में प्रचलित भास्कराब्द, बंगाब्द, कलिंगाब्द तथा फसली सन् के बीच मात्र एक वर्ष का अंतर है। संभावना है कि इन चारों का मूल Epoch Point एक ही हो। मान्यता है कि आसाम का भास्कराब्द ही इन क्षेत्रों में प्रसृत हुआ। यह पूर्वोत्तर भारत की विशिष्ट संवत्सर-लेखन की पद्धति है। कलिंग क्षेत्र के साथ एक अन्य विशेषता है कि यहाँ वर्ष गणना में 6, 16.20,26,30 आदि वर्षसंख्या की गिनती नहीं होती है। फलतः यदि 40वाँ शासन वर्ष लिखा जाये तो वह 49 वर्ष के बराबर हो जाता है। इस विशिष्ट गणना पद्धति पर यहाँ विशेष विवेचन किया गया है।**

भारतीय परम्परा में 'वर्ष' की सूचना के लिए बहुत सारे प्रतिशब्द उपलब्ध हैं- जैसे संवत्सर, शक, अब्द, संवत्, सन् इत्यादि। इन सारे शब्दों का प्रयोग कुछ आधार पर ही किया गया है और वह सब पारंपरिक है, युक्तियुक्त भी है। हम सब भारतीयों की जीवन यात्रा इन संवत्सरों से पूरी तरह जुड़ी हुई है। वैसे शकवर्ष भी युधिष्ठिर शक, विक्रम शक, मालव शक, शालिवाहन शक जैसे बहुत शक भी प्रचलित है। आंचलिक भेद से भी आन्ध्रवर्ष, केरल वर्ष या केरल अब्द, कलिंग अब्द और कुछ राजाओं के राज्योत्सव वर्ष के आधार पर वर्ष गणना भी प्रचलित है।

शालिवाहन, विक्रम, युधिष्ठिर आदियों के 'शक' समय स्थिर करने में अभी भी विद्वानों के बीच आलोचना प्रत्यालोचना चलती आ रही है। इस निबंध में उत्कलीय शिलालेख और मातृकाओं में कैसे संवत्सर की अवतारणा की गई है इस पर आलोचना की गयी है।

## द्रक्षरम् मन्दिर शिलालेख-1

**"स्वस्ति श्रीशकवर्ष बुलु 10 75 गु नेंटि शिकुलोत्तुंग चोडदेवर विजयराज्य संवत्सरमु ...",**

इसका समय 26 जनवरी, 1153 माना गया है।

प्रायतः सारे अभिलेखों में शकाब्द के साथ-साथ प्रचलित संवत्सरों की सूचना मिलती है।

1 राजगुरु, सत्यनारायण : (1961) इन्स्क्रिप्शन्स ऑफ उड़ीसा, भाग. III. खण्ड ii. भुवनेश्वर, पृ. 276.

### रेल्लिवलस शिलालेख [2]-

**"स्वस्ति॥ समर मुखानेक रिपुदर्प्प मर्द्दन भुजबल पराक्रम परम माह—श्वर... श्रीमदनन्तवर्म्मदेवर प्रवर्धमान विजयराज्यसंवत्सरंवुलु 8 8 स्राहि शक वर्षवुलु 1075 नेण्टि मकर क्रि (कृ ?) 6 यु गुरुबारमुन ..."**

गणना के हिसाब से यह 07.01.1154 है।

### मुखलिङ्ग शिलालेख [3]

**"स्वस्ति शाकबरुषंबुलु 1077 नेंट्टि श्रीमदनन्तवर्म्मदेवर प्रवर्द्धमानविजयराज्य संवत्सर 10 श्राहि उत्तरायण संक्रान्ति ... ।"**

गणना के हिसाब से यह 25.12.1155 है।

### श्रीकूर्म शिलालेख [4]

**"(स्वस्ति॥) शाकाब्दं बुलु 1078 नेंडु श्रीमदनन्तवर्म्मदेवर प्रवर्द्धमानविजयराज्य संवत्सर 11 श्राहि विषुवसंक्रान्ति..."**

गणना के हिसाब से यह 24.03.1156 है।

उड़ीसा में कुछ अभिलेख ऐसे भी हैं, जिसमें वर्ष, मास, तिथि, दण्ड के साथ साथ कुछ विशेष अवसर का वर्णन भी है। (वहीं पर पृ 292 )

**"सिद्ध शकाब्दं बुलु 1083 नेण्टि श्रीमदनन्तवर्म्मदेवर प्रवर्द्धमानविजयराज्य संवत्सर 8 श्राहि मकर अमावास्यायु बुधबार मुन सूर्यग्रहण निमित्तमु ..."**

गणना के हिसाब से यह 17.01.1162 है, माघ अमावास्या, बुधवासर और सूर्यग्रहण का समय था।

कुछ अभिलेखों में गुप्तवर्ष, गंगवर्ष आदि की सूचना भी है। कभी कभी केवल संवत्सर का नामोल्लेख भी है।

## लोकविग्रह शिलालेख

### श्री जगन्नाथ पुरी स्थित मार्कण्डेश्वर पुष्करिणी तटवर्ती शिलालेख [5]-

**"शकाब्दे शर-लोक-खेन्दुगणिते नारायणस्य प्रियाऽ — महाकवे---"**

यहाँ पर 'नारायण' शब्द एक कवि का नाम है, जो गंग दरबार में एक प्रमुख कवि रहे। शर- 5, लोक-3, ख-0, इन्दु -1 ऐसे 1035 शकाब्द यानि 1113 प्रचलिताब्द।

अभिलिखों में संवत्सर या वर्ष की सूचना इसी तरह लगभग पूरे भारत में उपलब्ध है।

## पाण्डुलिपि

उत्कलीय पाण्डुलिपियों में अधिकतया भूतसंख्या के माध्यम से रचनाकाल और प्रतिलिपि करण के समाय के बारे में सूचना उपलब्ध है। शकाब्द' विक्रमसंवत्' कलिंगाब्द के अधार पर भी सूचना दी जाती है। कुछ मातृकाओं के अन्त में प्रतिलिपि समय बताते हुए लेखनकार मास' बार' दिन' दण्ड आदि की सूचना भी देते हैं और साथ में कुछ ऐतिहसिक घटनाओं के बारे में भी पता लग जाता है।

यद्यपि शुक्ल यजुर्वेद के काल से एक' दश' शत आदि अंकों का प्रचलन है' मातृकाओं में प्रायतः भूतसंख्या का व्यवहार ही उपलब्ध है। चन्द्र'भुज' नेत्र आदि शब्दों के माध्यम से एक' दो' तीन आदि अंकों की सूचना सर्वभारतीय स्तर पर प्रचलित है। इससे

2 राजगुरु, सत्यनारायण : उपरिवत्, पृ, 278
3 राजगुरु, सत्यनारायण : उपरिवत्, पृ 285
4 राजगुरु, सत्यनारायण : उपरिवत्, पृ 286
5 राजगुरु, सत्यनारायण : (2003) इन्सक्रिप्शन्स ऑफ द टेम्पुलेस ऑफ पुरी एण्ड ओरिजिन ऑफ श्री पुरुषोत्तम जगन्नाथ, श्री जगन्नाथ संस्कृत विश्वविद्यालय, पुरी, p. 16

मातृका के प्रतिलिपि करण के समय के बारे में पता चलता तो है' ग्रन्थ रचना के समय के बारे में भी जानकारी प्राप्त होती है। परन्तु षष्ठी संवत्सर के क्रम के अनुसार पुस्तक रचना या प्रतिलिपिकरण का समय दर्शाना उत्कलीय पाण्डुलिपियों में प्रायतः देखा नहीं जाता।

**कालांगभूपशाकेन ज्येष्ठमासि सितेऽहनि।**
**ग्रहचक्रस्य विवृतिः सम्पूर्णाभूत् यथार्थतः॥**[6]

कुचनाचार्यकृत ग्रहचक्रोपारि टीका की पुष्पिका में उल्लेख के आधार पर निर्धारित होता है कि काल- 6' अंग-6' भूप- 16 अर्थात् 1666 शकाब्दे 1744 प्रचलिताब्दे ज्येष्ठमास की प्रतिपत् तिथि में इस विवृति की रचना शेष हुई थी।

एक परम्परा भी है- उत्कल के गजपति राजाओं के राज्योत्सव वर्ष को लेकर मातृकाओं का रचनाकाल प्रदर्शन करना। इस संख्या को जानने का एक स्वतन्त्र विधि है। अभिषेक का पहला वर्ष ही द्वितीय वर्ष होता है। प्रथम अंक का व्यवहार होता ही नहीं है। बाद में 6 संयुक्त अंक जैसे 6,16, 26 आदि और 10 संख्या को छोड़कर शून्य संयुक्त अंक जैसे 20, 30 आदि अंकों की परिगणना भी नहीं की जाती है। उदाहरण के रूप में — अगर पुरुषोत्तम देव के 49 अंक दर्शाया गया है तो इन 49 अंकों से 1, 6, 16, 20, 26, 30, 36, 40 और 46 संख्याएँ कम हो जायेगी। तो महाराज के 40वाँ शासन वर्ष 49 ही माना जाता है।

कुछ ग्रन्थों के रचना काल को दर्शाती हुई कुछ पुष्पिकाएँ —

उत्कलीय पण्डित पुरुषोत्तम मिश्र कोलाचल मल्लिनाथ जैसे बहुत सारे ग्रन्थों के टीकाकार हैं। रूपगोस्वामी कृत हंसदूत कै ऊपर प्रथम टीका इनके द्वारा रचित की गयी है। अपनी टीका के अन्त में टीका रचना के समय के बारे में बताते हुए —

**मिश्रश्रीपुरुषोत्तमो वितनुते टीकां मनोहारिणीम्।**
**टीकेयं प्रथमा मयैव रचिता श्रीहंसदूताभिधे ॥**

× × ×

**अंके श्रीनरसिंहभूपतिलकस्याम्बोधिसंख्ये मया।**

अपने को प्रथम टीकाकार बताते हुए टीका रचना का समय बताते हैं कि श्रीनरसिंह देव के चतुर्थ अंक में टीका रचना हुई थी। नरसिंह देव का राज्योत्सव 1621 में हुआ था। तो उनका चतुर्थ अंक तीसरे वर्ष में अर्थात् 1623 इस टीका रचना का समय है।

मुरारि मिश्र कृत अनर्घराघव टीका के अन्त में पुरुषोत्तम मिश्र ने कहा —

**वीरश्रीपुरुषोत्तमक्षितिपतेः पुत्रे नृसिंहक्षमानाथे**
**खेष्विन्द्रियेन्दौ शके प्रीत्यै सद्गुणिनां मयापि ननु या**
**टीका मुरारेः कृता ...।**

ख- 0' इषु- 5' इन्द्रिय- 5' इन्दु -1 = 1550 शके 1628 प्रचलिताब्दे अनर्घराघवोपरि टीका रचिता।

उन्हींकी रचना नीलाद्रिनाथ स्तुति के अन्त में रचना के समय के बारे में बताते हुए —

**रस-काल-बाण-विधु सम्मिते शके।**
**रचितोऽयमाशु कविरत्नसूरिणा॥**

नीलाद्रिनाथ स्तुति की रचना रस- 6, काल- 3, बाण- 5, विधु- 1, अर्थात् अंकस्य वामा गति के नियम से 1526 शकाब्द अर्थात् 1614 में हुई थी।

किसी भी सांकेतिक शब्द के प्रयोग के विना भी पुस्तक लिखन समय की सूचना भी उपलब्ध है। जैसे —

जयदेवकृत गीतगोविन्द महाकाव्योपरि एक रसिकरंगदा नामकी एक टीका— टीकाकार - लक्ष्मणसूरि। टीका पूर्ति के समय की सूचना देते हुए —

**शकाब्दे षोडशशते चतुषष्ट्यधिके गते।**

6 ओडिशा राज्य संग्रहालय मातृका संख्या Jy/2

**प्रथिता लक्ष्मणेनासौ टीका श्रीपुरुषोत्तमे ॥**

यहाँ न किसी राजा का नामोल्लेख है' न किसी भूतसंख्या का। चतुषष्ट्यधिक षोडश शत अर्थात् 1664 शकाब्द अर्थात् 1742 प्रचलिताब्द टीका रचनाका समय है।

भास्कराचार्य कृत गणितग्रन्थ लीलावती का एक उत्कलीय पद्यानुवाद कलियुगाब्द 4447 में हुआ था। अनुवादकार त्रिलोचन अपने अनुवाद के आद्य में (ओडिआ भाषा) कहा है –

**चारि सहस्र सातश सतचालिश।**
**होइथिला कलियुग गत वरष ॥**
**नृसिंह देवङ्क एकतिरिश गते।**
**त्रिलोचन रचित ए भाषा कवित्वे ॥**

कलियुगाब्द 4447 और गजपति नृसिंह देव महाराजा के 31 अंक पर यह अनुवाद कार्य समाप्त हुआ।

राजाओं के राज्योत्सव के वर्ष को दर्शाती हुई कुछ पुष्पिकाएँ –

## दुर्जनराजानपाला [7]

**मुकुन्ददेवङ्क अ23ङ्क सन् 1307 साले माहे मार्गशीर दि25न रविवारे बेळ द25ण्ड समयरे ये पुस्तक सम्पूर्ण होइला।**

यह 1307 संवत् 593 के युक्त होने से प्रचलिताब्द 1900 होता है। और यह वर्ष मुकुन्द देव महाराजा का 25 अङ्क भी है।

## अमरकोषगीता [8]

**"समस्त दिव्यसिंह देवङ्क अ23ङ्क सन 1285 साले ककडा 30 दिन ए पोस्तक सम्पूर्ण होइला। लेखनकार राघव नाएक ----।"**

इस मातृका का प्रतिलिपि अब्द 1285 साल अर्थात् 1878 प्रचलिताब्द है जो दिव्यसिंह देव के 23 अंक भी है।

## कपटपाशा [9]

**ए पोस्तक बढिला 17 अङ्क सन् 1201 साल मेष दि6ने शुक्रबारे रात्र पहरक ठारे भागवत घर।**

इसका प्रतिलिपि करण समय 1201 साल अर्थात् 1794 प्रचलिताब्द यानि साधारण वर्ष।

कुछ ऐसी भी पुष्पिकाएँ है, जिसमें किसी भी राजा की सूचना उपलब्ध नहीं है, परन्तु अंक की सूचना प्राप्त है।

## देउळतोळा [10]

**"समस्त अ27 अङ्क शाही बिछा दिन चन्द्रमाने चन्द्रमाने मार्गशीर कृष्णपक्ष सोमबारे पञ्चमी' ए दिन बेल दि8 लिता ठारे ए पोस्तेक लेखा बढिला।"**

## कलिंगाब्द

अगर संवत् के साथ विक्रम शब्द का प्रयोग हो तो प्रचलिताब्द से 57 संख्या न्यून होता है। लेकिन अगर संवत् के साथ कुछ विशेषण की सूचना नहीं है, तो यह कलिंगाब्द का सूचक ही है' जो वर्ष प्रचलिताब्द के 593 वर्ष पीछे है। मतलब अगर 1055 संवत् लिखा हो' तो इसमें 593 मिला देने से प्रचलिताब्द यानि 1648 है। इसका प्रयोग अधिकतया उत्तरपुष्पिका में होता है।

भारद्वाज नरसिंह कृत अभिनव जगन्नाथ प्रस्ताव की प्रतिलिपि के समय के बारे में सूचना देते हुए लेखक ने बताया –

शेष पृ. 56 पर

7 ओडिशा राज्य संग्रहालय, मातृका संख्या OL/420
8 ओडिशा राज्य संग्रहालय, मातृका संख्या OL/233
9 ओडिशा राज्य संग्रहालय, मातृका संख्या OL/636
10 ओडिशा राज्य संग्रहालय, मातृका संख्या OL/279

# भारतीय कैलेण्डर और पञ्चाङ्ग

**श्री अरुण कुमार उपाध्याय**
भारतीय पुलिस सेवा (अ. प्रा.)सी-/47, (हवाई अड्डा के निकट) पलासपल्ली, भुवनेश्वर।

**कैलेंडर तथा पंचांग का उपयोग प्रत्येक घर में होता है। आज प्रचलित कैलेंडर 01 जनवरी से प्रारम्भ होकर 31 दिसम्बर तक रहता है। लेकिन भारत में विभिन्न प्रकार की संवत्सर गणना की पद्धतियाँ मिलती हैं। अतः भारत में भी स्थानीय धार्मिक कार्यों को करने के लिए अनेक प्रकार के कैलेंडर होते हैं। पंचांग इसी का व्यापक रूप है। पंचांग में क्या-क्या जानकारियाँ दी जाती है तथा उनके क्या तात्पर्य तथा उपयोग हैं, इसे जानने के लिए गणित शास्त्र की दृष्टि से भारतीय तिचार करना आवश्यक हो जाता है। हम पंचांग का नाम सुनते ही यह समझ बैठते हैं कि यह ज्योतिषीजी के उपयोग के लिए है, लेकिन मेरा विश्वास है कि इस आलेख को पढ़ लेने के बाद स्वयं आप कालगणना की पद्धति से अवगत हो जायेंगे। लेखक के विस्तृत आलेख में से एक अंश यहाँ इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए प्रकाशित किया जा रहा है।**

## उपयोग-

पञ्चाङ्ग को अंग्रेजी में सामान्यतः कैलेण्डर कहते हैं। कैलेण्डर का उपयोग किसी निर्धारित समय से वर्तमान काल तक बीते दिन-मास-वर्ष की गणना करना है। इससे प्राचीन घटनाओं की तिथि निर्धारित की जाती है। हर दिन को ग्रह नाम से एक वार निर्धारित किया जाता है, जिनका क्रम है- रवि, सोम, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि।

इनमें रवि या सूर्य तारा है, तथा चन्द्र (सोम) पृथ्वी का उपग्रह। पर पृथ्वी के ऊपर प्रभाव के कारण सभी को ग्रह ही कहते हैं।

पाश्चात्त्य कैलेण्डर में केवल तिथि-वार का निर्धारण होता है। भारत में दिन का निर्धारण 5 प्रकार से होता है-तिथि, वार, नक्षत्र, योग, करण। हमारे सभी पर्व और पूजा चन्द्र की स्थिति के अनुसार होते हैं, क्योंकि चन्द्रमा मन को प्रभावित करता है। अंग्रेजी में भी चन्द्र का विशेषण ल्यूनर है तथा मनोरोगी को ल्यूनेटिक कहते हैं। चन्द्र का मन पर प्रभाव पूरे विश्व में पता था। फाइलेरिया आदि कई बीमारियों का चान्द्र तिथि से सम्बन्ध है। चन्द्र की स्थिति का कई प्रकार से निर्णय होता है-

(1) आकाश के किस भाग या नक्षत्र में चन्द्रमा है। इसे उस दिन का नक्षत्र कहते हैं।

(2) सूर्य से चन्द्रमा कितने अंश आगे है, अर्थात्

उसका कितना भाग प्रकाशित है। इसके अनुसार चान्द्र मास तथा तिथि होती है।

(3) तिथि का आधा भाग **करण** है। तिथि सामान्यतः 24 घण्टे तक होती है किन्तु उसमें आधा भाग दिन में ही काम होता है, अतः आधा भाग 1 करण हुआ।

(4) **योग** का अर्थ है सूर्य तथा चन्द्र की कोणीय स्थिति का योग। तिथि में चन्द्र तथा सूर्य का अन्तर होता है। इसका प्रयोग शुभ मुहूर्त या किसी काम का उपयुक्त समय निर्धारण के लिए है।

(5) इसके अतिरिक्त 7 वार का क्रम अंग्रेजी कैलेण्डर जैसा है।

## कैलेण्डर-

किसी समय से अब तक कितना समय बीता उसको वर्ष, मास, दिन में गिनते हैं। इसे कैलेण्डर कहते हैं। संस्कृत में कलन = संख्या या गणना।

**दिन-** व्यवहार में सूर्योदय से अगले सूर्योदय तक का समय। गनना के लिए अर्ध रात्रि से अगली अर्ध रात्रि का समय।

**मास-** मास का निर्णय मूलतः चन्द्र गति से हुआ है। पूर्णिमा से पूर्णिमा (जब चन्द्र पूरा प्रकाशित हो) का समय चान्द्र मास है। पृथ्वी की 1 परिक्रमा सौर वर्ष है जिसमें 12 चान्द्र मास से कुछ अधिक होते हैं। अतः वृत्त को 12 भाग में बांट दिया गया जिसे 1 राशि कहते हैं। 1 राशि में सूर्य गति (पृथ्वी से देखने पर) को 1 मास कहा गया। चान्द्र मास प्रायः 29.3 दिन का होता है। सौर मास या सूर्य का 1 राशि में समय 29.5 से 30.5 दिन तक का है। अतः मास को औसत 30 दिन का मानते हैं। 12 मास में 30 दिन होने पर वर्ष में प्रायः 360 दिन होंगे। अतः वृत्त को 360 अंश में बांटा गया है।

**वर्ष-** ऋतु आरम्भ से अगले ऋतु आरम्भ तक, सूर्य के चारो तरफ पृथ्वी की परिक्रमा।

रोमन कैलेण्डर में दिन की संख्या मास के आरम्भ से 1,2,3....30 या 31 तक करते हैं (तिथि)। इसके साथ 7 ग्रहों के नाम पर 7 वार हैं-

**रवि (सूर्य), सोम (चन्द्र), मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि।**

## पञ्चाङ्ग-

भारत में 5 प्रकार से दिन लिखते हैं। अतः यहाँ की काल गणना को पञ्चाङ्ग (5 अंग) कहते हैं। 5 अंग हैं-

1. **तिथि-** चन्द्र का प्रकाश 15 दिन तक बढ़ता है। यह शुक्ल पक्ष है जिसमें 1 से 15 तक तिथि है। कृष्ण पक्ष में 15 दिनों तक चन्द्र का प्रकाश घटता है। इसमें भी 1 से 15 तिथि हैं।
2. **वार-** 7 वार का वही क्रम ग्रहों के नाम पर।
3. **नक्षत्र-** चन्द्र 27.3 दिन में पृथ्वी का चक्कर लगाता है। 1 दिन में आकाश के जितने भाग में चन्द्र रहता है, वह उसका नक्षत्र है। 360 अंश के वृत्त को 27 भाग में बांटने पर 1 नक्षत्र 13 1/3 अंश का है। चन्द्र जिस नक्षत्र में रहता है, वह उस दिन का नक्षत्र हुआ।
4. **योग-** चन्द्र तथा सूर्य की गति का योग कर नक्षत्र के बराबर दूरी तय करने का समय योग है। 27 योग 25 दिन में पूरा होते हैं।
5. **करण-** तिथि के आधे भाग को करण कहते हैं।

## संवत्सर-

यह चान्द्र तथा सौर मास का समन्वय है। चान्द्र वर्ष से सौर वर्ष 11 दिन बड़ा होता है। अतः 30 या 31 मास के बाद 1 अधिक चान्द्र मास जोड़ कर दोनों को प्रायः समान किया जाता है, नहीं तो मास के अनुसार ऋतु नहीं होगा, हर 3 वर्ष में 1 मास पीछे खिसक जायेगा। चान्द्र तिथि के अनुसार पर्व त्योहार होते हैं

क्योंकि चन्द्रमा मन का कारक है। इस वर्ष पद्धति को इन अर्थों में संवत्सर कहते हैं-

(1) इसके अनुसार समाज चलता है। सम् +वत् + सरति = सम गति से चलता है।

(2) चान्द्र वर्ष स्वयं सौर वर्ष के साथ चलता है जिसके लिए अधिक वर्ष जोड़ते हैं।

पण्डित मधुसूदन ओझा के अनुसार, त्सर = छद्म गति। पृथ्वी की दिशा अपनी कक्षा में लगातार बदलती रहती है। उसके चक्र के अनुसार काल संवत्सर है।

सूर्य से 1 संवत्सर में प्रकाश जितनी दूर जाता है, वह भी संवत्सर क्षेत्र है। यहाँ तक सूर्य का प्रकाश ब्रह्माण्ड (गैलेक्सी) से अधिक है, तथा इसका आकार 30 धाम तक है (ऋक्, 10/189/3)। इसे सौर मण्डल भी कहा गया है, जो 1 प्रकाश वर्ष त्रिज्या का गोल है। पृथ्वी के भीतर 3 धाम हैं। बाहरी धाम पृथ्वी से आरम्भ कर क्रमशः 2-2 गुणा बड़े होते गये हैं (बृहदारण्यक उपनिषद्, 3/3/2)।

अतः क धाम की त्रिज्या = पृथ्वी त्रिज्या 2 घात (क -3)।

धाम माप को अहर्गण कहा गया है। जिस प्रकार वर्ष के संवत्सर में6 ऋतु हैं, उसी प्रकार सौर मण्डल संवत्सर में भी 6 वषट्कार क्षेत्र हैं। ये पृथ्वी सतह से आरम्भ कर 6-6 अहर्गण अन्तर पर हैं।

3 अहर्गण = पृथ्वी ग्रह।

9 अहर्गण =पृथ्वी का गुरुत्व क्षेत्र।

15 अहर्गण = सूर्य तक दूरी, पृथ्वी कक्षा।

21 अहर्गण = शनि कक्षा के बाहर तक, जिसे प्रकाश भाग कहा गया है।

27 अहर्गण = सूर्य का गुरुत्व क्षेत्र, धूमकेतु क्षेत्र।

33 अहर्गण = सौर मण्डल की सीमा।

## अन्य संवत्सर हैं-

(1) वेदाङ्ग ज्योतिष में 5 प्रकार के वत्सर कहे गये हैं, जिनके पूर्व 5 उपसर्ग लगते हैं- सम्, परि, इदा, अनु, इद्।

जिस चान्द्र वर्ष का आरम्भ सौर वर्ष से 1-6 तिथि के भीतर होता है, वह संवत्सर है। अन्य की आरम्भ तिथि क्रमशः 6-6 तिथि अधिक है।

(2) गुरु वर्ष भी संवत्सर है, जो प्रायः सौर वर्ष के समान है। यह गुरु की मध्यम गति से 1 राशि चलने का समय है-प्रायः 361 दिन 4 घण्टे।

(3) सौर वर्ष के गुणक में बड़े काल मान भी संवत्सर हैं-दिव्य संवत्सर = 360 वर्ष, बार्हस्पत्य संवत्सर चक्र = 60 वर्ष, सप्तर्षि संवत्सर = 2700 वर्ष, ध्रुव संवत्सर = 8100 वर्ष।

वेदाङ्ग ज्योतिष का प्रसिद्ध कथन है-

**पञ्च संवत्सरमयं युगम्।**

इसके कई अर्थ हैं-

(1) 5 वर्ष का लघु युग होता है जिसमें 2 अधिक मास होते हैं।

(2) ऋक् ज्योतिष 19 सौर वर्ष का होता है जिसमें 7 अधिक मास हैं। 19 वर्षों में 5 वर्ष संवत्सर हैं, अन्य 14 वर्ष अन्य 4 प्रकार के वत्सर हैं।

(3) 5 प्रकार के संवत्सरोंसे युग का निर्णय होता है, जैसे 5 प्रकार से दिन का निर्णय। ये 5 संवत्सर हैं- बार्हस्पत्य या गुरु वर्ष, दिव्य वर्ष, सप्तर्षि वर्ष, ध्रुव वर्ष, सहस्र वर्ष।

## भारत के मुख्य कैलेण्डर

### 1. स्वायम्भुव मनु (29102 ई.पू.) से-

ऋतु वर्ष के अनुसार-विषुव वृत्त के उत्तर और दक्षिण 3-3 पथ 12, 20, 24 अंश पर थे जिनको सूर्य 1 -1 मास में पार करता था। उत्तर दिशा में 6 तथा दक्षिण दिशा में भी 6 मास। (ब्रह्माण्ड पुराण 1/22 आदि)। इसे पुरानी इथिओपियन बाइबिल में इनोक की पुस्तक के अध्याय 82 में भी लिखा गया है। इस समय अभिजित्

नक्षत्र से वर्ष आरम्भ होता था जिसका संशोधन कार्त्तिकेय काल में हुआ जब धनिष्ठा से वर्ष का आरम्भ हुआ (महाभारत, वन पर्व, 230/8-10)। ऋग् ज्योतिष (32, 5,6) याजुष ज्योतिष (5-7) में इसी वर्ष का उल्लेख है, जो माघ शुक्ल पक्ष से आरम्भ होता था, जब सूर्य धनिष्ठा में हो।

**2. ध्रुव-**

इनके मरने के समय 27376 ई.पू. में ध्रुव सम्वत्- जब उत्तरी ध्रुव पोलरिस (ध्रुव तारा) की दिशा में था।

**3. क्रौञ्च सम्वत्-**

8100 वर्ष बाद 19276 ई.पू. में क्रौञ्च द्वीप (उत्तर अमेरिका) का प्रभुत्व था (वायु पुराण, 99/419)।

**4. कश्यप (17500 ई.पू.)**

भारत में आदित्य वर्ष-अदितिर्जातम् अदितिर्जनित्वम्-अदिति के नक्षत्र पुनर्वसु से पुराना वर्ष समाप्त, नया आरम्भ। आज भी इस समय पुरी में रथ यात्रा।

**5. कार्त्तिकेय-**

15800 ई.पू.-उत्तरी ध्रुव अभिजित् से दूर हट गया। धनिष्ठा नक्षत्र से वर्षा तथा सम्वत् का आरम्भ। अतः सम्वत् को वर्ष कहा गया। (महाभारत, वन पर्व 230/8 -10)

**6. वैवस्वत मनु-**

13902 ई.पू.- चैत्र मास से वर्ष आरम्भ। वर्तमान युग व्यवस्था।

**7. वैवस्वत यम-**

11,176 ई.पू. (क्रौञ्च के 8100 वर्ष बाद)। इनके बाद जल प्रलय। अवेस्ता के जमशेद।

**8. इक्ष्वाकु-**

महालिंगम के अनुसार उनका काल 1-11-8576 ई.पू. चैत्र शुक्ल प्रतिपदा से हुआ। यह तंजाउर के मन्दिरों की गणना के आधार पर है। इनके पुत्र विकुक्षि को इराक में उकुसी कहा गया जिसके लेख 8400 ई.पू. अनुमानित हैं।

**9. परशुराम- 6177 ई.पू. से कलम्ब (कोल्लम) सम्वत्।**

परशुराम 19वें त्रेता में थे। 28वां ऐतिहासिक युग (360 वर्ष) का 3102 ईपू में समाप्त हुआ। अतः परशुराम काल 6702-6342 ईपू था। उनका निर्वाण इस युग के बाद हुआ। सहस्राब्द छोड़ने पर 824 ई. में कलम्ब (कोल्लम) संवत् आरम्भ हुआ। अतः परशुराम संवत् 7,000-823 = 6177 ईपू में आरम्भ हुआ। 6 या 8 हजार लेने पर यह परशुराम युग में नहीं होगा।

**10. युधिष्ठिर काल के 4 पञ्चाङ्ग-**

(क) अभिषेक-17-12-3139 ई.पू. (इसके 5 दिन बाद उत्तरायण में भीष्म का देहान्त)

(ख) 36 वर्ष बाद भगवान् कृष्ण के देहान्त से कलियुग 17-2-3102 उज्जैन मध्यरात्रि से। 2 दिन 2-27-30 घंटे बाद चैत्र शुक्ल प्रतिपदा।

(ग) जयाभ्युदय-6 मास 11 दिन बाद परीक्षित अभिषेक 22-8-3102 ई.पू. से

(घ) लौकिक-ध्रुव के 24300 वर्ष बाद युधिष्ठिर देहान्त से, कलि 25 वर्ष = 3076 ई.पू से कश्मीर में (राजतरंगिणी)

**11. भटाब्द-**

आर्यभट- कलि 360 = 2742 ई.पू से। महासिद्धान्त (2/1-2) के अनुसार कलि आरम्भ में 2 मत प्रचलित थे- आर्य मत तथा पराशर मत। पराशर मत का वर्णन विष्णु पुराण, खण्ड 2 में उनके द्वारा मैत्रेय को उपदेश है। यह सूर्य सिद्धान्त परम्परा में है, जो अभी चल रहा है। आर्यभट ने कलि के कुछ बाद स्वायम्भुव या पितामह मत का पुनरुद्धार (संशोधन) किया जिसे आर्य मत कहा। आज भी आर्यभट के स्थान पटना के निकट पितामह को आर्य (अजा) कहते हैं। आर्यभट के समय कलि के बाद कोई शक आरम्भ

नहीं हुआ था, अतः उन्होंने अपने समय में 60 वर्ष के 6 चक्र कहे हैं। 1909 ई. में थीबो तथा सुधाकर द्विवेदी ने इसे 60 चक्र कर दिया। 3600 कलि में पटना शासन केन्द्र नहीं था तथा उस समय शालिवाहन शक का प्रयोग होता।

### 12. जैन युधिष्ठिर शक-

काशी राजा पार्श्वनाथ का सन्यास- 2634 ई.पू. (मगध अनुव्रत- 12वां बार्हद्रथ राजा)। जिनविजय महाकाव्य में इसी शक में कालकाचार्य, कुमारिल भट्ट तथा शंकराचार्य का काल दिया है।

### 13. शिशुनाग शक-

पाल बिगण्डेट की पुस्तक बर्मा की बौद्ध परम्परा में बुद्ध निर्वाण से अजातशत्रु काल में एक नये वर्ष का आरम्भ कहा गया है (बर्मी में इत्यान = निर्वाण)। इसके 148 वर्ष पूर्व अन्य वर्ष आरम्भ हुआ था जिसे बर्मी में कौजाद (शिशुनाग?) कहा है। बुद्ध निर्वाण (27-3-1807 ई.पू.) से 148 वर्ष पूर्व 1954 ई.पू. में शिशुनाग का शासन समाप्त हुआ।

### 14. नन्द शक-

महापद्मनन्द का अभिषेक सभी पुराणों का विख्यात कालमान है। यह परीक्षित जन्म के 1500 (1504) वर्ष बाद हुआ था। इसमें 1500 को पार्जिटर ने 1050 (पञ्चशत तो पञ्चाशत) कर दिया, जिससे कलि आरम्भ को बाद का किया जा सके। खारावेल शिलालेख में भी लिखा है कि नन्द अभिषेक के त्रिवसुशत (803) वर्ष के बाद उसके शासन के 4 वर्ष पूर्ण हुये जब उसने प्राची नहर की मरम्मत करायी। यह नन्द काल में बनी थी। यहाँ 'त्रिवसु शत' को 'त्रिवर्ष शत' कर इतिहासकारों ने 103 या 300वर्ष आदि मनमाने अर्थ किये हैं।

### 15. शूद्रक शक-

असीरिया इतिहास में वर्णित भारत पर सबसे बड़ा आक्रमण सेमिरामी के नेतृत्व में उत्तर अफ्रीका तथा मध्य एशिया के राजाओं द्वारा हुआ। उसके प्रतिकार के लिए विष्णु अवतार बुद्ध ने आबू पर्वत पर 4 अग्निवंशी राजाओं का संघ बनाया (भविष्य पुराण, प्रतिसर्ग पर्व, 1/6/45-49)। उसके अध्यक्ष इन्द्राणीगुप्त को सम्मान के लिए शूद्रक कहा गया क्योंकि वे 4 राजाओं के मालव गण के अध्यक्ष थे। गण की स्थापना के समय 756 ईपू. में शूद्रक शक आरम्भ हुआ। जेम्स टाड ने सभी राजपूत राजाओं को विदेशी शक मूल का सिद्ध करने के लिये उनकी बहुत सी वंशावलियाँ तथा ताम्रपत्र आदि नष्ट किये तथा राजस्थान कथा (Annals of Rajasthan) में अग्निवंशी राजाओं का काल थोड़ा बदल कर प्रायः 725 ई.पू. कर दिया।

काञ्चुयल्लार्य भट्ट- ज्योतिष दर्पण-पत्रक 22 (अनूप संस्कृत लाइब्रेरी, अजमेर एम्.एस नं 4677)-

**बाणाब्धि गुणदस्रोना (2345)**
**शूद्रकाब्दा कलेर्गताः ॥71॥**
**गुणाब्धि व्योम रामोना (3043)**
**विक्रमाब्दा कलेर्गताः॥**

### 16. चाहमान शक-

612 ई.पू. में (बृहत् संहिता 13/3)- असीरिया राजधानी निनेवे ध्वस्त (बाइबिल के जेनेसिस, अध्याय 10 से आरम्भ कर 18 बार उल्लेख)। यहूदी विश्वकोष के अनुसार इसका ध्वंस सिन्ध पूर्व के मधेस (मध्य देश) के राजा ने किया था।

### 17. श्रीहर्ष शक-

456 ई.पू.- मालव गण का अन्त। अल बरूनी के अनुसार यह विक्रम संवत् के 400 वर्ष पूर्व था। मेगास्थनीज आदि लेखकों ने शूद्रक से श्रीहर्ष तक 300 वर्ष को गणराज्य काल लिखा है।

### 18. विक्रम सम्वत्-

उज्जैन के परमार राजा विक्रमादित्य द्वारा 57 ई.पू. से

**19. शालिवाहन शक-**

विक्रमादित्य के पौत्र द्वारा 78 ई.से।

**20. कलचुरि या चेदि शक-** 246 ई. से

**21. वलभी भंग (319 ई.)**

गुजरात के वलभी में परवर्त्ती गुप्त राजाओं का अन्त (अल बरूनि)। पञ्चाङ्ग ज्ञान शून्य इतिहासकार इसके 1 वर्ष बाद गुप्त काल का आरम्भ समझते हैं।

## विदेशी कैलेण्डर

**1. इनोक-**

इथिओपिया की पुरानी बाइबिल के भाग 3 इनोक के अध्याय 72-81 में। वर्ष के 4 भाग 91-91 दिनों के, उसके बाद 1 दिन छुट्टी। 91 दिन में विषुव के उत्तर या दक्षिण के 3-3 मार्ग पर 1-1मास सूर्य। बाइबिल (जेनेसिस 5/21-इनोक की आयु 365 वर्ष)

**2. मिस्र-**

30-30 दिनों के 12 मास। अन्त में 5 दिन जोड़ते थे। भारत में 12 x 30 दिनों का वत्सर, उसके बाद पाञ्चरात्र, कभी कभी षडाह। सिरियस तारा (मिस्र में थोथ) के उदय से थोथ मास और वर्ष आरम्भ। 1460 वर्ष के बाद 1 वर्ष जोड़ते थे।

**3. सुमेरिया-**

चान्द्र सौर वर्ष में 354, 355, 383, 384 दिन। दो प्रकार से अधिक मास की गणना।

अष्टक-8 ऋतु वर्ष = 2921.94 दिन, 99 चान्द्र मास ( 3 अधिक) = 2923.53 दिन।

383 ई.पू. से-मेटन चक्र-19 सौर वर्ष = 6939.60 दिन, 235 चान्द्र मास (7 अधिक) = 6939.69 दिन।

**4. यहूदी वर्ष-**

7/8-10-3761 ई.पू. (रवि-सोम वार के बीच की मध्यरात्रि से) 11 बजे 11मिनट 20 सेकण्ड से। यहूदी वर्ष 3831 (71 ई.) में यहूदी राज्य नष्ट।

**5. इरानी-**

**(क) दारा (Darius)-** 520 ई.पू. से-365 दिनों के 12 सौर मास। 120 वर्ष के बाद 30 दिनों का अधिक मास।

**(ख) तारीख-ए-जलाली-** 1074 ई. में सेल्जुक राजा जलालुद्दीन मलिक द्वारा-365 दिनों के 33 वर्षों के बाद 8 दिन अधिक।

(ग) **पहलवी (तमिल का पल्लव-शक्तिशाली, पहलवान)-** 1920 ई. में रजा शाह पहलवी द्वारा-पुराने नामों के साथ सौर वर्ष।

**6. असीरिया में 747 ई.पू. में नबोनासिर (लवणासुर)-**

इसके दमन के लिये भारत में 756 ई.पू. में शूद्रक की अध्यक्षता में मालव-गण।

**7. सेलुसिड-**

312 ई.पू.-सुमेरियन नकल पर ग्रीक सेनापति सेल्यूकस द्वारा।

**8. जुलियन-**

रोमन राजा जुलियस सीजर द्वारा- उत्तर यूरोप में 2 मास बर्फ से ढंके रहते थे अतः बाकी 304 दिनों के 10 मास होते थे। नुमा पोम्पियस ने 673 ई.पू. में 2 मास जोड़ कर 355 दिनों का वर्ष शुरु किया। जनवरी से वर्ष का अन्त तथा आरम्भ (जानुस देवी का दोनों तरफ मुंह -जैसे अदिति का या विक्रम सम्वत् का चैत्र मास)। फरवरी के बाद 2 या 3 वर्ष पर 22 या 23 दिन का अधिक मास मरसिडोनियस जोड़ते थे। 46 ई.पू. में जुलियस सीजर ने मिस्र से सम्पर्क होने के बाद उत्तरायण से सौर वर्ष आरम्भ करने का आदेश दिया। पर लोगों ने 7 दिन बाद जब विक्रम सम्वत् गत वर्ष 10 का पौष मास आरम्भ हो रहा था, उस दिन से नया वर्ष शुरु किया (1-1-45 ई.पू.)। मूल वर्ष आरम्भ तिथि को कृष्ण-मास (सबसे लम्बी रात) कहा गया जो आजकल क्रिस्मस है। प्रायः 400 वर्ष बाद कौन्स्टैण्टाइन ने ईसा के काल्पनिक जन्म के अनुसार इसका आरम्भ 45 वर्ष बाद से कर दिया। प्रतिवर्ष 365 दिन का होता था तथा

4 वर्ष में 1 दिन अधिक था।

### 9. हिजरी वर्ष-

19-3-622 ई. से विक्रम वर्ष 679 के आरम्भ के साथ हिजरी वर्ष पैगम्बर मुहम्मद द्वारा आरम्भ हुआ। अरब में पञ्चांग गणना (कलन) करने वालों को कलमा कहते थे। इसी परिवार में मुहम्मद का जन्म हुआ था। 632 ई. में उनके देहान्त तक 3 अधिक मास जोड़े गये। अन्तिम मास में हज के समय अधिक मास का फैसला होता था। पैगम्बर के देहान्त के बाद इसका निर्णय करने वाला कोई नहीं रहा और यह पद्धति बन्द हो गयी (अल बरूनी द्वारा-प्राचीन देशों की काल गणना)। इसकी गणना ब्रह्मगुप्त के ब्राह्म स्फुट सिद्धान्त पर आधारित थी अतः खलीफा अल-मन्सूर के समय इसका अरबी अनुवाद हुआ। ब्रह्म = अल-जबर (महान्), स्फुट सिद्धान्त = उल-मुकाबला। इसमें पहले गणित भाग था, अतः अल-जबर-उल-मुकाबला से बीजगणित का नाम अलजेब्रा हुआ।

### 10. ग्रेगरी-

1752 ई. में ब्रिटेन में ग्रेगरी ने जुलियन कैलेण्डर में संशोधन किया। 4 दिनों में लीप वर्ष (366 दिन का) जारी रहा, पर शताब्दी वर्षों में केवल उन्हीं शताब्दी वर्षों में रहा जो 400 से विभाजित हों। 1 ई. से गणना में 11 दिन की अधिक गिनती होने के कारण 3 सितम्बर को 14 सितम्बर कहा गया।

***

## "उत्कलीय परम्परा में मातृकाओं में संवत्सर का प्रयोग" का शेषांश पृ. 49 से

**शकाब्दे बाणकालाश्व नक्षत्रेशप्रमाणके।**
**स्तम्भे श्रीपत्तनवासी स्वयमाविरभूद्धरिः॥**[11]

हजारों मातृकाओं में कलिंगाब्द की सूचना मिलती है। लेकिन कुछ मातृकाएँ राजाओं का नामोल्लेख कि विना सिर्फ अंक की सूचना दी गयी है। इस परिस्थिति में पत्र की अवस्था' लिखनशैली आदियों को देखकर ही मातृका का समय निर्धारित हो सकता है।

***

11 ओडिशा राज्य संग्रहालय मातृका संख्या L/41

# कर्मकाण्ड में संकल्प के सन्दर्भ में संवत्सर

**पं. मार्कण्डेय शारदेय**
सनातन ज्योतिष, पाटलिग्राम एपार्टमेंट, शहीद भगत सिंह पथ, बजरंगपुरी, गुलजारबाग, पटना-800007

**किसी भी कर्मकाण्ड में संकल्प का अत्यधिक महत्त्व होता है। संकल्प के पाँच अंग होते हैं- देश, काल, पात्र, साधन तथा साध्य। इसी क्रम में काल का भी विवेचन होता है। परम्परागत रूप से हेमाद्रि-कृत चतुर्वर्ग-चिन्तामणि में विस्तृत संकल्पवाक्य मिलता है। इसका संक्षिप्त रूप प्रचलन में है। इसमें भी ब्रह्मा के दिन से लेकर पूजा के दिन की तिथि आदि का उच्चारण किया जाता है। यह कालगणना की भारतीय पद्धति है, जिसमें ब्रह्मा के दिन के दूसरे परार्द्ध में श्वेतवाराह कल्प में, वैवस्वत नामक मन्वन्तर में, अठाइसवें कलियुगे, बौद्धावतार में, तात्कालिक, ऋतु, मास, पक्ष, तिथि तथा उस दिन प्रत्येक ग्रह की राशियों में अवस्थिति का उल्लेख किया जाता है। यह संकल्पवाक्य का महत्त्वपूर्ण अंग है। इसका विवेचन यहाँ किया जा रहा है।**

**'संकल्पमूलः कामो वै यज्ञाः संकल्प-सम्भवाः।**
**व्रता नियम-धर्माः च सर्वे संकल्पजाः स्मृताः'॥**

( मनुस्मृति-2.3)

आशय यह कि इच्छाएँ, यज्ञ, व्रत, नियम एवं धर्म; सभी संकल्प पर ही आधारित हैं।

मन के दो पाँव हैं: संकल्प और विकल्प।ये दोनों सदा गतिमान रहते हैं, इसलिए मन चंचल रहता है। संकल्प स्थिरता का सूचक है तो विकल्प अस्थिरता, भ्रान्ति का।कभी-कभी एक के अभाव में दूसरा ग्राह्य बनकर विकल्प भी संकल्प का सहयोगी बन जाता है।

संकल्प मन का कार्य है।यह सफलता की ओर तभी जा सकता है, जब वाणी बोले और शरीर लगे। यानी मन, वाणी, कर्म; तीनों की संलग्नता से ही सिद्धि सम्भव है। केवल मानस कर्म रूपी संकल्प शोच बनकर ही रह जाएगा। इसीलिए हमारे यहाँ धार्मिक विधानों में मनोगत संकल्प को वाचिक, तत्पश्चात् कायिक विधि बताई गई है। इच्छा की जड़ संकल्प है, यज्ञ संकल्प से ही उत्पन्न होते हैं। व्रत, नियम एवं धर्म; ये सभी संकल्प-जन्य ही हैं; इसलिए जीवन के अन्य क्षेत्र की तरह कर्मकाण्ड में भी इसका मूल्य अन्यून है।

'कर्मकाण्डप्रदीप' के प्रणेता श्री अन्ना शास्त्री वारे अपने ग्रन्थ के 'परिभाषा प्रकरण' में संकल्प-विचार का प्रारम्भ करते 'मार्कण्डेय पुराण' का कथन उद्धृत करते हैं-

**'संकल्प्य विधिवत् कुर्यात् स्नान-दान- व्रतादिकम्'।**

यानी, विधवत् संकल्प कर ही स्नान, दान, व्रत आदि करें।इसी तरह वह सांकल्पिक महत्तावाली अन्य शास्त्रोक्तियाँ भी उद्धृत करते हैं-

'तिथितत्त्व' में भविष्यपुराणोक्ति-

**संकल्पेन विना विप्र यत्किंचित् कुरुते नरः।**
**फलं चाल्पाल्पकं तस्य धर्मस्यार्द्धक्षयो भवेत्॥**

(संकल्प के बिना मनुष्य जो कुछ करता है, उसका अल्प से अल्प फल ही प्राप्त होता है तथा वह धार्मिक कृत्य अपूर्ण ही रहता है।)

प्रश्न हो कि संकल्प में क्या-क्या उल्लेखनीय है? तो देवल का कथन है-

**मास-पक्ष-तिथीनां च निमित्तानां च सर्वशः।**
**उल्लेखनम् अकुर्वाणो न तस्य फलभाग्भवेत्॥**

(मास, पक्ष, तिथि, निमित्त आदि का सम्यक् प्रकार से उल्लेख न करने पर व्यक्ति उस कर्म के फल का भागी नहीं हो पाता।)

अब प्रश्न यह भी हो सकता है कि एकदिवसीय कृत्य के संकल्प में तिथि आदि का उल्लेख तो सम्भव है, परन्तु यदि अनेकदिवसीय जप, यज्ञ आदि हों तो क्या प्रथम दिवसीय संकल्पोक्त तिथ्यादि से काम चल सकता है? तो इसपर विद्वानों का मन्तव्य है कि जब हम आज के मासादि का प्रयोग कर यह कहते हैं कि नवाह्निक पाठ / सप्ताह-परायण / त्रिदिवसीय जप....करेंगे तो अध्याहार हो ही जाता है।

सामान्यतः संकल्प के पाँच खण्ड होते हैं: कालखण्ड, स्थानखण्ड, नियतखण्ड, देवाश्रित-खण्ड तथा वैयक्तिक खण्ड।

## 1.कालखण्ड

इसमें सृष्टि से आजतक के समय का उल्लेख होता है। वर्तमान में सृष्टि के प्रारम्भ से अबतक ब्रह्माजी के दिन का द्वितीय परार्द्ध चल रहा है। यानी, उनके जीवन का आधा भाग बीत गया है। पुनः आधे का आधा बीत गया और शेष आधे भाग के साथ सृष्टि में लगे हैं। यों भी कहा जा सकता है कि यदि सौ वर्षों की आयु मानी जाए तो 75% बिताकर चल रहे हैं।

ब्रह्माजी का वर्ष हमारे वर्ष-सा नहीं है। उनका कालमान ऐसे समझाना होगा-

हमारा सामान्य वर्ष = 360 दिन।

हमारा 1 वर्ष = देवताओं का अहोरात्र (एक दिन-रात, एक दिव्य दिन)।

हमारा 360 वर्ष = देवताओं का 1 वर्ष।

हमारा 360 × 360 >129,600 वर्ष = देवताओं का 100 वर्ष।

युग चार हैं, जिन्हें समेकित रूप में महायुग कहते हैं। चारों ये हैं- सत्ययुग, त्रेता, द्वापर एवं कलियुग; जो 12000 दिव्य वर्षों का होता है। यानी हमारा 360 × 12000 = 4,320,000 वर्ष है।

इनमें 4800 दिव्य वर्षों का सत्ययुग, 3600 दिव्य वर्षों का त्रेतायुग, 2400 दिव्य वर्षों का द्वापरयुग तथा 1200 दिव्य वर्षों का कलियुग। मानववर्ष के अनुसार 1728000, 1296000, 864000, एवं 432000 वर्षों का चारों युगों का मान होता है। यानी 4320000 मानवीय वर्षों का एक महायुग।

71 महायुगों का 1 मन्वन्तर होता है,यानी और देवताओं के 2000 महायुगों का, यानी 12000 × 2000 = 24,000,000 दिव्य वर्ष > ब्रह्माजी का एक अहोरात्र होता है, जिसे एक कल्प कहते हैं।

एक कल्प में 14 मनु (स्वायंभुव, स्वारोचिष, औत्तम, तामस, रैवत, चाक्षुष, सावर्णि, रौच्य, वैवस्वत, भौत्य, मेरुसावर्णि, ऋत, ऋतधामा तथा विष्वक्सेन) होते हैं। प्रत्येक मनु 71 चतुर्युगी से भी कुछ अधिक (71 6/54 ) समय तक अपना अधिकार रखते हैं। यह रहा, ब्रह्माजी के एक अहोरात्र का मान। ऐसे ही 30 दिनों का उनका एक मास होता है, जो अमान्ततिथि के कारण इन तीस नामों से जाने जाते हैं-

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| 1 | श्वेतवाराह | 11 | व्यान | 21 | पुमान् |
| 2 | नीललोहित | 12 | सारस्वत | 22 | वैकुण्ठ |
| 3 | वामदेव | 13 | उदान | 23 | लक्ष्मी, |
| 4 | रथन्तर | 14 | गारुड | 24 | सावित्री |
| 5 | रौरव | 15 | कौर्म (पूर्णिमा) | 25 | घोर |
| 6 | प्राण | 16 | नारसिंह | 26 | वाराह |
| 7 | बृहत्कल्प | 17 | समान | 27 | वैराज |
| 8 | कन्दर्प | 18 | आग्नेय | 28 | गौरी |
| 9 | सत्य व सद्म | 19 | सोम | 29 | माहेश्वर |
| 10 | ईशान | 20 | मानव | 30 | पितृ (अमावस्या) |

360 दिन का उनका एक वर्ष और 100 वर्षों की उनकी परमायु होती है। वर्तमान कल्प वाराहकल्प है, क्योंकि इसी में श्रीहरि का वराहावतार हुआ है।

अभी कलियुग चल रहा है, जिसके 5121 वर्ष बीत गए हैं। चूँकि इसका भोगकाल 432000 मानववर्ष है और इसके प्रत्येक चरण 108,000 वर्षों के हैं, अतः अभी प्रथम में ही 102,879 वर्ष शेष हैं।

अब हम इसे ऐसे समझें कि वर्तमान में ब्रह्माजी का द्वितीय परार्द्ध चल रहा है, जो श्वेतवाराह कल्प के नाम से ख्यात है। यह समय वैवस्वत मन्वन्तर है, जिनके काल में 27 चतुर्युग बीत गए और 28वें के अन्तर्गत कलियुग चल रहा है।अभी कलिकाल का प्रथम चरण है।

## संकल्पोक्त भौगोलिक विवरण

सृष्टि से कलियुग तक की कालगणना हुई।अब स्थान पर आया जाए। हम पटना (बिहार) को ही केन्द्र मानकर आकलन करें। सबसे बड़ा है ब्रह्माण्ड, जिसमें सम्पूर्ण सृष्टि समाई है। इसी में चौदह लोक हैं; धरती से लेकर सात ऊपर और सात नीचे। धरती को लेकर ऊपरवाले सात हैं- भूलोक, भुवर्लोक, स्वर्लोक, महर्लोक, जनलोक, तपःलोक तथा सत्यलोक। नीचेवाले हैं- अतल, वितल, सुतल, तलातल, महातल, रसातल एवं पाताल।भूलोक भी सात द्वीपों में बँटा है- जम्बूद्वीप, प्लक्षद्वीप, शाल्मलिद्वीप, कुशद्वीप, क्रौंचद्वीप, शाकद्वीप एवं पुष्करद्वीप।

हम जम्बूद्वीप में हैं। पुराणों के अनुसार यह पृथ्वी के मध्य में है। यह गोल है और चारों ओर से खारे समुद्रों से घिरा है। इसके नौ खण्ड हैं-

भरत, किंपुरुष, हरिवर्ष, इलावृत, भद्राश्व, केतुमाल, उत्तरकुरु, रम्यक एवं हिरण्मय।

हम भरत खण्ड में हैं, जिसे हिमालय से दक्षिण माना गया है। इसके भी नौ भाग- इन्द्रद्वीप, कसेरु, तम्रपर्ण, गभस्तिमान्, नागद्वीप, सौम्य, गन्धर्व, वारुण एवं सागरसंवृत हैं। भारत के प्राचीन जनपदों में कुरु, पांचाल, पुण्ड्र, कलिंग, मगध, सौराष्ट्र, शूर, आभीर, अर्बुदगण, कारूष, मालव, परियात्र, सौवीर, सैन्धव, हूण, साल्व, कोशल, माद्र, आराम, अम्बष्ठ एवं पारसीक रहे हैं। पटना का प्राचीन नाम पाटलिपुत्र है, जो गंगानदी के दक्षिणी तट पर है।

चूँकि संकल्प-वाक्यों में पहले बृहत् कालमान का उल्लेख फिर देश, स्थान का उल्लेख देखा जाता है, जिनकी चर्चा कर चुके हैं। अब पंचांग-गृहीत मान्य संवत् से तात्कालिक मुहूर्त का निर्देश आवश्यक है, ताकि सृष्टि से जुड़ सकें।

यों तो समग्र कालभेदों को एक साथ करना अच्छा होता, परन्तु आचार्यों ने प्रथमतः युगपर्यन्त, पश्चात् ब्रह्माण्ड से निश्चित ग्राम-नगर तक की

भौगोलिक स्थिति का, तदनन्तर वर्ष आदि का व्यवहार किया है। इसी आधार पर अब शेष काल निर्देश्य हैं।

वैक्रम संवत् का यह 2077वाँ वर्ष है। ऐसा शास्त्रवचन है कि कलियुग का 3044 वर्ष बीतने पर विक्रम संवत् प्रारम्भ हुआ-

**यदा गतकलेरब्धि-वेदाभ्र-पावकैर्गताः।**
**श्रीविक्रमार्क-राज्यस्य संवत्प्रारम्भकः स्मृतः॥**

(बृहद्दैवज्ञ रंजन, तृतीय प्रकरण-29)॥

यह तो वर्षगणना हुई। अब यह भी जानना है कि संवत् 60 हैं और पाँच-पाँच संवतों का एक-एक लघुयुग भी होता है। लघुयुगों की संख्या 12 है, जिनके स्वामी क्रमशः विष्णु, जीव (बृहस्पति), इन्द्र, अग्नि तथा दहन हैं। 60 संवत् के नामों की सूची देखी जा सकती है।

यों तो हमारे यहाँ मासारम्भ के कई रूप हैं, पर चैत्रादि क्रम अधिक प्रचलित है।इसलिए चैत से फागुन तक बारह महीने गिने जाते हैं। हाँ, चैत्रादि ये महीने चन्द्रमा से सम्बन्धित हैं, अतः चान्द्र मास कहलाते हैं। सूर्य से भी महीने होते हैं, जो एक राशि से दूसरी राशि पर सूर्य के संक्रमण से बनते हैं। इसका क्रम- मेष. वृष, मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धनु, मकर, कुम्भ तथा मीन है। सूर्यगति के आधार पर ही दो अयन हैं। मकर से मिथुन राशि तक की सूर्यस्थिति उत्तरायण एवं कर्क से धनु तक की स्थिति दक्षिणायन है। पुनः मेष से कन्या तक राशियों पर सूर्यस्थिति उत्तरी गोल पर एवं तुला से मीन तक दक्षिणी गोल माना जाता है।सूर्य एक राशि पर लगभग एक महीना रहता है।

प्रायः चैत्र में सूर्य मेष राशि पर आता है और चन्द्रमा का महीना भी यहीं से प्रारम्भ होता है।यों तो असल में सौर मास से ही दो-दो महीनों की एक-एक ऋतु होती है, पर चान्द्र मास से भी मान लिया जाता है। इस कारण मीन-मेष (चैत्र-वैशाख) वसन्त, वृष-मिशुन (ज्येष्ठ-आषाढ) ग्रीष्म, कर्क-सिंह (श्रावण-भाद्रपद) वर्षा, कन्या-तुला (आश्विन-कार्तिक) शरद, वृश्चिक-धनु (मार्गशीर्ष-पौष्य) हेमन्त एवं मकर-कुम्भ (माघ-फाल्गुन) शिशिर ऋतु मान्य हैं।

हमारे यहाँ पंचांग का बड़ा महत्त्व है, क्योंकि इसमें तिथि, वार, नक्षत्र, योग तथा करण का समय निर्धारित रहता है।ज्योतिष-निर्दिष्ट उचित समय पर कार्यारम्भ के लिए पंचांगशुद्धि आवश्यक होती है।रविवार आदि सात दिनों पर कहीं कोई सन्देह नहीं रहता, परन्तु तिथियों में ह्रास-वृद्धि होती रहती है, अतः इस शेष चारों का कालमान जानना जरूरी होता है।

चन्द्रमा एक राशि पर लगभग सवा दो दिन रहता है। चन्द्रतिथियाँ प्रतिपदा, द्वितीया, तृतीया, चतुर्थी, पंचमी, षष्ठी, सप्तमी, अष्टमी, नवमी, दशमी, एकादशी, द्वादशी, त्रयोदशी, चतुर्दशी, पूर्णिमा / अमावस्या होती हैं। शुक्लप्रतिपदा से चलनेवाला अमान्त मास तथा कृष्णप्रतिपदा से चलनेवाला पूर्णिमान्त मास कहलाता है।

नक्षत्र 27 हैं, जिनपर चन्द्रमा के गमन से तिथियाँ बनती हैं। अमावस्या को तो सूर्य और चन्द्र एक ही राशि-नक्षत्र पर रहते हैं, परन्तु पूर्णिमा होते-होते चन्द्रमा सूर्य से छठी राशि पर आ जाता है। फिर अमावस्या आते-आते सूर्य के साथ जुड़ जाता है। नक्षत्रों के नाम क्रमशः ये हैं- **1. अश्विनी, 2. भरणी, 3. कृत्तिका, 4. रोहिणी, 5. मृगशिरा, 6. आर्द्रा, 7. पुनर्वसु, 8. पुष्य, 9. आश्लेषा, 10. मघा, 11. पूर्वाफाल्गुनी, 12. उत्तराफाल्गुनी, 13. हस्त, 14. चित्रा, 15. स्वाती, 16. विशाखा, 17. अनुराधा, 18. ज्येष्ठा, 19. मूल, 20. पूर्वाषाढा, 21. उत्तराषाढा, 22. श्रवण, 23. धनिष्ठा, 24. शतभिषा, 25. पूर्वाभाद्रपदा, 26. उत्तराभाद्रपदा एवं 27. रेवती।**

नक्षत्रों के समान ही 27 योग भी होते हैं; जो नित्य और नैमित्तिक नाम से जाने जाते हैं। विष्कम्भादि नित्य योग इस प्रकार हैं- **1. विष्कम्भ, 2. प्रीति, 3. आयुष्मान्, 4. सौभाग्य, 5. शोभन, 6. अतिगण्ड, 7. सुकर्मा, 8. धृति, 9. शूल, 10. गण्ड, 11. वृद्धि, 12. ध्रुव, 13. व्याघात, 14. हर्षण, 15. वज्र, 16. सिद्धि,**

**17. व्यतीपात, 18. वरीयान्, 19. परिघ, 20. शिव, 21. सिद्ध, 22. साध्य, 23. शुभ, 24. शुक्ल, 25. ब्रह्म, 26. ऐन्द्र एवं 27. वैधृति।** तिथि-वार के संयोग से होनेवाले नैमित्तिक योग आनन्द आदि हैं।

एक तिथि के आधे भाग को करण कहते हैं। बव, बालव, कौलव, तैतिल, गर, वणिज और विष्टि (भद्रा); ये ही सात मुख्य करण हैं। ये शुक्ल-प्रतिपदा के परार्द्ध (उत्तरार्द्ध) से क्रमशः चलते हैं। इनके अतिरिक्त कृष्ण चतुर्दशी के परार्द्ध (उत्तरार्द्ध) से शुक्ल-पूर्वार्द्ध (प्रथमार्द्ध) तक क्रम से शकुनि, चतुष्पद, नाग एवं किंस्तुघ्न; ये चार करण होते हैं।

इन सबके अतिरिक्त गोचरगत ग्रहों का भी उल्लेख करना होता है। पुनः मुहूर्त का प्रयोग भी शुभप्रद होता है।

कालखण्ड, स्थानखण्ड के बाद नियतखण्ड पर आएँ तो जिस कामना के लिए पूजा-अनुष्ठान कर रहें, उनका उल्लेख करना होता है। देवाश्रित खण्ड का मतलब किस देवता के प्रीति के लिए कर्म किया जा रहा है, उनका नाम प्रधानता से लेना है। वैयक्तिक खण्ड में यदि आप अपने लिए कर रहे हों तो अपने गोत्र एवं नाम का उच्चारण करें। यदि किसी व्यक्ति के लिए कर रहे हों तो उनके गोत्र-नाम के साथ यह उच्चारित करें कि उनके निमित्त में अमुकगोत्रीय अमुकनामा कर रहा हूँ।

यों तो ये ही सामान्यतः संकल्प के पाँच खण्ड होते हैं: कालखण्ड, स्थानखण्ड, नियतखण्ड, देवाश्रित-खण्ड तथा वैयक्तिक खण्ड। परन्तु 'परशुरामकल्पसूत्र' अष्टांग संकल्प- 1.युग, 2. परिवृत्ति, 3. वर्ष, 4. मास, 5. दिन, 6. नित्या, 7. वार तथा 8. घटिकोदय; की बात करता है। फिर भी वह अष्टांगों का पूर्ण समर्थन नहीं करता है। लेकिन वहीं संकल्प की एक सम्यक् परिभाषा भी दिख पड़ी है- 'संकल्पो नाम विद्यमान- देश - कालोल्लेखन- पूर्वक- फलोल्लेखन-सहित- प्रकृत-कर्मानुष्ठान- विषयिणी प्रतिज्ञा' ।यानी, तात्कालिक देश-काल के उल्लेख के साथ कामनाविशेष से सम्बद्ध अनुष्ठान की प्रतिज्ञा ही संकल्प है।

हथेली में जल ले संकल्प किया जाता है, क्योंकि बिना जल के दान व संकल्प निष्फल माना गया है।पुनः संकल्पवाक्य पूर्ण हो जाने पर उत्तर, ईशान कोण व पूर्व दिशा में ही संकल्पित जल भूमि पर अर्पित करने का विधान है। अब एक प्रारूप देखा जाए-

**'ॐ विष्णुः विष्णुः विष्णुः नमः परमात्मने, पुराण-पुरुषोत्तमस्य विष्णोः आज्ञया प्रवर्तमानस्य अद्य ब्रह्मणः अहनि द्वितीये परार्द्धे श्रीश्वेत-वाराहकल्पे वैवस्वत-मन्वन्तरे अष्टाविंशतितमे कलियुगे कलेः प्रथमे चरणे जम्बूद्वीपे भारतवर्षे भरतखण्डे आर्यावर्तैक देशान्तरगते मगधक्षेत्रे पाटलिपुत्रे (पटना नगरे) बौद्धावतारे 2077 (सप्तसप्तत्युत्तर- सहस्रद्वये) संख्यके वैक्रम-संवत्सरे प्रमादी नामाब्दे श्रीसूर्ये उत्तरायणे ग्रीष्मे ऋतौ मासानाम् उत्तमे ज्येष्ठमासे शुक्ले पक्षे चतुर्थ्यां तिथौ मंगलवासरे पुनर्वसु- नक्षत्रे गण्डयोगे, वणिज करणे मिथुनराशौ स्थिते चन्द्रे वृषराशौ स्थिते सूर्ये मकरराशौ गते देवगुरौ बृहस्पतौ शेषेषु ग्रहेषु यथाराशि-स्थान-स्थितेषु सत्सु एवं ग्रहगुण-विशेषण-विशिष्टायां शुभ-पुण्य-तिथौ भारद्वाज-गोत्रे उत्पन्नोऽहं मार्कण्डेय शर्माहं आत्मनः कृते श्रुति-स्मृति- पुराणोक्त-फलप्राप्तये कायिक- वाचिक-मानसिक- सांसार्गिक- चतुर्विध- पापक्षय- पूर्वक-धर्मार्थ- काम- मोक्ष- चतुर्विध- पुरुषार्थ- प्राप्त्यर्थं श्रीपरमेश्वर-प्रीतये ग्रहशान्तिम् अहं करिष्ये।तदंगत्वेन स्वस्ति-पुण्याह-वाचनं मातृका-पूजनं वसोर्द्धारा- पूजनं आयुष्यमन्त्र-जपं सांकल्पिकेन विधिना नान्दीश्राद्धम् आचार्यादि-वरणं च करिष्ये। तत्रादौ निर्विघ्नता- सिद्धये गणेशाम्बिका-पूजनम् अहं करिष्ये।**

***

# जैनियोंके पद्मपुराण में रामायण-कथा

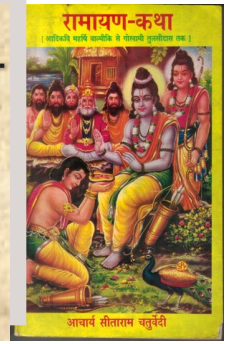


आचार्य सीताराम चतुर्वेदी

**यह हमारा सौभाग्य रहा है कि देश के अप्रतिम विद्वान् आचार्य सीताराम चतुर्वेदी हमारे यहाँ अतिथिदेव के रूप में करीब ढाई वर्ष रहे और हमारे आग्रह पर उन्होंने समग्र वाल्मीकि रामायण का हिन्दी अनुवाद अपने जीवन के अन्तिम दशक (80 से 85 वर्ष की उम्र) में किया वे 88 वर्ष की आयु में दिवंगत हुए। उन्होंने अपने बहुत-सारे ग्रन्थ महावीर मन्दिर प्रकाशन को प्रकाशनार्थ सौंप गये। उनकी कालजयी कृति रामायण-कथा हमने उनके जीवन-काल में ही छापी थी। उसी ग्रन्थ से रामायण की कथा हम क्रमशः प्रकाशित कर रहे हैं।**

– प्रधान सम्पादक

जैनियोंके पद्मपुराण में विस्तारसे पद्म (राम) के चरितका वर्णन मिल जाता है। इसीके आधारपर अपभ्रंश में स्वयंभू (शंभु) ने भी पउमचरिउ, नामक महाकाव्य रचा है। कुछ लोगोंने बिना पढ़े यह लिख दिया हैं कि गोस्वामी तुलसीदासके रामचरितमानसपर इस पउमचरिउका भी प्रभाव है। किन्तु यह मत सर्वथा भ्रामक है जैसा कि जैनियोंके पद्मपुराणमें नीचे दी गई रामचरितसे सम्बद्ध कथानुक्रमणिकासे ही स्पष्ट हो जायगा। इसमें रावण के चरितका इतना अधिक वर्णन है कि यह पउम (पद्म अर्थात् राम) -का चरित न होकर रावण-चरित हो गया है। इसमें दशरथकी चार रानियाँ बताई गई हैं और इतनी अधिक असंगत कथाएँ भरी पड़ी हैं जो रामायणों और अन्य राम चरितोंसे सर्वथा भिन्न हैं। स्वयंभू स्वयं 22वीं सन्धिके प्रारम्भ में स्वीकार करता है कि मैं कथा आदि कुछ नहीं जानता-

**हउँ किंपि ण जाणमि मुक्ख मणं।**
**णिय बुद्धि पयासमि तोषि जणे ॥**
**जं सयले वि तिहुवणे वित्थरिउ।**
**आरम्भिउ पुणु राहवचरिउ ॥।**

[ मैं मूर्ख मनवाला जानता कुछ भी नहीं फिर भी अपनी बुद्धिसे यह लिखे डाल रहा हूँ। जो कुछ सारे त्रिभुवन में प्रसिद्ध है वही राघव-चरित मैं आरम्भ कर रहा हूँ। ] स्वयंभूको यहतक ज्ञात नहीं था कि दशरथके कितनी रानियाँ थीं और रामकी माता कौन थी।

## पउमचरिउ

इसमें निम्नांकित विवरण मिलते हैं-

इक्ष्वाकु-प्रभृति राजाओंका वंश-वर्णन, सगरकी उत्पत्ति, सगरका दुःख, सगरकी दीक्षा और निर्वाण, प्रधान प्रधान वानरोंका वंश विस्तार, मधु पर्वत के शिखरपर किष्किन्धापुरकी स्थापना, लङ्काप्राप्ति, सुमालीकी सम्पत्ति, सुमालीका निधन, वैश्रवण (कुवेर) का जन्म, केकयराजके साथ

सुमालीके पुत्रका मेल, दशानन रावणका जन्म और विद्या-लाभ, सुमालीका समागम, रावणका मन्दोदरीसे विवाह, वैश्रवण पुत्रका क्रोध, यक्ष-राक्षस-युद्ध, कुबेरकी तपस्या, दशाननका लंकागमन, अर्करजः (ऋक्षरजा) -किष्किन्ध-संगम, लंकाका संश्रय, सुग्रीव-श्रीराम-समागम, बालीकी प्रव्रज्या, बालीका निर्वाण, सुग्रीवको सुतारा (तारा ) की प्राप्ति, रावणका विजयार्द्ध पर्वतपर गमन, इन्द्रका पराभव और निर्वाण, दशानन-का मेरु-गमन और नियम-करण, हनुमान् की उत्पत्ति, हनुमान् के पूर्व जन्मका वर्णन, पवन और अंजनाके संयोगसे हनुमान् का जन्म और और कष्टकी दशा में हनुमान्को सहायता देनेकी वायु द्वारा स्वीकृति, रावणका साम्राज्य, दशरथका जन्म, कोशलका माहात्म्य, कैकेयीको वरदान, पद्म (राम), लक्ष्मण, शत्रुघ्न और भरतके जन्मका विवरण, सीताकी उत्पत्ति, सीता- स्वयंवर, महाधनुकी उत्पत्ति, दशरथकी दीक्षा, दशरथका वैराग्य, दशरथकी प्रव्रज्या, दशरथका वानप्रस्थाश्रम-ग्रहण, सीता-दर्शन, कैकेयी के वरखे भरतको राज्यकी प्राप्ति, वैदेही, पद्म (राम) और लक्ष्मणका दक्षिणकी ओर गमन, रामगिरिका आख्यान, जटायुका उपाख्यान, दण्डकारण्य में निवास, शम्बूक-विनाश, कैकेयीका वृत्तान्त, खर-दूषण- वध, सीताहरण, रामविलाप, सीताके वियोगका सन्ताप, विराधका आगमन, सुग्रीवसे भेंट, आकाशमें सीता-संवाद, हनुमत् प्रस्थान, हनुमान्को लंकामें सुन्दरी कन्याका लाभ, हनुमान्का लौट आना, पद्म (राम) -का लंका-गमन, रावण-निर्गमन, नल-नीलके पूर्व जन्मका वर्णन, इन्द्रजित् और कुम्भकर्णका सुर - पन्नग बन्धन, लक्ष्मणको शक्ति लगना, रामका विलाप, विशल्यका आगमन, रावणके दूतका आगमन, राम-लक्ष्मण द्वारा नैकषेय-वध, रावण वध और उनकी पत्नियों तथा विभीषणका विलाप, अयोध्या में प्रवेश करके सबसे मिलना, भरतका पूर्वजन्मानुचरित, भरतकी प्रव्रज्या, भरतका निर्वाण, लवण दैत्यकी मृत्यु, राम-लक्ष्मणकी विभूति, रामकी चिन्ता, सीता-समाश्वासन, रामका शोक, लवणांकुश (लव-कुश नहीं) का जन्म, लवणांकुशकी दिग्विजय, पिता (पद्म अर्थात् राम) के साथ युद्ध, लवणांकुशका ऐश्वर्यलाभ, लवणांकुशका अमरागमन, वैदेहोका प्रातिहार्य, रामका पूर्वजन्माख्यान, लवणांकुशका पूर्वजन्मकथन, हनुमान्का निर्वेद, हनुमान्का निर्वाण, रामपुत्रकी तपस्या, पद्म (राम) का दारुण शोक-वर्णन, लक्ष्मण-वियोग, लक्ष्मणका संस्कार, बलदेव (राम) का निष्क्रमण, रामकी कैवल्योत्पत्ति, बलदेव ( राम ) का सिद्धिगमन (निर्वाण )।

## जन अरिष्टनेमिपुराण (हरिवंश )

इस पुराण में सगर के सम्बन्धमें यह वर्णन मिलता है कि सगर नामक चक्रधरके यहाँ साठ सहस्र पुत्र उत्पन्न हुए, जिन्होंने दंभपूर्वक जब पृथिवी- को खोदना प्रारम्भ किया तब उससे कुपित होकर नागराजने उन्हें भस्म कर दिया। यह सुनकर सगरने जैन धर्म में दीक्षा ले ली और मोक्ष प्राप्त कर लिया।

## मुनि सुव्रत पुराण

इस पुराण के अध्याय 17 से रामायण कथा इस प्रकार चलती है-

राजा दिलीप वाराणसी में राज्य करते थे। उनके वंश में राम-लक्ष्मण आदिकी उत्पत्ति हुई। रघुके पौत्र और रामके पिता दशरथने अयोध्या में अपनी राजधानी आ स्थापित की। मेघकूटके अधिपति सहस्रग्रीव- राज अपने भतीजे सितिकंठसे युद्ध में पराजित हो गए। सहस्रग्रीव की मृत्यु होनेपर सितिकंठने लंका में राजधानी जा बनाई। उसके शतकंठ, पंचाशतकंठ, पुलस्त्य आदि अनेक पुत्र-पौत्रोंकी उत्पत्ति हुई। वहीं मेघश्री के गर्भ से पुलस्त्य के पुत्र रावणका जन्म हुआ। वाली और सुग्रीव आदिका जन्म होनेपर बालीसे रावण

सात बार हारा। कंठमें दस हार धारण करनेके कारण रावणको दशकंठ कहा जाने लगा। रावणने नन्दीश्वरका व्रत और अनुष्ठान किया। मन्दोदरी, मनोवेगा, मन्त्रा, घोषा, मंजुघोषा आदि अनेक रानियाँ रावणकी थीं। मन्दोदरीके गर्भ से सीताका जन्म हुआ। भूमि खोदते समय जनकको एक मंजूषा में उसे कन्याकी प्राप्ति हुई। रामके साथ सीताका विवाह हुआ। दशरथकी आज्ञासे रामका अभिषेक हुआ और रामके साथ सीताका विवाह हो गया। राम अपने साथ सीता और लक्ष्मणको लेकर वाराणसी में राज्य करने चले गए। रावणकी सभा में नारद आए। वाराणसीके चित्रकूट नामक उद्यान में राम-लक्ष्मणने वसन्तोत्सव (फाग ) जा मनाया। नारदके कहनेसे शूर्पणखा और मारीचकी सहायता से रावणने सीताका हरण कर लिया। यह सुनकर जनक, भरत और शत्रुघ्न भी रामके पास आ गए। उसी समय अंजनानन्दन हनुमान् और सुग्रीव भी स्वयं रामके पास आ गए। अंजनाके पुत्रका हनुमान् नाम पड़नेका कारण था। हनुमान् भौंरा बनकर सीताके दर्शनके लिये लंका गए। मन्दोदरीने सीताको आश्वासन दिया। रावण और हनुमान्का संवाद हुआ। विभीषण सदा रामका पक्षपात करते रहे एक हाथी के लिये लक्ष्मण और बालीका युद्ध हुआ जिसमें लक्ष्मणके हाथसे बालो मारा गया।

वानर सेना के साथ लंकामें जाकर रामने रावण आदिका वध किया। राम-लक्ष्मण दिग्विजय करके अयोध्या लौट आए। दशरथने रामका राज्याभिषेक किया। रामने जिन मन्दिर में जाकर पूजा की। सीताके

गर्भसे आठ पुत्रोंका जन्म हुआ जिनमेंसे लवको युवराज बनाया गया। लक्ष्मणके वियोगसे रामने आदिजिनके पास जाकर केवलत्वकी दीक्षा ली। रामको शिवप्राप्ति हुई।

यह पुराण कार्तिक शुक्ल त्रयोदशी सं0 1681 को लोहपतन-निवासी कृष्णदासने रचा था।

# जैन-साहित्य में रामकथा

जैन-साहित्यके अंजन-पवनांजय, दशरथ-कथानकम्, पउमचरिय, पउमचरिउ, पद्मचरित, पद्मपुराण, बलभद्रपुराण, सोमसेन-विरचित रामचरित, रामदेवपुराण और राम-लक्खणचरितम् में अत्यन्त विकृत रूपमें रामकथा मिलती है। पउमचरिय नामसे विमलसूरिने प्राकृत भाषामें जो राम-कथा लिखी थी उसीका अनुसरण जिन राम-कथा लिखनेवाले जैन कवियोंने किया उनका संक्षिप्त परिचय और कथा-भेद नीचे दिया जा रहा है-

संघदासने शेष कथा तो वही ली है जो वाल्मीकि रामायण में है, केवल अन्तर यह है कि उसमें सीताको रावणकी पुत्री बताया गया है जैसा कि आनन्दरामायण में भी है।

रविषेणने विमलसूरिके पउमचरियके अनुसार ही राम कथा लिखी किन्तु उसे दिगम्बर जैन सिद्धान्तसे रँग दिया है। उसके अनुसार दशरथ- की चौथी रानी सुप्रभासे शत्रुघ्नका जन्म हुआ।

स्वयंभूदेवने अपने पउमचरिउमें रविषेणके पद्मचरित (पद्मपुराण) का अनुसरण किया है।

शीलाचार्यने विमलसूरिका ही अनुसरण किया है किन्तु स्वर्णमृग और वालीके वधकी घटना वाल्मीकिसे ग्रहण कर ली है।

गुणभद्रने जो राम कथा दी है वह निराली ही है। उनके अनुसार दशरथकी राजधानी वाराणसी थी। उसने सगर-वंशके लुप्त हो जानेपर अयोध्या में राजधानी ले जा पहुँचाई। रामने जनकके यज्ञकी रक्षा की थी इसलिये जनकने अपनी पुत्री सीताका विवाह रामसे कर दिया। राम, सीता और लक्ष्मण अपनी प्रजाके रक्षणके लिये वाराणसी चले गए। नारदके

कहनेपर सीताके प्रति रावणकी आसक्ति हुई और रावणने शूर्पणखाको दुतीके रूप में सीताके पास भेजा। लक्ष्मणने बालीके साथ युद्ध करके उसे मार डाला। रावणने माया-सीताका सिर काटकर रामके • सामने ले जा फेंका जैसा वाल्मीकि रामायण में भी है। गुणभद्रकी यह कृति विमलसूरिके पउमचरियके समान प्रसिद्ध नहीं हैं किन्तु पुष्पदन्त और कृष्ण कविने गुणभद्रका अनुसरण अवश्य किया है

हरिषेणने अपनी राम कथा में पूरी मूल कथा तो वाल्मीकिसे ली है किन्तु बताया है कि दशरथकी चौथी रानी सुप्रभासे शत्रुघ्नका जन्म हुआ और सीता अपनी अन्तिम अग्नि परीक्षाके पश्चात् आर्यिका (साधुनी) बन गईं।

पुष्पदन्तने गुणभद्रका ही अनुसरण किया किन्तु उसकी कथामें गुणभद्रकी कथाकी अपेक्षा काव्य-सौष्ठव अधिक है।

भद्रेश्वरकी राम-कथाका आधार विमलसूरिका पउमचरिय है किन्तु उसने एक नई बात यह कही कि सीताने रावणका चित्र बनाया था।

हेमचन्द्रने दो रामायण लिखे हैं- एक तो विमलसूरिके आधारपर, दूसरा रविषेणके आधारपर। उसे संघदास और भद्रेश्वरकी राम - कथाओंसे भी परिचय था। उसके अनुसार कैकेयीसे विवाह करके रावणके भयसे दशरथ अयोध्या छोड़कर अपने परिवारके साथ राजगृहमें जा रहे। राम और लक्ष्मणका जन्म वहीं हुआ। जब अपने पुत्रोंके पराक्रमके कारण उन्हें अपनी अजेयताका पूरा आभास हो गया तब वे सपरिवार अयोध्या लौट आए। भरत और शत्रुघ्नका जन्म वहींपर हुआ।

धनेश्वरसूरिने विमलसूरि, रविषेण और हेमचन्द्र तीनोंका प्रयोग अपनी राम कथा में किया है। इसमें दशरथसे कैकेयी अपने पुत्रके लिये राज्य और राम तथा लक्ष्मणके लिये वनवासकी याचना करती है। इतना अंश उसने वाल्मीकिसे लिया है।

कृष्णदासने गुणभद्रका अनुसरण किया है।

देवविजयगणिन्ने हेमचन्द्रकी राम-कथाका अनुसरण किया है। मेघविजयने हेमचन्द्रके रामायणके पाठको ही संक्षेपमें प्रस्तुत किया है।

## विमलसूरिका पउमचरिय

विमलसूरिके पउमचरियकी कथा कुछ ही अंशोंमें वाल्मीकि रामायण की कथासे मिलती है। विमलसूरिने बहुत-सी कथाएँ छोड़ दी हैं, बहुत- सी जोड़ दी हैं और बहुत-सी तोड़-मरोड़ दी हैं। वाल्मीकिके अनुसार कैकेयी बड़ी स्वार्थी, लोभी और कुचक्री थी, रामने छिपकर बालीको मारा, शूद्र तपस्वी शम्बूकका वध किया, रावण अत्यन्त दुष्ट, त्रासक और स्त्रियोंका अपहरण करनेवाला था और बालीने अन्यायपूर्वक अपने भाई सुग्रीवकी पत्नी और राज्याधिकारका अपहरण कर लिया था। विमलसूरि- ने अपने काव्य में इन सब दोषोंका निराकरण कर दिया है। उसके अनुसार कैकेयी अत्यन्त श्रेष्ठ माता है जो अपने पतिको प्रव्रज्या लेनेको प्रेरित करती है किन्तु अपने पुत्रको ऐसा करनेसे रोकती है। वह रामके लिये वनवास नहीं माँगती। विद्याधर बाली यद्यपि रावणको परास्त कर सकता था किन्तु वह स्वयं अपनी इच्छासे सुग्रीवको राज्य देकर प्रव्रज्या ग्रहण कर लेता है। इससे राम भी बाली-वध के दोषसे मुक्त हो जाते हैं और बाली भी अपने भाईकी पत्नीको हरनेके दोषसे छूट जाता है। शम्बूक भी धोखेसे लक्ष्मणके हाथों मारा जाता है। उसके वध-दोष से भी राम छूट जाते हैं। रावण अत्यन्त पवित्र जैन हैं। वह टूटे हुए जैन चैत्योंका पुनरुद्धार करता है। वह युद्ध में भी हिंसा नहीं करता। जिन राजाओंको वह जीतता है उनका राज्य उन्हें दे देता है। उसकी एक ही दुर्बलता है-- सीताके प्रति आसक्ति। कुंभकर्ण आदि राक्षस भी बड़े साधु पुरुष चित्रित किए

गए हैं। बड़ी विचित्र बात विमलसूरिने यह लिखी है कि रामके 8000, लक्ष्मणके 16000 और हनुमान्‌के 100 पत्नियाँ थी तथा सगर और हरिषेण राजाओंके 64000-64000 रानियाँ थीं। दूसरी महत्त्वपूर्ण बात उसने यह लिखी है कि लक्ष्मण और रावणको छोड़कर सब पात्र पवित्र जैन हैं जो अन्तमें प्रव्रज्या लेकर जैन साधु हो जाते हैं और निर्वाण प्राप्त करके स्वर्ग चले जाते हैं। जैन धर्म स्वीकार न करनेके कारण लक्ष्मण नरक में जाते हैं। कैकेयी, सीता आदि सब जैन साध्वी बन जाती हैं। इस ग्रन्थमें रामके बदले लक्ष्मण ही प्रमुख पात्र हैं। रावणका वध भी लक्ष्मण ही करते हैं।

## जैन राम-कथाके दो रूप

जैन राम कथा के दो रूप प्रचलित हैं-एक तो विमलसूरिके पउमचरिय और रविषेणके पद्मचरितका और दूसरा गुणभद्रके उत्तरपुराणका। विमलसूरि और रविषेणकी राम-कथा इस प्रकार है-

## विद्याधर- काण्ड

राजा श्रेणिकको गौतम स्वामी कथा सुनाते हैं-

राक्षसवंशके राजा रत्नश्रवा और कैकसीके चार सन्तान हैं- रावण, कुम्भकर्ण, चन्द्रनखा और विभीषण। रत्नधवाको अपने पुत्र रावणके गले- में पड़े हार में झलकते हुए उसके दस सिर दिखाई दिए थे इससे उनका नाम दशानन या दशग्रीव रख दिया गया। अपने मौसेरे भाई कुबेरका वैभव देखकर रावण भी अनेक विद्याएं सिद्ध कर लेता है। वह मन्दोदरीके साथ-साथ 6000 कन्याओंसे विवाह करता है और दिग्विजयमें अनेक राजाओं को हरा देता है। इन्द्र. यम, वरुण आदि सब राजा हैं, देवता नहीं। इस विजय यात्रामें वह नलकूबरकी पत्नीका प्रेम प्रस्ताव ठुकरा देता है और वह सुग्रीवको राज्य देकर दिगम्वरी दीक्षा ले लेता है। हनुमान्- की उत्पत्ति और बाल लीलाओंसे सब चकित हो जाते हैं। रावणकी ओरसे वरुणसे युद्ध करके हनुमान् चन्द्रनखाकी पुत्री अनंगकुसुमाके साथ विवाह कर लेता है। खर-दूषणका विवाह रावणकी बहन चन्द्रनखासे हो जाता है। शंबूककुमारकी उत्पत्ति होती है।

राजा दशरथके तीन रानियाँ थीं- कौशल्या, सुमित्रा, सुप्रभा। जब रावणको ज्ञात हुआ कि जनक और दशरथकी सन्तानोंसे मेरी मृत्यु होगी तब उसने अपने भाई विभीषणको इन दोनोंकी हत्या कर आनेको भेज दिया। किन्तु नारदके सचेत कर देनेके कारण वे दोनों अपने पुतले छोड़कर बाहर निकल गए और विभीषण उन्हीं पुतलोंका सिर काटकर उन्हें लवण समुद्र में फेंक आया। परदेश-भ्रमणके समय दशरथ स्वयंवरमें कैकेयीको जीत लाए। वहाँ उन्होंने राजाओंसे युद्ध करके उन्हें हरा दिया। उस युद्ध में कैकेयीने रथ हाँका, जिससे प्रसन्न होकर दशरथने उसे मनचाहा वर माँगनेको कह दिया किन्तु उसने उन्हें राजकोषमें रखवा दिया। कैकेयीको लेकर दशरथके चार रानियाँ हो गईं। तब कौशल्यासे राम या पद्म सुमित्रासे लक्ष्मण, कैकेयीसे भरत और सुप्रभासे शत्रुघ्नका जन्म हुआ।

जनककी विदेहा रानीसे एक पुत्री सीता और एक पुत्र भामंडलका जन्म हुआ। जन्मके पश्चात् ही उनका पुराना वैरी भामंडलको हर ले गया और एक विद्याधरने उसे पाला। नारदकी कृपासे सीताका चित्र देखकर भामंडल उसपर मुग्ध हो गया। जनकको विद्याधर-लोकमें बुलाकर कहा गया कि सीता इस भामंडलके लिये दे दो किन्तु जनक कहते हैं कि मैंने दशरथके पुत्र रामको अपनी पुत्री देनेका निश्चय कर लिया है। अन्त-में इस शर्तपर जनक मान गए कि यदि राम विद्याधरके वज्रावतं धनुषको चढ़ा लें तभी सीता उन्हें दी जाय। राम उस धनुषको चढ़ा देते हैं और सीतासे रामका विवाह हो जाता है। जब दशरथ विरक्त होकर रामको राजा बनाने लगे तब कैकेयीने अपना धरोहर वर माँगा कि भरत राजा हों। यह सुनकर सीताके साथ राम-लक्ष्मण

दक्षिणकी ओर चले गए। कैकेयी और भरतने रामको वनसे लौट आनेको बहुत कहा पर वे नहीं माने।

वनमें राम-लक्ष्मण अनेक युद्ध करते रहे। उन्होंने वज्रकर्णको सिंहोदर के चंगुल से बचाया, म्लेच्छ राजाके कारागारसे बालखिल्योंको मुक्त किया और नर्तकीका रूप बनाकर भरतके विरोध में खड़े होनेवाले अतिवीर्यको हराया। इस बीच उन्होंने स्थान-स्थानपर अनेक कन्याओंसे विवाह किया और दंडक वन में रहकर जटायुसे मेल-जोल बढ़ाया।

चन्द्रनखा और खरदूषणका पुत्र शंबूक जब सूर्यहास खड्ग पानेके लिये बँसवारी में बैठा साधना करने लगा और वहाँ खड्ग प्रकट हुआ तब लक्ष्मणने वह खड्ग लेकर जब बँसवारीपर चलाया तब शंबूक मारा गया। यह देखकर चन्द्रनखा रोने लगी। किन्तु राम-लक्ष्मणपर रीझकर जब उनसे प्रेम पाने में वह सफल नहीं हुई तब उसने अपने पतिके पास पुत्रकी मृत्युका समाचार जा पहुँचाया। खर-दूषण और लक्ष्मणका युद्ध हुआ। रावण भी खर-दूषण- की सहायता के लिये चला आया। सीताको देखकर वह उन्हें हर ले जानेकी सोचने लगा। उसने अपनी विद्यासे जान लिया कि लक्ष्मणने सिंहनादके संकेतसे रामको बुलाने का विधान कर रक्खा है। अतः, उसने सिंहनाद करके रामको लक्ष्मणके पास भेज दिया और अकेली सीताको हर लिया।

सीताके वियोग में दुखी होकर रामने आगे जाकर सुग्रीवसे मित्रता कर ली। जब एक साहसगति नामक विद्याधरने सुग्रीवका रूप बनाकर सुग्रीवकी पत्नी और उसके राज्यको हर लेना चाहा तब रामने उसे मार डाला। बलवान् रावणसे सुग्रीव नहीं लड़ना चाहता था किन्तु उसे केवलीने कहा था कि जो कोई कोटिशिला उठा लेगा वही रावणको मार सकेगा। इसपर सुग्रीवको विश्वास हो गया और सब वानर रामके साथ हो गए। रामका संदेश लेकर हनुमान् ने लंका में सीतासे मिलकर रामको सीताका संदेश आ सुनाया।

सुग्रीव आदि विद्याधरोंकी सहायतासे सारी सेना आकाश मार्ग से लंका में पहुँच गईं। हनुमान् आदिके बाधा डालनेपर भी रावणने विद्या सिद्ध कर ली। विभीषणसे भी रावणका झगड़ा हो गया और विभीषण भी रामके पास चला आया। रामने उसे लंकाका राजा बनानेका वचन दे दिया। युद्ध में लक्ष्मणको शक्ति लग गई किन्तु विशल्याके स्नान- जलसे वे ठीक हो गए और विशल्याके प्रति लक्ष्मणका अनुराग दृढ हो गया। अन्तमें जब रावणने चक्र चलाया तब लक्ष्मणने बीचमें ही उस चक्रको पकड़कर उसीसे रावणको मार डाला। अयोध्या में लौटकर विरक्त होकर जैन- दीक्षा ले ली। लोकापवादसे डरकर गर्भिणी सीताको रामने वनमें छुड़वा दिया। सीताने वहाँ राजा वज्रजंघके यहाँ लवण और अंकुश नामके दो पुत्रोंको जन्म दिया। बड़े होनेपर लवण और अंकुशने राम-लक्ष्मणसे युद्ध किया। नारदके कहने से पिता-पुत्रों में मेल हो गया। हनुमान्, सुग्रीव और विभीषणके कहनेपर सीताको रामने बुलवा भेजा और वे आकर अग्नि परीक्षा देकर आर्यिका हो गईं और तप करके 16 वें स्वर्ग में पहुँच गईं। एक दिन नारायण और बलभद्र नामक दो देव राम-लक्ष्मणके प्रेमकी परीक्षा लेनेके लिये लक्ष्मणसे कहने लगे कि रामका देहान्त हो गया। इसपर लक्ष्मणने प्राण दे दिए। राम छह मासतक लक्ष्मणका शव लिए घूमते रहे। अन्तमें कृतान्तवक्त्रसे वास्तविक बात जानकर वे लक्ष्मणकी अन्त्येष्टि करके विरक्त हो गए और तप करके उन्होंने मोक्ष प्राप्त कर लिया।

## उत्तरपुराण

गुणभद्राचार्यके उत्तरपुराणकी कथा इस प्रकार है -

वाराणसीके राजा दशरथके चार पुत्र थे - सुबालाके गर्भसे राम, कैकेयीके गर्भ से लक्ष्मण और जब दशरथ अपनी राजधानी साकेत में ले गए तब किसी रानीके

गर्भसे भरत और शत्रुघ्नका जन्म हुआ। दशानन निमि विद्याधर-वंशीय पुलस्त्यका पुत्र था। एक दिन अमितवेग- की पुत्री मणिमतिपर आसक्त होकर जब वह उसकी साधना में विघ्न डालने लगा तब उसने निश्चय किया कि मैं इसकी पुत्री होकर इसे मारूँगी। मरकर वह मन्दोदरीके गर्भ में आ गई और ज्योतिऋषिके कहनेपर डरकर उसने मारीचके द्वारा उसे मंजूषा में रखवाकर मिथिलामें भेज गड़वाया। वहाँ हलसे टकराकर वह लोगोंको दिखाई पड़ गई और वे उसे लेकर जनकके पास ले जा पहुँचा आए जिन्होंने उसे पाला-पोसा। अपने यज्ञकी रक्षा के लिये जनकने रामको बुलाया और सीतासे उनका विवाह कर दिया। इसके बाद रामने सात अन्य कन्याओंसे विवाह किया और लक्ष्मणने भी पेथवी देवी आदि 16 राजकन्याओंसे विवाह किया। दोनों दशरथकी आज्ञासे वाराणसी में जाकर रहने लगे।

नारदसे सीताका वर्णन सुनकर रावण उन्हें हरनेकी सोचने लगा। शूर्पणखाने आकर सीताका मन टटोला किन्तु निराश होकर रावणको बता दिया कि वह अडिग है। जब राम और सीता वाराणसीके निकट चित्रकूट में विहार कर रहे थे तब मारीच स्वर्णमृग बनकर रामको दूर खींच ले गया। इतने में रावणने रामका रूप बनाकर सीतासे आकर कहा कि मैंने स्वर्णमृग महल में भेज दिया है। तुम पालकीपर चढ़ जाओ। वह पालकी नहीं वरन् पुष्पक विमान था। वह सीताको लंका ले तो गया किन्तु इस डरसे उसने सीताका स्पर्श नहीं किया कि कहीं मेरी आकाशगामिनी विद्या नष्ट न हो जाय।

दशरथने स्वप्न देखा कि सीताको रावण हर ले गया है। उन्होंने रामके पास समाचार कहला भेजा। इतने में सुग्रीव और हनुमान् बालीके विरुद्ध सहायता माँगने आ पहुँचे। हनुमान् लंका जाकर सीताको आश्वासन देकर लौट आए। इसी बीच लक्ष्मणके हाथसे बाली मारा गया और सुग्रीवको राज्य मिल गया। वानरोंकी सेनाके साथ राम लंका पहुँच गए जहाँ घोर युद्धके पश्चात् लक्ष्मणने चक्रसे रावणका सिर काट लिया। लक्ष्मण दिग्विजय-से लौटकर अर्धचक्रवर्ती (नारायण) बनकर अयोध्या आ गए। सीताके आठ पुत्र हुए। लक्ष्मण एक असाध्य रोगसे मरकर नरकमें चले गए। राम भी लक्ष्मणके पुत्र पृथ्वीसुन्दरको राज्य देकर और सीताके पुत्र अमितंजय-को युवराज बनाकर दीक्षा लेकर मुक्त हो गए। सीता भी अनेक रानियों के साथ दीक्षा लेकर अच्युत-स्वर्ग चली गईं।

**॥जैन रामायणों की कथा समाप्त॥**

# यह काल बीत जाएगा!

हम कितने ही सुखी क्यों न हों हमें सोचना चाहिए कि यह काल भी बीत जायेगा! यह सोच आते ही हमारा मन दुःखी हो जाता है। यही है संसार की दुःखमयता। सुख की घड़ी भी स्थिर न रहेगी, अवश्य बीतेगी क्योंकि हम काल के अधीन हैं।

हम कितने ही दुःखी क्यों न हों, हमें सोचना होगा कि यह काल बीत जायेगा! इसीके साथ हमारा दुःख भी बीत जायेगा और आयेगा फिर वह सुख का क्षण। यह कालचक्र हमें आश्वासन देता है, हमें चलाते रहता है।

19वीं शती में जब स्त्रियों की शिक्षा पर विशेष जोर दिया जा रहा था तब हिन्दी भाषा के माध्यम से अनेक रोचक ग्रन्थों की रचना हुई, जिनमें कहानियों के माध्यम से महत्त्वपूर्ण बातें बतलायी गयी। ऐसे ग्रन्थों में से एक 'रीतिरत्नाकर' का प्रकाशन 1872ई. में हुआ। उपन्यास की शैली में लिखी इस पुस्तक के रचयिता रामप्रसाद तिवारी हैं।

इस पुस्तक में एक प्रसंग आया है कि किसी अंगरेज अधिकारी की पत्नी अपने बंगला पर आसपास की पढ़ी लिखी स्त्रियों को बुलाकर उनसे बातचीत कर अपना मन बहला रही है। साथ ही भारतीय संस्कृति के विषय में उनसे जानकारी ले रही है। इसी वार्ता मंडली में वर्ष भर के त्योंहारों का प्रसंग आता है। पण्डित शुक्लाजी की पत्नी शुक्लानीजी व्रतों और त्योहरों का परिचय देने के लिए अपनी दो चेलिन रंगीला और छबीला को आदेश देतीं हैं।

यहाँ यह भी स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि यह ग्रन्थ अवध प्रान्त के सांस्कृतिक परिवेश में लिखा गया है। इसमें अनेक जगहों पर बंगाल प्रेसिडेंसी को अलग माना गया है।

सन् 1872 ई. के प्रकाशित इस ग्रन्थ की हिन्दी भाषा में बहुत अन्तर तो नहीं है किन्तु विराम, अल्प विराम आदि चिह्नों का प्रयोग नहीं हुआ है जिसके कारण अनेक स्थलों पर आधुनिक हिन्दी के पाठकों को पढ़ने में असुविधा होगी। इसलिए यहाँ भाषा एवं वर्तनी को हू-ब-हू रखते हुए विराम-चिह्नों का प्रयोग कर यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है। पाठकों की सुविधा के लिए कुछ स्थलों पर अनुच्छेद परिवर्तन भी किए गये हैं। जिन शोधार्थियों को भाषा-शैली पर विमर्श करना हो, उन्हें मूल प्रकाशित पुस्तक देखना चाहिए, जो Rītiratnākara के नाम से ऑनलाइन उपलब्ध है।

अवध क्षेत्र में

# 19वीं शती की विवाह-विधि

## जयंती का विवाह

पिछले अंक में हमने पढ़ा कि बेटी के विवाह के लिए किस प्रकार वर का चयन होता है तथा संबंध स्थिर किया जाता है। इसमें हमने देखा कि दहेज का कोई नाम-निशान नहीं है। बल्कि वर के पिता ही हमेशा प्रयास में रहते हैं कि हमारे घर से अधिक से अधिक सामग्री भेजी जाये।

अब इस अंक में विवाह के दिन की विधि पर पढ़ें-

### मायन

मातृपूजा जिसको मायन कहते हैं, पाखानपूजा के दूसरे दिन हुई। पहिले मंडप में तृण तोरण मातृका की पूजा पण्डित ने कराई इस प्रकार कि तृण को थोड़ा-थोड़ा लपेट के सात जगह रक्खा सबपर छोटी-छोटी गोबर की निगरी चिपका दी गई। उन्हीं पर सिंदूर आदिक से पूजा हुई। फिर दुआरे पर द्वारमातृका का पूजा की गई जो भीत में गोबर की निगरी बनी हुई थी। फिर आंगन में अभ्यंतर मातृका की पूजा हुई जिसके अनंतर कोहबर में षोड़शमातृका का पूजन

इस प्रकार हुआ कि हम दोनों प्राणी गांठ जोरे हुए सिंदूर ऐपन पान सुपारी आदि से पूजा कर चुके तो लालाजी ने हमारे शिर के बाल पर घी छोड़ के उसी गोबर की निगरियों पर घी की धार चुआई। उसी को वसुधार कहते हैं। फिर वही माई जो पकाई हुई रक्खी थी, उसी को नैवेद्य लगाया। उसमें से 5 नाई को और 10 ब्राह्मण को मिली।

इसके पीछे दही, चाउर, बेर की पत्ती से नांदीमुख श्राद्ध हुआ। उस दिन चने की दाल, मूंग की दाल, बुंदिया, बरा, रोटी, भात की रसोई बनी और सबलोग खाते-पीते गये।

मंची पूजा के दूसरे दिन बरात आने की धूम-धाम मची। सबेरे जौ के आटे में हलदी और तेल मिलाके सैकड़ा पिड़ियाँ बनाई गई, उनमें कलावा लपेट के दो-दो सब भाई बंधु के यहाँ नेवता के लिये भेजी गई कि गौरहन की चौराई है और एक पिड़िया धोबिन के घर में सोहाग देने के बुलौआ के लिये भेजी गई।

जब रसोई बन चुकी और गौरहन का जेवनार सीझा, तो सात जनी सोहागिन और 1 धोबिन और बिटिया सब मंडप में बैठी और सबके आगे पत्तल परसी गई। परंतु पनवारी नहीं आई रही, इसलिये सब जनी पनवारी का आसरा देखने लगी कि बरपक्ष से पनवारी आवे, तो गौरहन जीमें। जब पनवारी आई, तो उस में दो चाँदी की परई और उस के बीच 1 अशरफी रक्खी रही और ऊपर दो माँटी की परई तिसके बीच में पाँच पिसान की (आसें) अर्थात् टिकिया और हरदी, सुपारी, दूब, रखके ऊपर पिसान से ताई और ऐपन सेंदुर से रंगी हुई और कलावा से लपेटी थी। नाई लेकर आया तो वह परई मड़वे में रक्खी गई।

नाई को खिला पिलाके बिदाई दी, तब पनवारी खोली गई। जो अशरफ़ी रही, उसे निकाल के अलग रख दिया और कन्या को मंड़वे में बैठाया और नाई के घर से अयना आया सो कलाई से बाँधकर मंडवे में

"सबसे प्रथम धोबिन के आगे पत्तल परसी गई। फिर 7 सोहागिनों के आगे परसी गई।"

लटका दिया गया और एक दोने में गौर और सिंधारा में सेंदुर लड़की के पास धर दिया और लड़की की भौजाई उसे अपनी गोद में लेकर बैठा उसके सामने धोबिन बैठी। तब बेटी दर्पण में अपना मुख देखती और गौर को सेंदुर चढ़ाती जाती थी और सातों सोहागिन बैठी हुई थीं। तम्बोलिन ने पान की बीड़ी सब के आगे रख दी। जब दाल, भात, रोटी, बरा, बुंदिया आदि बस्तु सबके आगे पत्तल में परसी गई। सबसे प्रथम धोबिन के आगे पत्तल परसी गई। फिर 7 सोहागिनों के आगे परसी गई। तब एक गेडुआ में घी भर के सब की पत्तलों पर ऐसा छोड़ा गया कि घी की धार नहीं टूटी। फिर सातों सोहागिनों के मांथे में थोड़ा-थोड़ा केश का मसाला लगाया गया और बांये हाथ में महंदी और एक कलाई का डोरा सब को थंभा दिया और सबकी मांग में सेंदुर टीका लगाया, फिर सब सोहागिन मीठे भात की एक-एक पिड़िया बना के कन्या की पत्तल में रखती गई और धोबिन की पत्तल से भी (तब तक वह नहीं छूती) एक पिड़िया बनाके रक्खी गई। जब सब रीति भांति हो चुकी, तब मालिन ने एक-एक फूलों की माला सब के गले में पहिना दी और सब जनी खाने लगी और उन्हीं सातों निगरियों को बेटी ने खाया जो सबकी पत्तलों से रक्खी गई थीं। जब सब जनीं खा पी चुकी, तो बेटी को भीतर ले गई। जब सब सोहागिन खाने को बैठी रहीं,

तब भी गीत गाई गई।

## बारात का स्वागत

जब बरात आने की जून भई, तब द्वारपूजा की सामग्री को संजोजने लगी चार गगरा और उन पर चार गडुआ और गडुओं पर रखने के लिये चार पीतल की कटोरियाँ जिस पर चावल और पीतल का दिया तेल भर के रक्खा गया। सो हमने नाइन बारिन पनिहारिन को सौंप दिया कि जब बरात आवे, तो दिया जलाइ कलशा शिर पर लेके खड़ी हो जाना और दो तीन जनी मिल के आटे का मानिक दिया थार में बनाने लगी।

सो जब बन चुका, सो उसमें तेल-बत्ती संयुक्त करके आँगन में रख दिया और एक थारी में पूजा की सामग्री रख दी गई कि जिससे भीड़ के समय किसी वस्तु की कमती न हो। जब संध्या का समय हुआ तो बड़ी भीड़-भाड़ के साथ बरात आई। मारे बाजों के अंदोर मच गया कितने हाथी, कितने घोड़े, कितने मनुष्य की भीड़ भाड़ थी।

जब बरात हमारे घर के सामने आई तो एकाएक खड़ी हो गई। तब हमारी ओर के लोग जाके अगुआनी के लिये उनसे मिले और बराती-घराती में प्रणाम आशीस हुआ और बरात आगे को बढ़ी और दुआरे पर पुरोहित चौक पूर कलश गौर रक्खे हुए बैठा था।

जब बरात द्वारे पर पहुँची पंडितों ने वेद का उच्चारण किया। तब द्वारपूजा होने लगी पहिले दूलह ने गौर गणेश की पूजा और ब्राह्मणों का बरन किया फिर हमारे बाबा ने दूलह का पाँव धोके माथे में रोली और चावल का टीका लगाया और एक थान कीमखाप और एक थान जामदानी दो मुहर और पांच रुपया रख के संकल्प दिया। फिर दुर्गा जनेऊ में प्रयागदत्त ने जाके एक मुहर और पाँच बीड़ा पान और एक जोड़ी जनेऊ संकल्प किया और आपस में साले बहनोई मिले। भाटों ने कवित्त पढ़ा, उन्हें दोनों ओर से एक-एक रुपये दिये गये और नाई बारी को और पनभरों को नेग दिया गया एक ठौर तो द्वारपूजा होती रही और सब स्त्रियाँ अटारी पर चढ़ी हुई गीते गातीं और बरातियों पर अक्षत फेंकती और बराती उनपर बीड़ा फेंकते थे।

उस समय के आनन्द और हर्ष का मैं कहाँ तक बखान करूँ। गज भर की छाती हो गई। जिस बराती का बीड़ा किसी स्त्री के मुँह पर लग जाता, वह मारे खुशी के उछलता और फूले न समाता। जिस समय बारात द्वारे पर पहुँची। उस समय सब स्त्रियाँ अनेक प्रकार की गीत गाने लगी॥

(अगले अंक में जारी)

# कालाय तुभ्यं नमः

**नमः सत्यनारायणायास्य कर्त्रे नमः शुद्धसत्त्वाय विश्वस्य भर्त्रे।।**
**करालाय कालाय विश्वस्य हर्त्रे नमस्ते जगन्मङ्गलायात्ममूर्ते।।१७।।**

विश्व के रचयिता सत्यनारायण रूप विष्णु को प्रणाम। विश्व का भरण-पोषण करनेवाले शुद्धसत्त्व स्वरूप विष्णु को प्रणाम। विश्व का संहार करनेवाले कराल काल रूप विष्णु को प्रणाम। जगत् का कल्याण करनेवाले आत्ममूर्ति विष्णु को प्रणाम। (भविष्यपुराणम्, प्रतिसर्गपर्व, खण्डः २, अध्यायः २५)

# पुस्तक समीक्षा

पुस्तक का नाम- **सुन्दरकाण्ड**। प्रकाशक- महावीर मन्दिर, पटना। पृष्ठ संख्या— 40, मूल्य- रु. 10/-। प्रथम संस्करण- 2023ई.

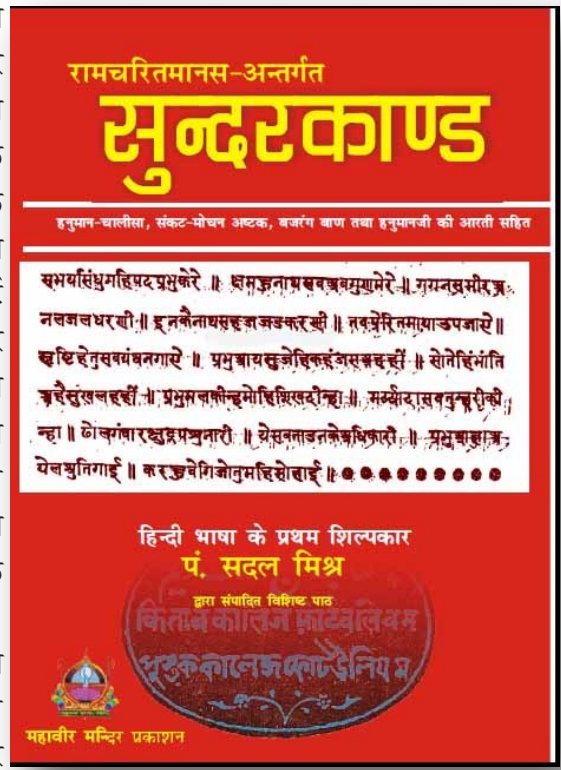


तुलसीदास कृत रामचरितमानस अपने रचनाकाल से समाज से जुड़ी रही है। वर्ण, जाति, सम्प्रदाय से ऊपर उठकर लोगों ने इसे स्वीकार किया है। इतना ही नहीं उर्दू भाषा में भी इसके अनुवाद हुए। फारसी लिपि में इसकी अनेक पाण्डुलिपियाँ भी मिलती हैं। लेकिन खेद का विषय है कि इतने महनीय ग्रंथ के प्राचीन स्वरूप को खोजने का प्रयास 20वीं शती में नहीं हो सका। इसका सर्वप्रथम प्रकाशन फोर्ट विलियम कालेज से हुआ था, जिसका सम्पादन भोजपुर क्षेत्र के पं. सदल मिश्र ने किया था। तुलसीदासजी की रचनाओं पर काम करनेवाले विद्वानों ने भी इस प्रथम प्रकाशित का उपयोग नहीं किया। शायद उन दिनों इसकी उपलब्धता सहज नहीं रही होगी। आधुनिक काल में विदेश के पुस्तकालय से डिजिटल कापी सर्वसुलभ है तो इसके प्रकाशन की ओर महावीर मन्दिर, पटना का ध्यान गया है।

पं. सदल मिश्र द्वारा संपादित प्रति के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि अनेक स्थलों पर वर्तमान उपलब्ध पाठ से अंतर है और यह अंतर तुलसीदास के सामाजिक सरोकार तथा काव्यात्मक पक्ष को ऊँचाई देता है। महावीर मन्दिर ने तत्काल रामचरितमानस के सबसे प्रचलित अंश सुन्दरकाण्ड का प्रकाशन अलग से किया है। धी-धीरे समग्र मान से प्रकाशन के लिए कार्य हो रहे हैं।

इस सुन्दरकाण्ड में पाठ की दृष्टि से हनुमान चालीसा, संकटमोचनाष्टक तथा बजरंगबाण भी संकलित किये गये हैं। साथ ही, अन्त में रामानन्दाचार्य के द्वारा रचित हनुमानजी की आरती का भी प्रामाणिक पाठ दिया गया है। यह पाठ डा. पीताम्बर दत्त बडथ्वाल ने प्राचीन पाण्डुलिपियों के आधार पर तैयार किया था।

महावीर मन्दिर, पटना का यह नया प्रकाशन भक्तों तथा साधकों के पाठ के लिए अति उपयोगी है।

महावीर मन्दिर समाचार

# मन्दिर समाचार

## (जनवरी, 2023ई.)

## रामचरितमानस और गोस्वामी तुलसीदास पर महावीर मन्दिर की विद्वद् गोष्ठी में दूर हुईं भ्रान्तियाँ

गोस्वामी तुलसीदास और रामचरितमानस पर महावीर मन्दिर की ओर से राष्ट्रीय सेमिनार का आयोजन होगा। इसकी तारीख और कार्यक्रम के रूपरेखा की घोषणा निकट भविष्य में की जाएगी। रविवार को विद्यापति भवन में महावीर मन्दिर की ओर से आयोजित विद्वद् गोष्ठी में आचार्य किशोर कुणाल ने यह घोषणा की। 'सामाजिक सद्भाव के प्रवर्तक गोस्वामी तुलसीदास' विषयक गोष्ठी में पक्ष-विपक्ष दोनों तरह के वक्ताओं को तथ्यपरक तर्क रखने के लिए आमंत्रित किया गया था। किन्तु इस विषय पर विपक्ष में बोलने को कोई सामने नहीं आया। पक्ष स्थापन करते हुए शास्त्रज्ञ आचार्य किशोर कुणाल ने कहा कि संत शिरोमणि गोस्वामी तुलसीदास जी ने संसार को सियाराममय जाना। जड़-चेतन का भी भेद नहीं समझा। उन्होंने रामचरितमानस में निषादराज, केवट, माता शबरी आदि को जो उच्च स्थान दिया है, वह अद्वितीय है। जब भरत जी निषादराज से मिलते हैं तो उन्हें भ्राता लक्ष्मण जैसा स्नेह करते हैं। गुरु वशिष्ठ भी निषादराज से उसी भाव से मिलते हैं। शबरी के जूठे बेर श्रीराम को इतने प्रिय लगे कि नाते-रिश्तेदारी में भी वे इसका बखान किए फिरते थे। मनुष्य जाति से अलग पक्षियों में निम्न समझे जाने वाले गिद्ध जटायु का अन्तम संस्कार श्रीराम ने अपने परिजन की तरह किया। रामचरितमानस के ऐसे प्रसंग गोस्वामी तुलसीदास को समदर्शी महात्मा के रूप में प्रतिष्ठित करते हैं। आचार्य किशोर कुणाल ने कहा कि तुलसीदास एक विरक्त महात्मा थे। उनको किसी पक्ष से कोई मतलब नहीं था।

विद्वद् गोष्ठी में प्रथम वक्ता के रूप में जनवादी लेखक बाबूलाल मधुकर ने सनातन धर्मावलम्बियों को रामचरितमानस और गोस्वामी तुलसीदास जी के संबंध में किसी भी तरह की भ्रान्ति और बहकावे में नहीं आने की जोरदार अपील की। वक्ता सोनेलाल बैठा ने कहा कि रामचरितमानस में मानवता कूट-कूट कर भरी हुई है। इसको जानने-समझने के लिए अध्ययन और मनन-चिन्तन की आवश्यकता है। रिटायर्ड प्रोफेसर डाॅ कृष्ण कुमार ने कहा

कि रामचरितमानस जोड़नेवाला ग्रन्थ है। व्याकरणाचार्य डॉ. सुदर्शन श्रीनिवास शांडिल्य ने कहा कि रामचरितमानस में ढोल गंवार....चौपाई में ताड़ने का अर्थ संवारना है। पूर्व आईएएस अधिकारी राधाकिशोर झा ने कहा कि गोस्वामी तुलसीदास जी ने अपनी रचनाओं के माध्यम से सभी को भगवद् भाव से देखा है। अध्यक्षीय संबोधन में जस्टिस राजेन्द्र प्रसाद ने कहा कि रामचरितमानस में वे सारे विधि और निषेध हैं जिनसे समाज में सुधार और निखार आता है। इसके पूर्व विषय प्रवेश करते हुए महावीर मन्दिर की पत्रिका धर्मायण के संपादक पंडित भवनाथ झा ने कहा कि किसी ग्रन्थ के शब्दों का सही अर्थ जानने के लिए उस पंक्ति के पहले और बाद की पंक्तियों को पढ़ना आवश्यक है। अन्य वक्ताओं में डॉ. जगनारायण चौरसिया, विजय श्री, दयाशंकर राय और डॉ त्रिपुरारी पांडेय शामिल रहे। कुल 10 वक्ताओं ने अपना पक्ष रखे। अन्त में शंका समाधान सत्र में श्रोताओं की जिज्ञासाओं और प्रश्नों के उत्तर दिए गए। धन्यवाद ज्ञापन पूर्व विधि सचिव वासुदेव राम ने किया। जबकि मंच संचालन सहयोग प्राणशंकर मजूमदार ने किया।

## महावीर मन्दिर में माता सरस्वती की पूजा- दि. 26 जनवरी, 2023ई.

माघ शुक्ल पंचमी यानी वसंत पंचमी के दिन महावीर मन्दिर में प्रत्येक वर्ष की भांति सरस्वती पूजा का आयोजन पूरे विधि-विधान से किया गया। गुरुवार को सुबह 9 बजे मन्दिर के दक्षिण पूर्वी भाग में स्थित सरस्वती माता की प्रतिमा के सामने पूजा शुरू हुई। महावीर मन्दिर के वयोवृद्ध पुरोहित पंडित जटेश झा के निर्देशन में धर्मायण के संपादक पंडित भवनाथ झा ने यह पूजा की। अन्त में माता सरस्वती के सहस्रनाम से आहुति दी गयी। विधिपूर्वक पूजन के बाद भक्तों के बीच प्रसाद का वितरण किया गया।

## महावीर रोटरी पाटलिपुत्र ब्लड सेंटर में सिंगल डोनर प्लेटलेट्स सुविधा सबसे कम दर पर उपलब्ध

महावीर अस्पतालों के अलावा बाहर के जरूरतमंद मरीजों को भी मिल रही सुविधा। महावीर मन्दिर न्यास द्वारा संचालित महावीर रोटरी पाटलिपुत्र ब्लड सेंटर में सबसे कम शुल्क पर सिंगल डोनर प्लेटलेट्स यानी एसडीपी की सुविधा दी जा रही है। महावीर रोटरी पाटलिपुत्र ब्लड सेंटर के प्रभारी डॉ. एस कौशलेन्द्र ने बताया कि यहाँ एसडीपी की सुविधा पटना के सरकारी और निजी सभी तरह के अस्पतालों और ब्लड बैंक से कम शुल्क पर दी जा रही है। महावीर वात्सल्य अस्पताल के चौथे तल्ले पर संचालित इस ब्लड बैंक में खून की संबंधित जांच के साथ मात्र 7500 रुपये में यह सुविधा दी जा रही है। इसमें एक ही डोनर से सीधे प्लेटलेट्स निकाला जाता है। इस प्रक्रिया में एक यूनिट प्लेटलेट्स से प्लेटलेट्स काउंट 35 हजार तक बढ़ जाता है। डॉ कौशलेन्द्र ने बताया कि अच्छी इम्युनिटी वाले व्यक्ति का इस प्रक्रिया से एक यूनिट प्लेटलेट्स चढ़ाने पर काउंट एक लाख तक बढ़ जाता है। महावीर वात्सल्य अस्पताल के अपर निदेशक और पूर्व आईएएस अधिकारी रामबहादुर यादव ने बताया कि महावीर वात्सल्य अस्पताल और अन्य महावीर अस्पतालों के अलावा कहीं से भी रेफर या किसी भी जरूरतमंद

मरीज के लिए सिंगल डोनर प्लेटलेट्स एवं ब्लड कंपोनेंट्स की अन्य सुविधाएँ यहाँ उपलब्ध है।

## दो हजार से ज्यादा मरीजों को दिए गए ब्लड कंपोनेंट

महावीर वात्सल्य अस्पताल में 2016 में स्थापित ब्लड बैंक में विगत 6 माह में लगभग 2258 मरीजों को ब्लड कंपोनेंट दिए जा चुके हैं। पिछले साल रोटरी पाटलिपुत्र के सहयोग से सेपरेटर मशीन लगने के बाद महावीर वात्सल्य अस्पताल के ब्लड बैंक में ब्लड कंपोनेंट दिए जा रहे हैं। पिछले 6 महीनों में मरीजों को 795 पीआरबीसी, 427 प्लेटलेट्स और 1036 प्लाज्मा दिए जा चुके हैं। डाॅ कौशलेन्द्र ने बताया कि महावीर रोटरी पाटलिपुत्र ब्लड सेंटर द्वारा अलग-अलग जगहों पर ब्लड डोनेशन कैंप लगाकर 100 यूनिट ब्लड जमा कर मरीजों को उसके कंपोनेंट दिये गये। महावीर हार्ट हॉस्पीटल के हृदय रोग के मरीजों के साथ-साथ महावीर वात्सल्य अस्पताल के शिशु रोग विभाग, स्त्री एवं प्रसूति रोग विभाग, मेडिसिन विभाग, हड्डी रोग विभाग समेत अन्य विभागों के मरीजों के लिए ब्लड बैंक बहुत उपयोगी साबित हो रहा है।

## तुलसी साहित्य का प्रामाणिक संस्करण प्रकाशित करेगा महावीर मन्दिर का 'रामायण शोध संस्थान'

रामनवमी से दो वर्षों तक सभी उपलब्ध पांडुलिपियों का होगा गहन अध्ययन। रामचरितमानस के 450 वर्ष पूरा होने पर होंगे राष्ट्रीय-अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन॥ संवत् 1631 यानी 1574 ई. में रामनवमी के दिन भक्तशिरोमणि तुलसीदास ने अयोध्या के राममन्दिर में रामचरितमानस की रचना प्रारम्भ की थी। अगले वर्ष यानी 2024 की रामनवमी के दिन इसके 450 वर्ष पूरे होंगे। महावीर मन्दिर न्यास के सचिव आचार्य किशोर कुणाल ने बताया कि इस ऐतिहासिक अवसर पर इस वर्ष की रामनवमी से 2025 की रामनवमी यानी दो वर्षों तक 'रामायण शोध संस्थान' के तत्त्वावधान में तुलसी साहित्य से संबंधित सभी उपलब्ध पाण्डुलिपियों का गहन अध्ययन किया जाएगा। इसके लिए देशभर के विद्वानों से तुलसी साहित्य से संबंधित सभी प्रकाशित-अप्रकाशित पाण्डुलिपियों का संकलन किया जा रहा है। उन पाण्डुलिपियों के गहन अध्ययन के बाद समग्र तुलसी साहित्य का प्रामाणिक संस्करण प्रकाशित किया जायेगा। इसके साथ ही इन दो वर्षों में रामचरितमानस एवं तुलसी साहित्य पर राष्ट्रीय-अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन आयोजित किए जाएंगे।

आचार्य किशोर कुणाल ने बताया कि प्रामाणिक संस्करण नहीं होने से ढोल गंवार क्षुद्र पशु नारी ...चौपाई में एक अक्षर बदल गया। हाल में, रामचरितमानस की कुछ पंक्तियों पर मानस का मर्म नहीं समझने वाले अल्पज्ञों द्वारा आक्षेप किये जा रहे हैं। 'ढोल गँवार सूद्र पसु नारी' ऐसी ही एक पंक्ति है जिसपर विवाद होता रहा है। किन्तु सन् 1810 ई. में कोलकता के विलियम फोर्ट काॅलेज से प्रकाशित पं. सदल मिश्र द्वारा सम्पादित 'रामचरितमानस' में यह पाठ 'ढोल गँवार क्षुद्र पशु नारी' के रूप में छपा था। यहाँ सूद्र शब्द के बदले क्षुद्र शब्द है। पं. सदल मिश्र बिहार के उद्भट विद्वान् और मानस के मान्य प्रवचनकर्ता थे। यह मानस की सबसे पुरानी प्रकाशित पुस्तक है।

1810 ई. के बाद 1830 ई. में कोलकता के एसिएटिक लिथो कम्पनी से 'हिन्दी एन्ड हिन्दुस्तानी सेलेक्सन्स' नाम से एक पुस्तक छपी थी जिसमें रामचरितमानस का पूरा सुन्दरकाण्ड छपा है। इसमें भी पाठ 'ढोल गंवार क्षुद्र नारी' ही है। इस 494 पृष्ठ वाली पुस्तक के सम्पादक विलियम प्राइस, तारिणीचरण मिश्र, चतुर्भुज प्रेमसागर मिश्र थे।

दि. 4 मई, 1874 को बंबई (मुंबई) के सखाराम भिकसेट खातू के छापेखाने से अयोध्या के पास स्थित नगवा

गाँव के विद्वान् देस सिंह द्वारा सम्पादित 'तुलसीकृत रामायण' का प्रकाशन हुआ था। इसमें भी पाठ 'ढोल गँवार क्षुद्र पशु नारी' ही है। इसका फिर से मुद्रण 1877 ई. में हुआ था जिसकी प्रति प्राप्त हुई है और इसमें भी पाठ क्षुद्र ही है; शूद्र नहीं। इस पुस्तक की एक और विशेषता है इसमें रामायण की घटनाओं को दिखाते हुए बहुत सारे चित्र भी प्रस्तुत किये हैं। इस पुस्तक में इस प्रसंग के चित्र के अवलोकन से यह ज्ञात होता है कि भगवान् राम धनुष चढ़ाये हुए हैं और समुद्र करबद्ध मुद्रा में विनय कर रहा है। 'ढोल गँवार---' वाली उक्ति भयभीत समुद्र की है, जो राम को राह नहीं दे रहा था और उसे सोख जाने की घोषणा भगवान् ने की थी। अतः यहाँ नारी शब्द का अर्थ समुद्र ही संगत बैठता है। संस्कृत में नार का अर्थ जल होता है और गुण से गुणी की तरह नार (जल) से नारी (समुद्र) बनता है। नागरी प्रचारिणी सभा, काशी से प्रकाशित तथा रामचन्द्र शुक्ल द्वारा सम्पादित तुलसी ग्रन्थावली के तृतीय खण्ड 'मूल्यांकन' में शम्भु नारायण चौबे का लेख 'रामचरितमानस' प्रकाशित है। इसमें विद्वान् लेखक ने लिखा है कि 1874 में जो मुंबई से प्रकाशित उक्त पाठ है, वैसा पाठ दो और प्रकाशित पुस्तकों में है। उनमें से पहली पुस्तक 28 अप्रैल, 1866 को और दूसरी पुस्तक 1873 में फतेहगढ़ से छपी हुई थी। ये दोनों पुस्तकें अभी देखने को नहीं मिली हैं। किन्तु विद्वान् लेखक ने आज से जब 55 साल पहले जब इन पुस्तकों को देखकर लिखा कि तीनों पुस्तकों का पाठ एक-जैसा है और सभी सचित्र हैं, तो यह सहज अनुमान किया जाना चाहिए कि उन दोनों प्रकाशित पुस्तकों में भी 'क्षुद्र' पाठ ही रहा होगा।

इसी प्रकार 1883 ई में बाबू रामदीन सिंह द्वारा लिखित पुस्तक 'बिहार-दर्पण' छपी जिसपर भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की सम्मति भी है। इसमें बिहार की 24 विभूतियों की जीवनी है। पहली जीवनी प्रथम स्वतन्त्रता संग्राम के अमर योद्धा वीर कुँअर सिंह के पूर्वज नारायण मल्ल की है। उन्हें मुगल सम्राट् शाहजहाँ ने बिहार के भोजपुर रियासत की जमींदारी दी थी। उनकी मृत्यु सन् 1629 ई में हुई थी। नारायण मल्ल ने तुलसी-साहित्य से सूक्तियों का संकलन किया था। उसे अविकल रूप से बिहार-दर्पण में नारायण मल्ल की जीवनी के साथ छापा गया है। इसके पृ. 64 पर **'ढोल गंवार क्षुद्र पशु नारी'** पाठ ही मिलता है। नारायण मल्ल की लिखी हुई मूल सूक्ति अभी नहीं मिली है; किन्तु बाबू रामदीन सिंह ने जब 1881-83 में छापा था, तब उनके पास यह संकलन था। यदि यह पुस्तक मिल जाती है, तब इसका रचनाकाल तुलसी के समय का ही माना जायेगा, क्योंकि तुलसी का निधन 1623 ई. में हुआ था। नहीं मिलने पर भी इतना निर्निवाद है कि 1883 ई. के पाठ में भी 'क्षुद्र' पाठ है, सूद्र नहीं।

इस प्रकार, 1810, 1866, 1873, 1874, 1877, 1883 में प्रकाशित पुस्तकों में पाठ 'ढोल गँवार क्षुद्र पशु नारी' था और लगता है कि 1880 या 1890 के दशक के बाद भूल से या जानबूझकर क्षुद्र को सूद्र बनाया गया और गीता प्रेस द्वारा 1930 के दशक में प्रकाशित पुस्तक घर-घर पहुँच जाने के बाद यही पाठ प्रचलित हो गया। किन्तु 1877 ई-तक 'ढोल गँवार क्षुद्र पशु नारी' पाठ ही प्रामाणिक था।

अतः तुलसीदास पर किसी प्रकार का आरोप लगाना बेबुनियाद है।

***

## पाठकीय प्रतिक्रिया का शेषांश—- पृ. सं. 2 से जारी

तरह ही भगवान वायु भी प्राणी मात्र के लिए पूज्य हैं।

वायु-तत्त्व -विशेषांक के इस अंक में 'धर्मायण' पत्रिका के विद्वान् सम्पादक पंडित भवनाथ झा जी ने अपने सम्पादकीय में नवोपलब्ध वायुवाद का परिचय नामक शीर्षक का आरम्भ करते हुए न्याय वैशेषिक आदि दार्शनिक तथ्यों के आधार पर लिखा है कि वायु रूपरहित होने के कारण प्रत्यक्ष नहीं है। केवल स्पर्शवान् होने से वायु का प्रत्यक्ष होना कैसे सम्भव है? पंडित भवनाथ झा जी के सम्पादकीय आलेख को पढ़ने से इनके वैदुष्य का दार्शनिक पक्ष के दर्शन का अनुभव होता है।

इस अंक केआयुर्वेद विज्ञान के वैज्ञानिक लेखक डा बिनोद कुमार जोशी ने चरक एवं सुश्रुत संहिता के "वायुरेव भगवानिति" महावाक्य से प्रमाणित किया है कि वायु ही प्रत्यक्ष भगवान् हैं। इस आलेख में डॉ. जोशी जी के वैदुष्य का अद्भुत परिचय मिलता है।

डा सुदर्शन श्रीनिवास शाण्डिल्यजी का वायु-तत्त्व पर दार्शनिक आलेख इनके दार्शनिक जीवन को रेखांकित करता है। इन्होंने वैशेषिक दर्शन के मूल सिद्धांत को उद्घाटित करते हुए वायु को प्राण रूप में उपस्थापित किया है।वैशेषिक दर्शन के 24 गुणों के वर्णन क्रम में अन्नंभट्ट प्रणीत तर्कसंग्रह के रूपरहितस्पर्शवान्वायु: वाक्य को उद्धृत कर संकेत दिया है कि यद्यपि वायु में रूप का अभाव है, किन्तु वह स्पर्वान् होने से प्राणी जगत् को शीत- उष्ण का अनुभव कराते हुए उसे प्राणवान बनाये रखता है। इस अंक के सभी विद्वानों के आलेख अति सुन्दर एवं स्तुत्य हैं।

धर्मायण पत्रिका के प्रधान सम्पादक एवं पूर्व कुलपति सह प्रशासक आचार्य किशोर कुणाल जी को कोटि - कोटि प्रणाम निवेदित करता हूँ, जिनके सौजन्य से 'धर्मायण' पत्रिका का अवाध गति से विगत50 वर्षों से अद्यावधि पर्यन्त प्रकाशन संचरित है।

*-शत्रुघ्नश्रीनिवासाचार्य पंडित शम्भुनाथ शास्त्री वेदान्ती*
*भागलपुर।*
*दूरभाष संख्या 9939259573*

प्रोफेसर अंजनी आनन्द, सलेमपुर, सूर्यगढा, लखीसराय से लिखते हैं- "'सामाजिक सद्भाव के प्रवर्तक गोस्वामी तुलसीदास' विषय पर आयोजित विद्वद् गोष्ठी से जनहित में नयी उद्भावना अपेक्षित है। वैसे,महाप्राण'निराला'की लंबी कविता 'तुलसीदास' बहुत कुछ साफ करने में पूर्ण समर्थ है। सर, मुझे बेहद खुशी है कि अपने बिहार से प्रकाशित होने वाली 'धर्मायण' पत्रिका इस उथले राजनीतिक झंझावातों के दौर में जीवन दर्शन के तत्वों को परोसकर लगातार चेतना को ऊर्ध्वगामी करने के लिए संकल्पित है। साथ साथ मुझे गर्व का अनुभव हो रहा है कि हमारे सूर्यगढ़ा के दो विद्वानों को धर्मायण ने इस धर्मयुद्ध में योद्धा के रूप में स्थान दिया। 'जुही की कली'पर आप का विशद् विवेचन काफी आह्लादक है। दैहिक श्रृंगार, प्राकृतिक सुषमा, मानसिक तरंगों, सनातन मानवीय जिजीविषा और दैवीय आख्यानों, मिथकीय उद्भावनाओं को शब्द देकर शायद आप ने वेदान्त दर्शन के प्रकांड पंडित, तत्वदर्शी कवि की गहरी पहुँच को रेखांकित करने में पूर्ण सफलता पायी है।एक एक संदर्भ और प्रसंगों पर अनेक कवियों की उक्तियों के माध्यम से उच्च अर्थवत्ता का बोध कराया है।विरहातुर और संयोगातुर नायक नायिका के कामकेलि को मुक्तछंद में जिस निपुणता और साहस के साथ निराला जी ने चित्रित किया, वह शायद

हिन्दी काव्य में दुर्लभ है। मुझे लगता है कि आप का यह आलेख 'जुही की कली', महाप्राण निराला की कलादृष्टि और तत्वज्ञान को समझने में सहायक सिद्ध होगा। बहुत बहुत बधाई। धन्यवाद।"

मान्यवर,'धर्मायण' के 'वायु-तत्त्व विशेषांक' का अवलोकन किया। विद्वान लेखकों और आपको इस उत्कृष्ट अंक के लिए साधुवाद। डॉक्टर विजय विनीत का आलेख 'कवियों की दृष्टि में वायु: सन्दर्भ जुही की कली' मर्म स्पर्श कर गया। अभिनव व्याख्या है। बार-बार पढ़ा। सचमुच 'जुही की कली' सुषुप्ति से लेकर जागरण तक की एक प्रिया की अति सुन्दर यात्रा-कथा है। यह कविता पांच बन्दों में वर्णित है। पहले बन्द में जुही की कली पत्तों की गोद में सोई है। दूसरे बन्द में उसके विरह-विदग्ध स्थिति के संकेत के साथ उसके परदेशी प्रिय पवन का चित्रण है।तीसरे बन्द में दूर देश में पवन को अपनी प्रिया की याद आती है, जिससे वह सभी विघ्न-बाधाओ को पार करता हुआ उसके(अपनी प्रिया) के पास पहुँच जाता है। चौथे बन्द में सोयी हुई जुही की कली कोपवन जगाने का प्रयास करता है, लेकिन वह जाग नहीं पाती। पाँचवें बन्द में प्रेमी पवन के जोरों झकझोरने पर वह जाग पाती है,फिर अपने प्रिय से रति-क्रिया कर खिल उठती है। निराला ने अपेक्षित गहराई के साथ सौंदर्यपूर्ण ढंग से सोने से जागने तक के प्रसंग को चित्रित किया है। विद्वान अध्येता डॉ. विजय विनीत का विश्लेषण काफी रोचक और ज्ञानवर्धक है।उन्होंने कविता के मर्म को उद्घाटित किया है।

यह जानकर सुखद आश्चर्य हुआ कि 'वायुवाद' ग्रन्थ के प्रणेता रामभद्र ने आत्मा और वायु दोनों द्रव्यों को प्रत्यक्ष माना है। 'परमात्मा की प्राणशक्ति को प्रणाम 'आलेख तथ्यों से परिपूर्ण एक श्रेष्ठ आलेख है। 'वायु-तत्त्व और हमारा असंतुलित हो रहा पर्यावरण 'आलेख में विद्वान लेखक द्वारा निर्देशित वायु संगठन हम पाठकों को खटकने वाला है। मेरी जानकारी में वायुमंडल में गैसों की मात्रा कुछ इस प्रकार है-

नाइट्रोजन 78.09%, आक्सीजन 20.95%,आर्गन 0.93%, कार्बनडाइआक्साइड0.03%, निआन 0.0018%, हाइड्रोजन 0.001%, हीलियम 0.000524%, क्रिप्टन 0.0001%,जेनान 0.000008%, ओजोन 0.000001%, मीथेन, क्लोरीन आदि अल्पसंख्यक मात्रा में है। लगभग 99% वायु रंगहीन है,जबकि निम्न,हीलियम, क्रिप्टन, जेनान, आर्गन और क्लोरीन वायु हल्के पीले रंग की होती है। कुल मिलाकर यह अंक एक पत्रिका नहीं, बल्कि एक उच्च कोटि का ग्रन्थ है। सम्पादक महोदय इसे प्रकाशित कर हम पाठकों को उपकृत करें।

-सानिया कुमारी, प्लस टू हाईस्कूल, अमरपुर (लखीसराय)

## काले वर्षति शक्रश्च दहत्यग्निश्च कालतः॥

**भारतीय मान्यता है कि इस संसार में सबकुछ समय से ही होता है। इन्द्र समय से ही वर्षा करते हैं और अग्नि भी समय पर ही सबकुछ जला देती है। यह काल की नियति है। न तो काल से पहले कुछ भी होता है न काल के बीच जाने पर कुछ होता है। अतः भारतीय परम्परा में यमराज को भी काल कहा गया है। अग्नियों में कालाग्नि वह है जो सृष्टि को भस्म कर देती है। (ब्रह्मवैवर्तपुराणम्, प्रकृतिखण्डः, अध्यायः ५३, श्लोक 32.)**

# व्रत-पर्व

**फाल्गुन, 2079 वि. सं. (6 फरवरी से 7 मार्च, 2023ई. )**

**पं. मुक्ति कुमार झा**
ज्यौतिष परामर्शदाता, महावीर ज्योतिष मण्डप, महावीर मन्दिर, पटना

1. फाल्गुन कृष्ण प्रतिपदा सोमवार- **वागमती स्नान महापुण्यप्रद,** दि. 06.02.2023।
2. फाल्गुन कृष्ण चतुर्थी गुरुवार- **श्रीभालचन्द्र चतुर्थी-** दि. 09.02.2023।
3. फाल्गुन कृष्ण सप्तमी रविवार, **मासादि, माघ-स्नान समाप्ति, प्रयाग कल्पवास की समाप्ति**, दि. 12.02.2023।
4. फाल्गुन कृष्ण अष्टमी सोमवार, **कुम्भ में रवि संक्रान्ति** पुण्यकाल- दिन 01 बजे के बाद, दि. 13.02.2023।
5. फाल्गुन कृष्ण एकादशी गुरुवार, **विजया एकादशी व्रत** (सबके लिए) दि. 16.02.2023।
6. फाल्गुन कृष्ण द्वादशी शुक्रवार**, गाय के दही से एकादशी व्रत का पारण,** दि. 17.02.2023।
7. फाल्गुन कृष्ण त्रयादशी शनिवार, **प्रदोष त्रयोदशी व्रत और प्रदोष चतुर्दशी व्रत, महाशिवरात्रि व्रत-** दि. 18.02.2023।
8. फाल्गुन कृष्ण चतुर्दशी, रविवार, **शिवदर्शन,** दि. 19.02.2023।
9. फाल्गुन कृष्ण अमावस्या सोमवार, **फाल्गुनी अमावस्या स्नानदानादि, सोमवती अमावस्या,** दि. 20.02.2023।
10. फाल्गुन शुक्ल प्रतिपदा मंगलवार, **कल्याणेश्वर-जनकपुर परिक्रमा आरम्भ,** दि. 21.02.2023।
11. फाल्गुन शुक्ल तृतीया उपरि चौठ गुरुवार, **श्रीवैनायकी चतुर्थी व्रत,** दि. 23.02.2023।
12. फाल्गुन शुक्ल एकादशी शुक्रवार, **आमलकी एकादशी व्रत (सबके लिए)** , दि. 03.03.2023।
13. फाल्गुन शुक्ल द्वादशी शनिवार, **गाय के दूध से एकादशी व्रतं का पारण, श्रीगोविन्द द्वादशी, श्रीजगन्नाथ-दर्शन, प्रदोष त्रयोदशी व्रत,** दि. 04.03.2023।
14. फाल्गुन शुक्ल त्रयोदशी उपरि चतुदर्शी रविवार, **प्रदोष चतुदर्शी व्रत,** दि. 05.03.2023।
15. फाल्गुन शुक्ल चतुदर्शी उपरि पूर्णिमा सोमवार, **पूर्णिमा व्रत,** दि. 06.03.2023।
16. फाल्गुन शुक्ल पूर्णिमा मंगलवार, फाल्गुनी स्नानदानादि पूर्णिमा, **कुलदेवता सिन्दूरार्पन (पातरिदान), होलिकादाह (प्रदोष 07.24 या.), चैतन्य महाप्रभु जयन्ती, जनकपुर परिक्रमा समाप्ति,** दि. 07.03.2023।

***

## रामावत संगत से जुड़ें

1) रामानन्दाचार्यजी द्वारा स्थापित सम्प्रदाय का नाम रामावत सम्प्रदाय था। रामानन्द-सम्प्रदाय में साधु और गृहस्थ दोनों होते हैं। किन्तु यह रामावत संगत गृहस्थों के लिए है। रामानन्दाचार्यजी का उद्घोष वाक्य– 'जात-पाँत पूछ नहीं कोय। हरि को भजै सो हरि को होय' इसका मूल सिद्धान्त है।

2) इस रामावत संगत में यद्यपि सभी प्रमुख देवताओं की पूजा होगी, किन्तु ध्येय देव के रूप में सीताजी, रामजी एवं हनुमानजी होंगे। हनुमानजी को रुद्रावतार मानने के कारण शिव, पार्वती और गणेश की भी पूजा श्रद्धापूर्वक की जायेगी। राम विष्णु भगवान् के अवतार हैं, अतः विष्णु भगवान् और उनके सभी अवतारों के प्रति अतिशय श्रद्धाभाव रखते हुए उनकी भी पूजा होगी। श्रीराम सूर्यवंशी हैं, अतः सूर्य की भी पूजा पूरी श्रद्धा के साथ होगी।

3) इस रामावत-संगत में वेद, उपनिषद् से लेकर भागवत एवं अन्य पुराणों का नियमित अनुशीलन होगा, किन्तु गेय ग्रन्थ के रूप में रामायण (वाल्मीकि, अध्यात्म एवं रामचरितमानस) एवं गीता को सर्वोपरि स्थान मिलेगा। 'जय सियाराम जय हनुमान, संकटमोचन कृपानिधान' प्रमुख गेय पद होगा।

4) इस संगत के सदस्यों के लिए मांसाहार, मद्यपान, परस्त्री-गमन एवं परद्रव्य-हरण का निषेध रहेगा। रामावत संगत का हर सदस्य परोपकार को प्रवृत्त होगा एवं परपीड़न से बचेगा। हर दिन कम-से-कम एक नेक कार्य करने का प्रयास हर सदस्य करेगा।

5) भगवान् को तुलसी या वैजयन्ती की माला बहुत प्रिय है अतः भक्तों को इसे धारण करना चाहिए। विकल्प में रुद्राक्ष की माला का भी धारण किया जा सकता है। ऊर्ध्वपुण्ड्र या ललाट पर सिन्दूरी लाल टीका (गोलाकार में) करना चाहिए। पूर्व से धारित तिलक, माला आदि पूर्ववत् रहेंगे। स्त्रियाँ मंगलसूत्र-जैसे मांगलिक हार पहनेंगी, किन्तु स्त्री या पुरुष अनावश्यक आडम्बर या धन का प्रदर्शन नहीं करेंगे।

6) स्त्री या पुरुष एक दूसरे से मिलते समय राम-राम, जय सियाराम, जय सीताराम, हरि -जैसे शब्दों से सम्बोधन करेंगे और हाथ मिलाने की जगह करबद्ध रूप से प्रणाम करेंगें।।

7) रामावत संगत में मन्त्र-दीक्षा की अनूठी परम्परा होगी। जिस भक्त को जिस देवता के मन्त्र से दीक्षित होना है, उस देवता के कुछ मन्त्र लिखकर पात्र में रखे जायेंगे। आरती के पूर्व गीता के निम्नलिखित श्लोक द्वारा भक्त का संकल्प कराने के बाद उस पात्र को हनुमानजीके गर्भगृह में रखा जायेगा।

**कार्पण्यदोषोपहतस्वभावः पृच्छामि त्वां धर्मसम्मूढचेताः।**
**यच्छ्रेयः स्यान्निश्चितं ब्रूहि तन्मे शिष्यस्तेऽहं शाधि मां त्वां प्रपन्नम्।। (गीता, 2.7)**

8) आरती के बाद उस भक्त से मन्त्र लिखे पुर्जा में से कोई एक पुर्जा निकालने को कहा जायेगा। भक्त जो पुर्जा निकालेगा, वही उस भक्त का जाप्य-मन्त्र होगा। मन्दिर के पण्डित उस मन्त्र का अर्थ और प्रसंग बतला देंगे, बाद में उसके जप की विधि भी। वही उसकी मन्त्र-दीक्षा होगी। इस विधि में हनुमानजी परम-गुरु होंगे और वह मन्त्र उन्हीं के द्वारा प्रदत्त माना जायेगा। भक्त और भगवान् के बीच कोई अन्य नहीं होगा।

9) रामावत संगत से जुड़ने के लिए कोई शुल्क नहीं है। भक्ति के पथ पर चलते हुए सात्त्विक जीवन-यापन, समदृष्टि और परोपकार करते रहने का संकल्प-पत्र भरना ही दीक्षा-शुल्क है। आपको सिर्फ https://mahavirmandirpatna.org/Ramavat-sangat.html पर जाकर एक फार्म भरना होगा। मन्दिर से सम्पुष्टि मिलते ही आप इसके सदस्य बन जायेंगे।

***

जनवरी, 2023 ई. समय : 1:00 बजे दिन से, स्थान : विद्यापति-भवन (पटना संग्रहालय के पीछे वाले मार्ग पर), विद्यापति मार्ग, पटना
श्रीरामचरितमानस

पत्रिका-पंजीयन सं. 52257/90

# विक्रम संवत् 2079 में प्रकाशित 'धर्मायण' के विशेषांक

## सभी अंक *online* उपलब्ध हैं-

***https://mahavirmandirpatna.org/dharmayan/***

श्री महावीर स्थान न्यास समिति के लिए वीर बहादुर सिंह, महावीर मन्दिर, पटना- 800001 से ई-पत्रिका के रूप में https://mahavirmandirpatna.org/dharmayan/ पर निःशुल्क वितरित। सम्पादक : भवनाथ झा।